पिकासो
एक जीवनी

पिकासो
एक जीवनी

शशिधर खान

ज्ञान गंगा, दिल्ली

प्रकाशक : ज्ञान गंगा, 2/42, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002
सर्वाधिकार : सुरक्षित / संस्करण : 2022 / मूल्य : तीन सौ पचास रुपए
मुद्रक : आर–टेक ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली ISBN 978-93-87968-80-6

PICASSO : EK JEEVANI *by* Shri Shashidhar Khan ₹ 350.00
Published by **GYAN GANGA**
2/42, Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-110002

कृतिकथ्य

दुनिया के सबसे मशहूर चित्रकार पाब्लो पिकासो इस सदी के सर्वाधिक प्रभावशाली और महानतम कलाकार माने जाते हैं। वे सिर्फ चित्रकार ही नहीं, अपने समय के सफलतम रंगकर्मी, शिल्पी, रचनाकार और रंगमंच डिजाइनर भी थे। कला का कोई क्षेत्र पिकासो से अछूता नहीं बचा। जिस विधा को छुआ, उसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चित बना दिया।

पाब्लो पिकासो के व्यक्तित्व और कृतित्व में इतनी विविधताएँ हैं कि अभी तक उनकी देन का सही आकलन नहीं हो सका है। उनका व्यक्तित्व और पारिवारिक से लेकर कलाकार के रूप में जिया गया जीवन भी इतना वैविध्यपूर्ण तथा विशिष्टताओं से भरा है कि जितनी बार चर्चा की जाए, एक नई बात सामने आती है। यही खासियत पिकासो को अतिविशिष्ट कलाकारों की सूची में ऊपर ला देती है।

चित्रकारी और शिल्पकला के क्षेत्र में पिकासो विश्व के एकमात्र अमिट हस्ताक्षर हैं। विश्व की सर्वश्रेष्ठ कलाओं का इतिहास पिकासो से ही शुरू होता है और पिकासो पर ही समाप्त हो जाता है। 20वीं सदी में तो पिकासो का एकच्छत्र राज रहा ही, आगे आनेवाली शताब्दियों में भी आधुनिक कला पर कोई भी चर्चा पिकासो के बगैर हो ही नहीं सकती। खासकर मिट्टी के बरतन की कला को शिल्प का रूप देना तो पिकासो की चमत्कारिक देन है। मिट्टी के लोंदे को जो आकार कुम्हार चाक पर घुमाकर देता है, वह बरतन के सिवाय कुछ नहीं होता, लेकिन उसी मिट्टी को जब पिकासो जैसे संवेदनशील शिल्पी के हाथ का स्पर्श हुआ, तो वह मिट्टी कलाकृति बन गई।

सशक्त कथा-साहित्य लिखनेवालों को 'कथा शिल्पी' कहा जाता है। उसमें पात्रों के जरिए भाषा से कहानी या कोई रचना पाठकों पर प्रभाव डालती है, लेकिन पिकासो के चित्र, मूर्तियाँ, नाटक और थिएटरों में मंच संचालन से लेकर

कलाकारों के संवाद संयोजन तक में पिकासो की प्रतिभा झलकती है। पिकासो को उनके चित्रों की रेखाएँ ही दर्शकों से संवाद स्थापित करती हैं, इसलिए उन्हें प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा तो वास्तव में चित्रकार के रूप में मिली; क्योंकि उनकी पेंटिंग का हर कोना अपनी कहानी खुद कहता है। पिकासो के सबसे प्रामाणिक जीवनीकार माने जानेवाले जॉन रिचर्डसन ने कहा है कि पिकासो पर आँख टिकती है तो बस टिकी ही रह जाती है।

पेंटिंग और मूर्तियों की कोई भाषा नहीं होती, लेकिन ये मूक कृतियाँ बोलती हैं। इनका दर्शकों से संवाद स्थापित होता है। चित्रकार अपनी तूलिका से ही ऐसे बिंब और रूपक डालता है, जो दर्शकों का पेंटिंग के साथ-साथ पेंटर से भी परिचय करा देता है। अगर पेंटर वहाँ मौजूद न हो, तो भी उसकी सोच, मानसिकता, स्वभाव और भावना अवलोकन करनेवाले जान जाते हैं।

इस मायने में पिकासो का जवाब नहीं। उनकी वैसे तो लगभग हर पेंटिंग का नाम और समय अंकित है, मगर जिस चित्र का समय और शीर्षक उपलब्ध नहीं है, उसका भी विषय अथवा काल का अंदाजा लग जाता है; क्योंकि पिकासो की दुनिया बंद कमरे में बैठकर सिर्फ कूची और रंगों में सिमटी हुई नहीं थी। शराब पीने और वेश्यालयों का चक्कर लगाने के समय भी पिकासो अपने आसपास के अलावा देश-विदेश की हर घटना के प्रति सचेत रहते थे। उन्होंने हमेशा अपनी कला का देश और समाज से सरोकार बनाए रखा।

अपने देश स्पेन में सही पहचान नहीं मिलने के कारण पिकासो ने पेरिस को घर बना लिया। थोड़े दिनों में ही वे पूरी दुनिया के हो गए। इंग्लैंड, सोवियत रूस, अमेरिका, जहाँ कहीं भी रहे, बिल्कुल छा गए। दूसरे विश्वयुद्ध के समय फ्रांस पर जर्मनी के हमले से पिकासो विचलित हो गए। स्पेन में गृहयुद्ध छिड़ने (1936) और महाशक्तियों द्वारा उसे जीर्ण-शीर्ण बनाने से वे कलप उठे। 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ने के बाद पिकासो ने स्वयं को इस तरह अलग-थलग महसूस किया कि कई वर्षों तक वे मानसिक रूप से सामान्य नहीं हो पाए।

वह समय पिकासो की ऊँचाइयों का स्वर्णिम काल माना जाता है। पिकासो की पेंटिंग का इतना जबरदस्त प्रभाव था कि उनकी प्रसिद्धि का हर साल एक युग के नाम से जाना जाता है। 1901 से 1904 तक की उनकी चर्चा 'ब्लू पीरियड' (नील काल) और उसके बाद का समय 'रोज पीरियड' (गुलाब काल) के नाम से मशहूर है। इस दौरान की पेंटिंग में एक ही साथ भूख, मृत्यु, युद्ध की त्रासदी है और प्रेम, घृणा, सेक्स तथा सामाजिक विसंगतियाँ भी हैं।

पिकासो ने प्रेम या नफरत, जो भी किया, मीडिया ने उसे पराकाष्ठा तक

पहुँचा दिया। तब भी पिकासो ने अपनी सनक छोड़ी नहीं—न टूटे, न कमजोर पड़े और मन-मस्तिष्क के सारे झंझावातों को व्यक्त कर दिया। अपनी पेंटिंग में ही खुली किताब की तरह सारे खट्टे-मीठे सोच सार्वजनिक कर दिए—एक ईमानदार कलाकार की तरह कोई दुराव-छिपाव नहीं रखा।

अपने समय के प्रसिद्ध रचनाकारों से पिकासो का संपर्क रहा। उनमें नोबेल पुरस्कार विजेता उपन्यासकार अर्नेस्ट हेमिंग्वे का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हेंमिंग्वे ने भी चार शादियाँ कीं और पिकासो ने भी। दोनों अपने समय की जानी-मानी हस्तियों में गिने जाते हैं, लेकिन फर्क यह था कि हेंमिंग्वे की चाहत सिर्फ हवस तक सीमित थी, लेकिन पिकासो के लिए उनकी सारी प्रेमिकाएँ कैनवास की तरह थीं। हेंमिंग्वे का पूरा जीवन लेखन से ज्यादा शारीरिक और मानसिक कुंठाओं से जूझते हुए गुजरा। उससे नहीं उबर पाने की हालत में हेंमिंग्वे को आत्महत्या करनी पड़ी।

ठीक उसके विपरीत पिकासो को जिस किसी भावना, घटना और झंझावात ने झकझोरा, उसे उन्होंने बाहर निकालकर तराश दिया। फिर नई स्फूर्ति, ताजगी, उत्साह और खुले दिमाग से अगली पेंटिंग में जुट गए। असामान्य और मानवता के साथ खिलवाड़ की घटना से पिकासो इतना द्रवित हो जाते थे कि उसे अपनी कूची में उकेरे जाने तक घर से बाहर नहीं निकलते थे।

उनका सबसे मशहूर तैलचित्र है, 1937 में तैयार 'गुएर्निका'। इसमें पिकासो की अपनी मातृभूमि स्पेन के गृहयुद्ध के समय जर्मन बमबारी के बाद की त्रासदी दरशाई गई है। पिकासो को सबसे ज्यादा लोकप्रियता 1907 की पेंटिंग से मिली। यह पेंटिंग 'लिस डीमोइसेल्लेस डी एविग्नोन' के नाम से पूरी दुनिया में आश्यर्जनक रूप से चर्चित और प्रसिद्ध हुई। पेरिस के अखबार 'वीकली आर्ट रिव्यू' ने यूरोप के सभी प्रमुख अखबारों में कला समीक्षकों के हवाले से छापा कि अगर सिर्फ यही एक पेंटिंग बनाकर पिकासो रह जाते, तो भी विश्व स्तर के चित्रकार के रूप में स्थापित रहते।

पिकासो हमेशा नए आयाम, नई चीज और परंपरागत घिसे-पिटे रास्तों पर घिसटते हुए जिंदगी खींचने के बजाय नई परंपरा की नींव डालने की धुन में लगे रहते थे। उनकी सोच ही इतनी क्रांतिकारी थी कि चित्र, ड्राइंग या मूर्ति प्रिंट के सार्वजनिक प्रदर्शनी में पहुँचते ही हलचल मच जाती थी; क्योंकि दर्शक जो कुछ उसके पहले देखे रहते थे, उसे छोड़कर नए सिरे से सोचने को विवश हो जाते थे। उसमें करुणा, विषाद, मस्ती, आनंद, मानवीय पीड़ा, दु:ख-सुख, आक्रोश, मृत्यु समेत मानव मन के अंदर परिस्थितिवश उठनेवाली सारी भावनाएँ व्यक्त होती थीं।

पिकासो ने कला को परियों और सम्राटों की छवि उतारनेवाले प्राचीन कलाकारों की दुनिया से निकालकर अपने आसपास, समाज तथा इनसान की रोजमर्रा की जिदंगी में दफन इनसानियत से नाता जोड़ा।

पिकासो की सुपरहिट तैल कैनवास पेंटिंग 'लिस डीमोइसेल्लेस डी एविग्नोन' के बहुचर्चित होने का यही असली कारण है। इसमें पुरातन परंपराओं के खिलाफ खुला विद्रोह दिखाया गया है। इसी के माध्यम से पिकासो ने ज्यामितिक रेखाओं में गुँथी वृत्त जैसी एक नई पेंटिंग स्टाइल 'क्यूबिज्म' की शुरुआत की। इसे दर्शकों ने काफी पसंद किया। पिकासो ने तैल कैनवास और प्लास्टिक कार्ड को भी नई दिशा दी और क्रांतिकारी योगदान किए। 1937 की ही उनकी एक कलाकृति 'रोती हुई औरत' भी बहुत प्रसिद्ध हुई। कहते हैं, उसे बनाते-बनाते पिकासो स्वयं रोने लगे थे। उन्होंने अपनी माँ का दु:खी जीवन देखा था। जब वे स्वयं किशोर उम्र में भी नहीं पहुँचे थे, तभी अपनी छोटी बहन की मौत देखी, प्रेमिकाओं का दर्द देखा।

पिकासो बचपन से ही अपनी माँ के पास ज्यादा रहे। 1901 में कार्डबोर्ड पर तैल से बनी उनकी पेंटिंग—'दस्ताने के साथ औरत', 'गहने के साथ औरत' के साथ ही चित्रकारी के इतिहास में उनका नाम दर्ज हो गया था। यह फिलाडेल्फिया कला संग्रहालय में रखी हुई है।

पिकासो का रिकॉर्ड है कि 15 साल की उम्र में ही उन्होंने अपना स्टूडियो बनाकर व्यावसायिक पेंटिंग शुरू कर दी थी। पिकासो के बारे में जाननेवालों का कहना है कि लगता है, वे ब्रश, रंग और तूलिका हाथ में लिये पैदा हुए थे! पिकासो की माँ को भी वैसा ही लगता था। वैसे माँ पिकासो की कविताएँ ज्यादा पसंद करती थीं।

पिकासो जब चित्रकार के रूप में अपने कॅरियर की शुरुआत करने पेरिस पहुँचे, उस समय की एक प्रचलित कहानी है।

पिकासो जब पेरिस गए, उस समय वह शहर अंतरराष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करनेवाले घटनाक्रम का प्रमुख केंद्र होने के साथ-साथ दुनिया की कला राजधानी के रूप में भी मशहूर था। पिकासो वहाँ के लिए नए थे। पेरिस जैसी जगह में किस्मत आजमाना कोई आसान काम नहीं था। उनमें आत्मविश्वास की कमी तो थी नहीं, मगर उसके बावजूद पिकासो ने दुनिया के सामने खुद को तौलने के लिए उसकी परीक्षा करने की सोची।

अपने पैतृक शहर बार्सिलोना में कला का डंका बजाकर पेरिस पहुँचे पिकासो को उस ऐतिहासिक कला साहित्य नगरी में पहचान बनानी थी। उन्होंने अपना पहला चित्र जो बनाया, वह शहर के मुख्य चौराहे के पास स्थित एक पार्क में टाँग दिया। चित्र के नीचे पिकासो ने लिखा कि इसमें जहाँ-जहाँ त्रुटियाँ हों, वहाँ क्रॉस कर दें।

सुबह को टहलने के समय पिकासो ने जहाँ अपना चित्र टाँगा था, वहाँ शाम को वे लोगों की प्रतिक्रिया देखने गए। पिकासो ने चित्र देखकर माथा पीट लिया और देर तक अपने आप को कोसते रहे। चित्र का कोना-कोना क्रॉस किया हुआ था। कहते हैं, चित्र को फाड़कर टुकड़े-टुकड़े करके पार्क में ही बेंच पर पड़े-पड़े पिकासो सो गए।

एक तो पिकासो पहले से ही दु:खी थे। शहर के लिए अजनबी और फर्राटे से फ्रेंच नहीं बोल पाने के कारण उन्हें स्थानीय लोगों से बात करने में दिक्कत होती थी, दूसरे जेब में पैसे नहीं होने के कारण उस दिन पिकासो ने कुछ खाया भी नहीं था। जो पेंटिंग उन्होंने बनाई थी, उसी पर पिकासो का कॅरियर टिका था। उसके उतने खराब रिस्पॉन्स ने पिकासो को और भी हताश कर दिया।

पार्क गार्ड ने रात को गाढ़ी नींद से युवा पिकासो को जगाया, तो उनके हाथों के नीचे दबी कैनवास पेपर की चिंदियाँ देख उसकी समझ में कुछ नहीं आया। इसके पहले कि गार्ड उस अनजान व्यक्ति को बाहर जाने के लिए कहे, एक गाड़ी पार्क के किनारे सड़क पर रुकी और उसमें से निकलकर एक व्यक्ति लंबे डग भरता हुआ बेंच के पास पहुँचा।

वह व्यक्ति था पेरिस का उस समय का सबसे बड़ा पेंटिंग डीलर एम्ब्रोइस वोलार्ड। पार्क की रोशनी में उसने पिकासो की पेंटिंग की टुकड़ियाँ देखीं और उसके प्रभावोत्पादक अंदाजेबयाँ का अंदाजा लगा लिया। पारखी को उस स्केच की रेखाओं में व्यक्त एक अभावग्रस्त कलाकार का दर्द समझने में देर नहीं लगी, बल्कि यों कहें कि जौहरी ने हीरे को पहचान लिया। उस समय एम्ब्रोइस वोलार्ड भी क्या जानते थे कि वैसी ही कलाकृतियाँ आगे जाकर सुपरहिट होंगी! उन्होंने भी नहीं सोचा होगा कि महानगरों की चकाचौंध में हताशा भरी जिंदगी के अँधेरे में सिमटे, सड़कों पर रात गुजारनेवाले गरीबों की आह व्यक्त करनेवाली पिकासो की वो पेंटिंग एक युग बना देगी (ब्लू पीरियड—नीला युग)!

पेंटिंग डीलर को पिकासो में असीम संभावनाएँ नजर आईं। खासकर स्केच के नीचे लिखे उनके नोट और स्केच के चारों तरफ लगे निशानों को जब आर्ट डीलर ने एक जगह जोड़-जोड़कर गौर से देखा, तभी उन्होंने उस महान् विभूति को लपक लिया। एम्ब्रोइस वोलार्ड ने गार्ड को विदा किया और पिकासो को समझा-बुझाकर बड़ी मुश्किल से अपने घर ला पाए।

अनुभवी आर्ट डीलर ने दुनिया देखी थी और मानवीय सोच को अपने हिसाब से प्रभावित करने की कला भी वे जानते थे। अब आगे कोई भी पेंटिंग नहीं बनाने की जिद पर अड़े पिकासो को काफी जद्दोजहद के बाद एम्ब्रोइस ने इस शर्त पर ठीक वैसा ही कैनवास स्केच बनाने को राजी किया कि वे किसी अन्य को नहीं दिखाएँगे।

10

हू-ब-हू बिल्कुल पहले जैसी पेंटिंग को अगले दिन सुबह आर्ट डीलर ने पिकासो से छिपाकर उसी पार्क में उसी जगह रखा, जहाँ पिकासो ने टाँगा था। एम्ब्रोइस वोलार्ड ने चित्र के नीचे लिख दिया—'इसमें जहाँ-जहाँ खूबियाँ हों, क्रॉस कर दें।' उसकी जानकारी पिकासो को नहीं दी। शाम को टहलने के बहाने एम्ब्रोइस ने पिकासो को साथ लिया और पार्क की ओर निकले। रास्ते में भी आर्ट डीलर ने पिकासो को कुछ नहीं बताया। पिकासो उस मनहूस पार्क में जाकर दोबारा अपना मूड खराब नहीं करना चाहते थे, लेकिन वोलार्ड के कहने पर दूसरे हिस्से की तरफ बेंच पर दोनों बैठ गए।

तभी दो सज्जन सामने से बात करते हुए गुजरे। उनकी बातचीत से वोलार्ड को अंदाजा लग गया कि पिकासो की पेंटिंग पर आज के क्रॉस की चर्चा हो रही है। पार्क से निकलने का रास्ता उधर से ही था, जिधर पेंटिंग रखी गई थी। वोलार्ड ने भी लगभग उसी जगह पेंटिंग टाँगी थी, जैसे उनके मन में कल्पना थी कि पिकासो ने टाँगी होगी।

वोलार्ड ने पिकासो को दूसरी बातों में उलझाए रखा और विश्वयुद्ध के वातावरण के चलते आर्ट मार्केट पर भी प्रभाव की चर्चा करते रहे। तभी पिकासो की नजर अपनी पेंटिंग पर अटकी और स्वाभाविक रूप से उनके पैर भी अटक गए। वही चित्र, वही स्थान, वही चित्रकार—चित्र का कोना-कोना खामियों के बजाय खूबियाँ दरशानेवाले क्रॉसों से भरा था।

पिकासो को दुनिया का दस्तूर तुरंत समझ में आ गया और अपना चित्र देखकर देर तक पागलों की तरह ठठाकर हँसते रहे। उसके बाद पिकासो ने दुनिया को पागल मान लिया। वोलार्ड ने सीख दी कि इस दुनिया की अगर परवाह करोगे तो पागल बना देगी। लोग बुरे में सिर्फ बुराई और अच्छे में सिर्फ अच्छाई देखते हैं। इसलिए निंदा और आलोचना की फिक्र किए बगैर सिर्फ अपना काम करते जाओ। जब लोगों का अपना कोई वजूद ही नहीं है और तुम्हारे ही हिसाब से उनकी विचारधारा तय होनी है तो फिर अपने ही हिसाब से चलो।

फिर पिकासो ने वाकई अपने जीवन के किसी भी क्षेत्र में इस बात की परवाह नहीं की कि लोग उनके बारे में क्या सोचते हैं और क्या बात करते हैं! यहाँ तक कि पेरिस में अपनी पहली पेंटिंग प्रदर्शनी में बिक्री नहीं होने और प्रतिकूल समीक्षा भी पिकासो को हताश नहीं कर पाई।

अपने जीवनकाल में ही किंवदंती बन चुके पिकासो ने पहले के और अपने समय के कई मिथक यथार्थ में बदले। पिकासो स्वयं 19वीं सदी के विन्सेंट वान गोफ (1853-1890), पाउल गाउगिन (1848-1903) और पॉल सीजेन

(1839-1906) जैसे कलाकारों से प्रभावित थे। किसी वस्तु को तराशना और उसे ऐसा आकार देना, जिससे कलाकार की भावना व्यक्त हो, पिकासो ने उन्हीं कलाकारों से सीखा, लेकिन वे लोग सिर्फ पेंटर थे और वे एक खास टाइप की पेंटिंग के लिए मशहूर थे।

जबकि पिकासो ने पेंटिंग सीखने के दौरान ही चित्रकला को कई नए आयाम दिए। उनका मानना था कि कला और सौंदर्य अंतरात्मा की अनुभूति है, जिसकी अभिव्यक्ति किसी भी तुच्छ या मामूली सी चीज में आ सकती है। चित्रकला के मर्म को समझनेवाला मिट्टी, बालू, कंक्रीट, रस्सी, तार, पेपर या कपड़े पर भी अपनी पेंसिल, पेंटब्रश अथवा कूची रख देगा, तो उसमें कलात्मकता आ जाएगी। कला की परिभाषा वही है, जो कलाकार की भावना के अनुकूल उसकी उँगलियों से निकलती है। खासकर पेंटर की सफलता इसी पर निर्भर है कि कितनी बारीकी से वो अपने मन की आँखों में उभरनेवाले बिंबों को रेखाओं में उकेरता है, ताकि दर्शकों की आँखें टिकते ही उनके मन में भी हलचल होने लगे।

पिकासो कवि और नाटककार के साथ-साथ रंगमंच कलाकार भी थे, इसलिए अभिव्यक्ति की सभी कलाओं में उन्हें महारत हासिल थी। पिकासो की कविता में लयात्मकता और संगीत की ध्वनि है, जो उनके चित्रों से भी निकलती है। उनकी अधिकांश सशक्त कविताएँ बुरे वक्त गुजरने के बाद लिखी गई हैं। पेरिस में उनके सबसे नजदीकी दोस्त थे कवि मैक्स जैकब, जिन्होंने पिकासो के कवि हृदय को पहचाना। दोनों ने पेरिस में साथ-साथ संघर्ष किया। एक ही कमरे में, एक ही बिस्तर पर रात गुजारकर गरीबी और अभाव झेला, लेकिन उस समय जैकब ने ही पिकासो को समझाया कि उन्हें समृद्धि, प्रसिद्धि और लोकप्रियता पेंटिंग से ही हासिल होगी।

भारत में तो ज्यादातर कवियों और लेखकों की पूरी उम्र पहचान बनाने में गुजर जाती है। आर्थिक रूप से सुखी जीवन कम ही कलाकारों को नसीब हो पाता है। मकबूल फिदा हुसैन को अपवादस्वरूप ले लें, तो किसी पेंटर या चित्रकार को जिंदगी भर समाज से मान्यता की जगह उपेक्षा मिलती है। आधुनिक भारतीय कला में टूट, बिखराव ही ज्यादा है।

लेकिन यूरोप में ज्यादातर कलाकारों और साहित्यकारों ने ऐशो-आराम की जिंदगी जी। पिकासो वैसे कुछ गिने-चुने चित्रकारों में से थे, जिन्होंने दुर्दिन को भी जीया और जिल्लत की तरह शान-शौकत को भी भोगा। यूरोप के लगभग सभी कलाकारों, लेखकों की तरह पिकासो का भी मानसिक कष्ट आर्थिक नहीं, प्रेम और विवाह में बार-बार मिलनेवाली असफलताएँ थीं। पिकासो वेश्यालयों में प्रेमिका ढूँढ़ते रहते थे।

12

1935-36 में पिकासो का नाम और शोहरत अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँचा हुआ था। उस समय वे पेंटिंग छोड़कर कविता लिखने लगे। इसके लिए पिकासो की सर्वत्र आलोचना हुई कि जिस पेंटिंग ने उन्हें दौलत और शोहरत दी, उसे क्यों छोड़ा? उस समय के प्रसिद्ध कला समीक्षक जेइमे सेवर्टेस ने 'पेरिस टाइम्स' में लिखा—'जिस पेंटर ने पेरिस की ठंडी रात में गरमी लाने के लिए अपनी पेंटिंग जलाकर रात गुजारी, जिसने रूस में बैले को अच्छा रिस्पॉन्स नहीं मिलने के कारण एक गिटार को तोड़ दिया, उसी के हाथों उसके अपने ही निर्मित कीर्तिमान का यह अपमान है।'

पिकासो ने हिटलर के आधिपत्य के समय भी पेरिस छोड़ने से इनकार कर दिया था, लेकिन वे इस बात की चर्चा नहीं करते कि बोल्शेविक क्रांति के समय एक क्रांतिकारी की तरह रूस में वर्षों रहकर युवा पिकासो ने वहाँ रंगमंच और बैले संगीत नृत्य की एक नई शृंखला शुरू की। उसका निर्माण, संयोजन और संपादन पिकासो स्वयं करते थे। इटली में बैले का सफल प्रयोग आजमाकर रूस के लिए पिकासो अपने साथ ले आए थे। आज भी रूसी संगीत-नाटक कला में इसे 'पिकासो परंपरा' के रूप में जाना जाता है। पिकासो बाजाप्ता सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य रहे, लेकिन कम्युनिस्ट नहीं बने। किसी वाद के सिद्धांतों के चलते अपनी कला से समझौता उन्हें मंजूर नहीं था। इसलिए पार्टी भी छोड़ी और रूस भी छोड़ दिया।

पिकासो ने दोनों ही विश्वयुद्धों की विभीषिकाओं को बहुत करीब से देखा और उसे पेंटिंग के साथ-साथ कविताओं का भी विषय बनाया। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पेंटर से कवि बने पिकासो की कविताएँ देखिए! शराब के गिलास में कवि को जनरलों का युद्ध उन्माद और युद्ध में मरनेवाले सैनिकों तथा निरीह इनसानों का बहता खून पहले से ही दिखाई देने लगा था। कई पेंटिंग में नारी की विद्रूप और बीभत्स छवि अंकित करने के कारण पिकासो को काफी समय तक आलोचना तथा उपेक्षा का शिकार होना पड़ा। नारी के प्रति बिल्कुल निष्ठुर और नकारात्मक सोच रखने के कारण वे बार-बार एकाकी जीवन जीने को मजबूर हुए, लेकिन उनकी रचना नारी अंगों और वस्त्रों के इर्द-गिर्द घूमती है, जिसे पिकासो ने अपनी कई पेंटिंग में निर्वस्त्र चित्रित किया है। कई जगह नारी सौंदर्य का भोंड़ा चित्रण है।

ये रही पिकासो की कविता (लेकिन इसमें गूढ़ अर्थ छिपे हैं)—

शराब के गिलास में
बिना स्लीववाले
लिबास की बाँहें
भट्ठी के आसपास गुँथी
गाँठ डाली हुई

सो रहा है
एक साँड़ का सिर
साँसें रोके हुए
उससे लिप्त
विकार और जमे खून में सना
मोती और गरम गोश्त की खुशबू
नगाड़े की कर्णभेदी चोट पर खड़ा
संतुलित रखा है
पार्श्व को आर-पार
भेदती दृष्टि ने।

संघर्ष के शुरुआती दौर में जिस पेंटिंग ने पिकासो को अंतरराष्ट्रीय प्लेटफॉर्म दिया, वो 'बूढ़ा गिटारवादक' के नाम से मशहूर है। यह 'ब्लू पीरियड' (1903) की सर्वोत्कृष्ट कृति मानी जाती है। इसमें पिकासो ने अभावग्रस्त भूख और हताशा में प्राण त्यागते गिटारवादक की आक्रोश उगलती आकृति वक्र रेखाओं/रंगों (क्यूबिज्म) में चित्रित की है।

उसमें मृत्यु के आगोश में पड़े एक बूढ़े कंकाल को मुँह बाए अंतिम साँस लेते दरशाया गया है। गरीबी और बदहाली ने उस गिटारवादक को साँस बंद होने से पहले ही मौत की हालत में ला दिया था। अपनी पेंटिंग के माध्यम से पिकासो ने यही कहना चाहा है। मुँह आकाश की ओर खुला है और दाएँ हाथ की उँगलियाँ गोद में पड़े गिटार के तारों पर हैं। बाएँ हाथ की तर्जनी दबाने की मुद्रा में गिटार की गरदन पर है। पिकासो के मुताबिक मनुष्य और वाद्य वस्तु मात्र हैं—एक-दूसरे के साथ के बिना उनका कोई अस्तित्व नहीं है। हाथ से गिटार ले लें तो गिटारवादक का धराशायी होना निश्चित है। चित्र को देखकर लगता है कि वादक की कला है गिटार, जिसे वो छोड़ नहीं सकता। गरीबी के कारण मृत्यु आसन्न दिखाई देने के समय भी गिटारवादक ने अपने वाद्ययंत्र को गले लगाए रखा।

इसके जरिए पिकासो ने अपने भविष्य की अनिश्चितता दरशाई है कि उनके साथ भी कहीं ऐसा ही घटित न हो! यह क्या कम आश्चर्य की बात है कि दुनिया भर में समृद्धि और शक्ति के एक महत्त्वपूर्ण केंद्र 'कला की राजधानी' पेरिस की गलियों/कस्बों में कलाकारों को ऐसी फटेहाल जिंदगी जीनी पड़ रही थी?

पेरिस में बार-बार निराशा हाथ लगने के बावजूद पिकासो ने आशा नहीं छोड़ी। ठान लिया कि अपनी पहचान और अपने लिए स्थान बनाए बिना स्वदेश नहीं लौटेंगे। नाम और शोहरत के शीर्ष पर पहुँचने के बाद पेंटिंग छोड़कर साहित्य

रचने में जुटे पिकासो के अंदर बचपन से मौजूद पेंटर ने उनका साथ नहीं छोड़ा। कभी यादों, तो कभी अँधेरी रात में खुले आसमान को अपनी आँखों के भीतर ढकेलकर आकाशी कल्पनाओं को जमीनी सच्चाई में बदलनेवाली पंक्तियाँ पिकासो से लिखा जाती थीं। अभिव्यक्ति कला की सोच और तरीके में बदलाव आया— पिकासो के हाथ में वाटर कलर और कूची की जगह कलम आ गई।

भारत के अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त पेंटर मकबूल फिदा हुसैन नग्नता को चित्रित करने के कारण विवाद के घेरे में आए और उन्हें मुंबई छोड़कर लंदन की शरण लेनी पड़ी। लंदन के अखबार 'दि टाइम्स' ने इसे 'पिकासो का प्रभाव' बताया।

लेकिन दूसरे चर्चित भारतीय पेंटर तैयब मेहता की रिकॉर्ड बिक्रीवाली पेंटिंग में पिकासो की संवेदनशीलता की परिचायक बिलखती मानवता झलकती है। कनाडा के चर्चित पेंटर लेविस लोबेई भी पिकासो के पदचिह्नों पर चल रहे हैं।

पिकासो को वास्तव में मानव त्रासदी, युद्ध और गरीबी से अभिशप्त समाज तथा कलाओं की गलघोंटू तड़प को उजागर करनेवाली पेंटिंग से ही विश्व स्तर पर प्रतिष्ठा मिली, लेकिन अंतरराष्ट्रीय कला मंडी में माँग उन्हीं चित्रों की ज्यादा हुई, जिसमें उन्होंने नारी देह को विकृत रूप में दिखाया है, खासकर पिकासो की प्रेमिकाओं की पेंटिंग तो हाथोहाथ बिक गईं। जिन चित्रों को लेकर विवाद छिड़ा, उनकी माँग और ज्यादा हुई। पहली प्रेमिका रूस की ओल्गा कोकलोवा से लेकर चौथी और अंतिम प्रेमिका जैकलीन रॉक तक सभी उनकी पेंटिंग का विषय बनीं। उनमें तीन से पिकासो ने प्रेम के बाद विवाह रचाए, बच्चे पैदा किए। वे सब-की-सब पिकासो की पेंटिंग की फैन थीं, लेकिन पिकासो न तो प्रेम में ईमानदार रहे, न ही विवाह में। अपनी धुन और सनक के हिसाब से सबको अपनाया, फिर किनारा भी किया।

वर्ष 1961 में जैकलीन के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करने के कुछ वर्षों बाद पिकासो ने महसूस किया कि सबकुछ हासिल होते हुए एक सूनापन जीवन भर उन्हें सालता रहा। जैकलिन ने एक माँ की तरह पिकासो की क्रूरता और वहशीपन को झेला। उन्होंने अपने परित्यक्त पति को शिशु जैसा स्नेह दिया और महसूस किया कि यह महान् पेंटर अंदर से खाली है।

उसके कुछ ही दिन पहले फ्रेंकोइस गिलट पिकासो से अलग हुई थी, जो स्वयं मशहूर पेंटर थी और शादी के बाद पिकासो के बच्चे की माँ बनी। पिकासो के वहशीपन की शिकार फ्रैंकोइस के जीवन पर आधारित 1996 में बनी फिल्म में पिकासो के अनछुए पहलू दिखाए गए हैं। फ्रैंकोइस 10 वर्षों तक पिकासो की मिस्ट्रेस बनकर रही, उनके दो बच्चे हुए।

वर्ष 1921 में जनमी फ्रैंकोइस पिकासो से उम्र में काफी छोटी थी, लेकिन उनके मन में कभी उम्र को लेकर कोई क्षोभ नहीं रहा। पेंटर के रूप में फ्रैंकोइस भी दुनिया की एक स्थापित हस्ती थीं। पिकासो के साथ रहते हुए उन्होंने पिकासो की पहले की प्रेमिकाओं से संपर्क स्थापित किया। पूरी उम्र फ्रैंकोइस ने सभी नारियों को फिर से पिकासो से जोड़ने में गुजार दी, जो उनके जीवन में आईं और फिर निकल गईं। 1973 में पिकासो की मृत्यु के समय तक फ्रैंकोइस उनसे मिलती रही। जो कुछ भी पिकासो के साहचर्य में फ्रैंकोइस ने भोगा, उस यथार्थ को अपनी पेंटिंग का विषय बनाया। समालोचक कहते हैं कि एकमात्र फ्रैंकोइस ही ऐसी प्रेमिका थी, जिसने पिकासो को गहराई से समझा।

मृत्यु के एक साल पहले तक पिकासो की सारी पेंटिंग में या तो उनकी अपनी छवि है अथवा फ्रैंकोइस की। फ्रैंकोइस की आपबीती पर बनी फिल्म की थीम है—'पिकासो आज भी जीवित हैं' (1996)। जेम्स आइवरी निर्देशित इस फिल्म के किरदारों ने पिकासो की पेंटिंग के पात्रों की भूमिका निभाई है। फिल्म को लेकर भी वर्षों तक विवाद होता रहा। उसमें साँड़ों की लड़ाई वाली पेंटिंग भी दिखाई गई है, जो पिकासो अर्नेस्ट हेंमिग्वे के साथ शराब पीते हुए देखने के बड़े शौकीन थे।

आज का युग विवादों का युग है। कोई भी कला, साहित्य, पेंटिंग या कोई फिल्म अपनी गंभीरता और कलात्मकता के लिए चर्चित नहीं होती। इसलिए रचनाकार और कलाकार उसे विवादित बनाता है, ताकि समाज बिफरे, लोग हंगामा मचाएँ, लेकिन पिकासो ने कभी भी अपनी पेंटिंग को जानबूझकर बिक्री के लिए विवादित बनाने का प्रयास नहीं किया। उनके सारे प्रयोग ही इतने नए और मौलिक होते थे कि विवाद छिड़ जाता था। तथाकथित अति सभ्य पश्चिमी समाज की विकृतियों को कलात्मक रूप देनेवाले पिकासो स्वयं उसके शिकार हो गए। पिकासो की पेंटिंग के अभावग्रस्त पात्र एक हाथ में ब्रेड, दूसरे हाथ में शराब की बोतल लिये हैं और कदम वेश्यालय की ओर बढ़ रहे हैं।

पिकासो पर सरस्वती की जितनी कृपा थी, उतने ही कामदेव उन पर सवार रहते थे। पूरी किताब में पाठक देखेंगे कि किस प्रकार पत्थर, मिट्टी में आकर्षण भरनेवाला पिकासो का पेंटिंग ब्रश और औजार घोड़े पर सवार होकर दौड़ता था। उनकी जादुई उँगलियों का जिस किसी निर्जीव चीज—अखबारी कागज (न्यूज प्रिंट), वाल पेपर, कपड़ा, कैनवास, शिला, बालू, कंक्रीट से स्पर्श हुआ, वो जीवंत होकर खिल गई। इटली के महान् चित्रकार माइकल एंजेलो की तरह पिकासो भी कहा करते थे कि कला की भावनात्मक अभिव्यक्ति से तुच्छ-उपेक्षित वस्तु भी निखर उठती है। मूल्यहीन चीज अनमोल बन जाती है।

ऐसे नैसर्गिक सौंदर्य का चमत्कार दिखानेवाले इस जीनियस के निजी जीवन में कहीं निखार नहीं है। अपने अक्खड़ और मनमौजी स्वभाव के कारण उनकी पूरी जिदंगी तनाव में गुजरी। अपनी बेचैन आत्मा को सुकून देने के लिए जितनी औरतों से पिकासो संबंध बनाते थे, जितने सामाजिक और राजनीतिक सरोकार बढ़ाते थे, उससे कुछ दिनों में ही उनकी बेचैनी बढ़ जाती थी। फिर एक नए, पहले से अलग की अंतहीन तलाश···चाहे वो नई औरत हो या पेंटिंग का कोई नया विषय। मन-मस्तिष्क के अंदर हमेशा चलते रहनेवाले इन झंझावातों से पिकासो के सारे काम प्रभावित हुए।

अव्यवस्थित जीवन जीने के बावजूद पिकासो की सारी पेंटिंग, मूर्तियाँ सब-की-सब सुपरहिट हुईं। अंदर के तूफान का यथार्थ चित्रण पिकासो की विश्वव्यापी लोकप्रियता का आधार है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में पिकासो को कालजयी बंगला उपन्यासकार शरतचंद्र की तरह 'आवारा मसीहा' कहा जा सकता है। प्रख्यात लेखक विष्णु प्रभाकर ने शरतचंद्र पर लिखी अपनी किताब का नाम ही 'आवारा मसीहा' रखा है। शरतचंद्र ने भी 18 वर्ष की उम्र में ही उपन्यास लिखा था, जिसका नाम 'वशा' बताया जाता है। उन्होंने मूड खराब होने की स्थिति में उस उपन्यास की पांडुलिपि स्वयं अपने हाथों फाड़ डाली थी, ऐसा कहा जाता है। शरतचंद्र भी जीवन भर औरतों के इर्द-गिर्द भटकते रहे, लेकिन शरतचंद्र का साहित्य ऐसा है, जिसका जोड़ बंगला तो क्या, भारत की किसी भी भाषा के साहित्य में नहीं मिलता। 'शरत युग' से ही उनका साहित्य संबोधित होता है।

पिकासो की अनेक प्रेमिकाएँ थीं, लेकिन जिन चार-पाँच मिस्ट्रेसों (रखैलों) का जीवनीकारों ने जिक्र किया है, वो सिर्फ वही हैं, जो विवाहिता पत्नी की तरह पिकासो के साथ रहीं।

दस साल की उम्र में पिकासो अपने चित्रकार पिता को अधूरी पेंटिंग पूरी करने में मदद पहुँचाने लगे थे और 15 साल में उनके पास अपना स्टूडियो था। पुत्र की प्रतिभा से अभिभूत पिता ने उसके बाद पेंटिंग छोड़ दी।

अनुक्रम

कृतिकथ्य *5*

1. पिकासो का बचपन और पेंटिंग की पारिवारिक ट्रेनिंग 19
2. पेंटर और शिल्पी पिकासो अंतरराष्ट्रीय ख्याति की ओर 44
3. युग निर्माता कलाकार पाब्लो पिकासो 63
4. पिकासो और सल्वाडोर डाली 71
5. विश्वयुद्ध और पिकासो : कला/काव्य-शिल्प का अंतर्द्वंद्व 145
6. पिकासो के अंतिम दिन 162

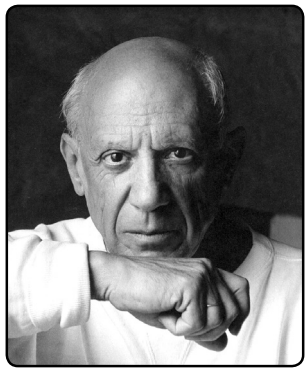

पिकासो का बचपन और पेंटिंग की पारिवारिक ट्रेनिंग

जिस तरह का विविध और विश्लेषणात्मक इम्प्रेशन पिकासो की पेंटिंग देती हैं, वैसी अजीबोगरीब परिस्थितियाँ उनके जन्म से ही शुरू हुई हैं। पिकासो का बचपन कुछ वैसे वातावरण में गुजरा और परवरिश भी कुछ इस तरह से हुई कि किशोर उम्र में पहुँचने के पहले से ही ज्यादा समय घर-परिवार से दूर रहना पसंद करने लगे। वे अपने में लीन और बंद कमरे में सबसे कटकर सिर्फ अपने काम से मतलब रखनेवाले स्वभाव के नहीं बने, जैसा प्रायः लेखकों/कलाकारों के साथ होता है। पिकासो के साथ ठीक उलटा था, वे तो बाहर की दुनिया तलाशते रहते थे। अपने घर-परिवार से ज्यादा देश, समाज, लोग-बागों के बीच भीड़ तथा उथल-पुथल में ही डूबे रहकर पेंटिंग का प्लॉट ढूँढ़ते थे।

पिकासो का जन्म भी वात्सल्य और मातृवत् स्नेह के बजाय उपेक्षित तथा बेगैरत वाले माहौल में हुआ। कहते हैं, पैदा होते ही शिशु को माँ के शरीर और हाथ का स्पर्श ठीक वैसे ही जरूरी होता है, जैसा उसे माँ के पेट में मिलता है। पिकासो के जन्म की दारुण कहानी करुणा से भरी है। बड़े होकर जब उन्होंने जाना कि जन्म से लेकर किशोर उम्र तक महिलाओं से घिरे रहे, लेकिन किसी भी महिला के लिए एक कलाकार लड़के के लिए संवेदना नहीं थी, तो महिलाओं के प्रति पिकासो के मन में कठोरता व्याप्त हो गई। जीवन भर पिकासो कोमलता को वितृष्णा और क्रूरता से घूरते रहे। सहज और स्वाभाविक स्नेह से वंचित रहने के कारण पिकासो के मन में नारी के प्रति नफरत थी, ऐसा नहीं कहा जा सकता, मगर कोई आत्मीयता

वाला प्रेम भी नहीं था। संवेदनशीलता उनके साथ गर्भ से ही निकली थी, जो बाद में पिकासो के वयस्क होने पर माँ-पिताजी के तलाक से अलग तरह की थी।

दुनिया की बड़ी-बड़ी महान् घटनाओं की तरह पिकासो का जन्म भी आधी रात के समय की घटना है।

पिकासो जब पैदा हुए तो प्रसव करानेवाली दाई ने शिशु को अपने हाल में मरने छोड़ दिया और बच्चे से पहले माँ की सेवा में जुट गई। माँ के पास बैठे पिकासो के डॉक्टर अंकल डॉन सल्वाडोर सिगार फूँक रहे थे। सिगार के धुएँ से तुरंत जनमे बेबी की साँस नहीं चल पा रही थी और बच्चा छटपटा रहा था। रोने-चीखने की भी आवाज नहीं निकल पा रही थी।

अमेरिकी लेखक और पत्रकार कार्ल रोलीसन ने पिकासो पर लिखी किताब में इस दृश्य का बहुत मार्मिक चित्र खींचा है। पिकासो के जन्मवाले चैप्टर को उन्होंने नाम ही दिया है—'मिडनाइट इन मलागा' (मलागा की मध्य रात्रि)। यों वर्णन किया है, मानो वे घटनास्थल पर मौजूद हों और माँ के गर्भ में भ्रूण से ही उपेक्षित नवजात शिशु को धरती पर वात्सल्य के लिए तड़पते देखा हो! जन्म के साथ ही मृत्यु की छटपटाहट पिकासो ने दो नारियों की मौजूदगी में झेली। बगल में बैठा डॉक्टर बेफिक्र होकर सिगार फूँकता रहा, बच्चे का दम घुटता देखता रहा।

मृत्यु और नारी के प्रति नकारात्मक तथा भयावह सोच उम्र भर पिकासो के मन-मस्तिष्क पर हावी रही। उसमें घृणा से ज्यादा विरक्ति की भावना है। जन्म के समय माँ के दूध और स्पर्श से वंचित रहने की पिकासो की भूख मृत्यु करीब होने के दिन तक नहीं मिटी। इस मर्मस्पर्शी प्रसंग का जिक्र पिकासो अपनी अंतिम पत्नी जैकलीन से प्राय: किया करते थे और हर बार उनका चेहरा विकराल हो जाता था। फिर बच्चे की तरह रोने लगते थे। बेबी पिकासो को बोध ही जिस असह्य पीड़ा से हुआ, उसने उनके हर काम को किसी-न-किसी रूप में प्रभावित किया। इसलिए पिकासो की हर कृति में सौंदर्य है, अलंकार है और तिरस्कार, वितृष्णा और मन को खिन्न कर देनेवाले भाव भी हैं। कहीं-कहीं भोंड़ापन भी है। मन को मथनेवाली आत्मा की आवाज ने ही पिकासो की अभिव्यक्ति के विभिन्न आयाम निकाले।

पिकासो का बचपन माँ से ज्यादा नारी के अन्य रूप दादी माँ और आयाओं के बीच गुजरा।

पिकासो के पिता जोस रूइज ब्लास्को मलागा से बाहर रहते थे। मलागा स्पेन के दक्षिणी तट पर स्थित उस जगह का नाम है, जहाँ पिकासो 25 अक्तूबर, 1881

को पैदा हुए। पिता अपने बच्चे को काफी समय बाद देखने आए। वे स्वयं अच्छे चित्रकार और कला शिक्षक थे। उन्हीं से पिकासो उत्प्रेरित हुए, लेकिन जैसे-जैसे पिकासो बड़े होते गए, पिता से उनकी दूरी बढ़ती गई। पिता अपना नाम पुत्र के जरिए रोशन करने का अरमान सँजोए हुए थे। माता-पिता के बीच पिकासो के जन्म के पहले से ही संबंध सामान्य नहीं थे। बाद में उनमें आपसी तनाव बढ़ता ही रहा। पिकासो ने 13 साल की उम्र में अपने से सात साल छोटी बहन कोंचिता की डिप्थीरिया से मृत्यु देखी। किशोर पिकासो पर इन सबका असर पड़ा।

लेकिन कुल मिलाकर पिकासो को अपनी माँ में ही ममता नजर आती थी और वे स्वयं को माँ के ज्यादा निकट पाते थे। इसलिए पिकासो ने किशोर उम्र में ही अपने नाम के आगे माँ मारिया की पदवी लगा ली, माँ का नाम था—'मारिया पिकासो लोपेज'। बच्चे ने अपने नाम पाब्लो के आगे सिर्फ 'पिकासो' रखा और दस्तखत में भी सिर्फ 'पिकासो' लिखते थे।

मारिया ने पुत्र के जन्म के समय की कहानी जब सुनी तो माँ की ममता तड़प उठी। उन्होंने वात्सल्य के इस खिलवाड़ से पीड़ित अपने बच्चे के दर्द को समझा और इसके लिए स्वयं को दोषी माना। मारिया का पूरा जीवन इस अपराध-बोध से मुक्ति पाने में गुजरा। उन्होंने हमेशा पुत्र के हर काम में मातृवत् स्नेह के साथ-साथ मित्र की तरह सहयोग किया। यहाँ तक कि पिकासो की पत्नियों और मिस्ट्रेसों से भी वे यही उम्मीद करती थीं। जब भी किसी पत्नी या प्रेमिका से माँ पिकासो का हाल-चाल पूछती थीं, यह बात कहना नहीं भूलती थीं कि वो पिकासो की भावनाओं का खयाल रखें और उसके प्रति माँ की तरह प्रेम तथा स्नेहभाव रखें।

पिकासो अपनी अंतिम प्रेमिका जैकलीन में, जो वास्तव में पत्नी ही थी, अपनी माँ की छवि देखते थे। पिकासो को प्रेमिका तो उससे पहले कई मिलीं, जो पत्नी भी बनीं, लेकिन एकमात्र जैकलीन थीं, जो सिर्फ पत्नी थी और आज भी अपने पति की याद सँजोए हुई है।

पिकासो ने जैकलीन को अपने जन्म के समय की करुण कथा और माता के स्नेहवश अपने नाम के आगे पिता की 'रूइज' पदवी हटाकर उसकी जगह 'पिकासो' जोड़ने की बात भी स्वयं बताई थी।

पाब्लो पिकासो के नाम के साथ एक और रोचक कहानी जुड़ी है। वे कट्टर कैथोलिक ईसाई परिवार में पैदा हुए थे और पिकासो के पूर्वज धर्मोपदेशक पादरी की परंपरा निभाते आए थे। यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी नाम से जुड़ा आ रहा था,

इसलिए वंशानुगत परंपरा के मुताबिक पिकासो का नाम काफी लंबा-चौड़ा था। स्पेनिश भाषा में संस्कार के अनुसार पिकासो का नाम था—'पाब्लो दिएगो जोस फ्रांसिस्को डी पाउला जुआन नीपोमुसीनो मारिया डी लोस रेमेडीओस सिप्रियानो डी ला सेंटीसीमा ट्रिनिदाद मार्टिर पेट्रीसियो क्लीटो'। यह अपने पितरों और संत रिश्तेदारों के प्रति आदर का प्रतीक माना जाता था। पिता की पहचान के रूप में रूइज और माँ की पहचान के रूप में पिकासो जुड़ गया। बाद में पिकासो ने पिता की पहचान हटा दी और बड़े होने पर वे पूरी तरह नास्तिक हो गए। स्पेन में कानूनन ऐसा नाम रखने का नियम है, जिससे वंशानुगत परंपरा और रीति-रिवाज का पता चले।

प्राय: निम्न और मध्यवर्गीय परिवारों में धार्मिक आस्था तथा अंधविश्वास ज्यादा देखा जाता है। पिकासो के पिता डोन जोस रूइज ब्लास्को का मध्यमवर्गीय परिवार भी इसका अपवाद नहीं था। दक्षिणी स्पेन की मलागा बस्ती कैथोलिक ईसाइयों की थी और विकास की दृष्टि से मलागा 19वीं सदी के पूर्वार्ध में बाजाब्ता एक नगर की तरह था, लेकिन कस्बाई अंधविश्वास की संस्कृति ने वहाँ के अधिकांश प्रवासी बाशिंदों को ऐसा घेर रखा था कि वे लोग परिवार की कोई अप्रिय घटना को किसी-न-किसी अपशकुन या दैवी प्रकोप से जोड़ देते थे। परिवार की सबसे बड़ी संतान पाब्लो के शुरू से ही मस्तमौला व मनमौजी स्वभाव को उनके पिता और चाचा दैवी प्रकोप मानते थे। पाब्लो की छोटी बहन की मौत को भी इसी से जोड़ा गया। ठीक उसी तरह पाब्लो का बचपन से ही अत्यंत संस्कारी और असाधारण प्रतिभा का होना यीशू का चमत्कार माना गया। पिता और चाचा किशोर पाब्लो के अभिभावक के रूप में उनके विषय में निर्णय लेते थे।

लेकिन पाब्लो ने बोध होने के बाद से ठान लिया कि अपनी किस्मत का फैसला उन्हें स्वयं करना है और वास्तव में वही उन्होंने किया भी। अपने कला-कौशल का चमत्कार स्कूली कक्षा से ही दिखाना शुरू कर दिया, जब वैसा घर के लोग सपने में भी नहीं सोच सकते थे। कल्पना निराकार होती है। उसे साकार करने के लिए पीछे पड़ना होता है, निरंतर प्रयासशील रहना पड़ता है। अथक परिश्रम और लगन के बाद कुछ हासिल होता है। उसके बावजूद कोई जरूरी नहीं कि हर अरमान पूरे हो जाएँ।

पाब्लो इस मायने में भाग्यशाली रहे कि उन्होंने जो सोचा, कर दिखाया। मानसिक अशांति और असंतुलन के आगोश में पाब्लो किशोर उम्र में ही आ गए

थे। जिसने बुढ़ापे तक उनका पीछा नहीं छोड़ा, लेकिन उसके बावजूद पाब्लो ने अपनी सारी आकांक्षाएँ पूरी कीं। जीवन की सारी बड़ी-बड़ी उपलब्धियाँ हँसते-खेलते हासिल कीं। कला में ही रत, आकंठ डूबे रहे और उसके बिल्कुल बेदाग होने के रास्ते में आनेवाली सारी बाधाओं तथा भ्रांतियों को परे ढकेलते रहे। जो देखा, महसूस किया, उसे बिना किसी पूर्वग्रह के अपने रंग, तैल और तूलिका में बिल्कुल स्वस्थ, बेबाक आकार दे दिया। बहुत जल्द ऊँची छलाँग लगाकर आकाश में उड़ने की कल्पना के कारण पाब्लो दिमागी तौर पर अस्त-व्यस्त रहते थे, लेकिन उनकी मानसिकता बीमार नहीं थी।

इसलिए अपने परिवार, कस्बे और देश-दुनिया का कोई धार्मिक या राजनीतिक पंथ पाब्लो को अपने प्रभाव में नहीं ले पाया। उलटे पाब्लो की विलक्षण शुद्ध कला की वैविध्यपूर्ण गंभीर अभिव्यक्ति ने ही लगभग हर पंथ को किसी-न-किसी रूप में प्रभावित किया।

पिकासो की शैली की तुलना माइकल एंजेलो से की जाती है। 18वीं सदी की कला एंजेलो से ही परिभाषित होती है। इटली के माइकल एंजेलो पिकासो से भी महानतम चित्रकार माने जाते हैं। पिकासो के कई चित्रों पर एंजेलो की छाप है। एंजेलो ने जिस शिला को छुआ, उसका सारा गिला अपनी तूलिका में समेट लिया। एंजेलो के ही शब्दों में, 'पत्थर के हर टुकड़े में एक सुंदर मूर्ति छिपी है, जिसकी खोज मूर्तिकार करता है। मैंने पत्थर में परी को देखा और तब तक तराशता रहा, जब तक कि वह पत्थर से बाहर नहीं निकल आई।'

माइकल एंजेलो को पाश्चात्य कला का जन्मदाता माना जाता है। मार्च 1475 में रोम में पैदा हुए एंजेलो से ही यूरोप में कला की एक विशिष्ट शैली का उद्‌भव और विकास हुआ। वे एक ही साथ मूर्तिकार, चित्रकार, आर्किटेक्ट और कवि थे। रंगमंच, कला और पश्चिम की विशेष संगीत नृत्यकला 'बैले' की भी शुरुआत इटली में माइकल एंजेलो से ही हुई। वे चिंतक और दार्शनिक भी थे। 18वीं सदी तक कला जगत् पर माइकल एंजेलो का एकछत्र राज रहा और आज भी उनकी देन ऐसी अनमोल धरोहर है, जिसका विकल्प नहीं है। एंजेलो का यह नीति-वाक्य समूचे विश्व के लिए प्रेरणास्रोत है—

'निरर्थक बिताए समय से ज्यादा दु:खदायी कुछ नहीं हो सकता'।

और ये हैं एक चित्रकार और मूर्तिकार के रूप में एंजेलो की महान् उपलब्धियों की कुछ बानगी—'बिना तराशा हुआ पत्थर महान् कलाकार की हर सोच को

स्वरूप दे सकता है। मेरे काम शुरू करने से पहले ही पत्थर के अंदर एक कलाकृति मौजूद होती है, मैं तो केवल बेकार की चीजें बाहर निकालता हूँ। मनुष्य अपने हाथों से नहीं, बल्कि मस्तिष्क से रंग भरता है। शब्दों के बजाय मन को पढ़ने की कोशिश करें, क्योंकि कलम दिल की भावनाओं को व्यक्त नहीं कर सकती।'

अनुभव से हासिल यह सारा ज्ञान अक्षरश: पिकासो पर लागू होता है और पिकासो की हर कृति पर यह अंकित मालूम पड़ता है। नास्तिक होने के बावजूद पिकासो ने कदाचित् अपना धर्मगुरु और पथ-प्रदर्शक एंजेलो को ही माना। बाइबिल और वेदवाक्य की तरह पिकासो ने इन सारे आदर्शों को गाँठ बाँध लिया था। अथवा न भी बाँधा हो तो महान् लक्ष्य हासिल करने का जुनून पिकासो के अंदर माइकल एंजेलो जैसा ही था, इसका प्रमाण भी उन्होंने दिया। यह बात पिकासो की अंतरात्मा में बसी थी। इसलिए उनकी सोच एंजेलो से मिलती-जुलती है—'बड़े लक्ष्य निर्धारित कर उन्हें नहीं हासिल कर पाना बुरा है, लेकिन उससे भी खतरनाक है, छोटे लक्ष्य हासिल कर संतुष्ट हो जाना।'

इसका परिचय पिकासो ने किशोरावस्था में ही दे दिया था। पिता सिर्फ एक कला शिक्षक बनकर रह गए और पुत्र पाब्लो ने पिता से ही सीखी हुई कला का दुनियाभर में डंका बजाया। पिता जोस रूइज ब्लास्को मलागा और बार्सिलोना तक ही सीमित रह गए। हर पिता की इच्छा होती है कि उसका पुत्र खूब आगे बढ़े और पिता का नाम रोशन करे, लेकिन रूइज को 10 साल के पाब्लो की पेंटिंग देखकर पहले तो ईर्ष्या हुई कि इसने तो इतनी छोटी उम्र में ही कला के क्षेत्र में अपने कलाकार पिता को पीछे छोड़ दिया! उस चक्कर में पिता ने पेंटिंग करना कुछ दिनों के लिए छोड़ दिया और जब छोड़ दिया, तो फिर दुबारा शुरू नहीं कर पाए।

पिता जोस रूइज ने बाद में महसूस किया कि पाब्लो की कैनवास पेंटिंग के विकास के लिए विशाल कैनवास और बड़ा प्लेटफॉर्म भी चाहिए। इसलिए माँ ने जब पिकासो के पेरिस जाने के प्रस्ताव को खुशी-खुशी मान लिया तो पिता ने उसका विरोध नहीं किया। पिकासो समझ रहे थे कि बार्सिलोना की सीमा में बँधकर वे दुनिया की सीमाओं को लाँघ नहीं सकते। पेरिस ही उनकी ख्वाहिश पूरी कर सकता है।

वे यह भी जान रहे थे कि पेरिस और रोम जैसे महान् कलाकारों के किले में सेंध लगाने के लिए कठिन पापड़ बेलने होंगे, एड़ी घिसनी होगी, लंबे समय

तक सड़कछाप जिंदगी जीनी पड़ सकती है। इन तमाम जोखिमों को ही अपनी पूँजी मानकर, यही लिये हुए पिकासो पेरिस के लिए रवाना हुए। पेरिस में गरीबी से लड़ते हुए पिकासो जिन बड़ी-बड़ी हस्तियों के संपर्क में आए, उनमें प्रमुख थे—साहित्यकार गेत्रूद स्टेन और आंद्रे सल्मोन। सल्मोन कवि और लेखक के साथ-साथ कला समीक्षक भी थे। अमेरिकी लेखक स्टेन के पेरिस स्थित घर में बैठकी जमती थी, जिसमें पिकासो नियमित रूप से जाते थे। मानवीय संबंधों की थीमवाले जेम्स जॉयस, अर्नेस्ट हेमिंग्वे और एफ. स्कॉट फित्जेराल्ड जैसे हाई प्रोफाइल कवि-लेखक भी स्टेन के घर बैठकी जमाते थे। गेत्रूद स्टेन को पेंटिंग और मूर्ति-संग्रह का शौक था। उभरते कलाकार पिकासो की प्रतिभा देखकर स्टेन ने उन्हें अपना संरक्षण दिया। स्टेन अमेरिका के मशहूर कला प्रेमियों में गिने जाते थे।

स्टेन के ही माध्यम से पिकासो उस समय के रोलैंड पेनरोज और जॉन गोल्डिंग सरीखे जाने-माने लेखकों तथा कला पारखियों के संपर्क में आए। बाद में पिकासो के नजदीकी मित्र बने रोलैंड पेनरोज ने पिकासो की जीवनी भी लिखी। माइकल एंजेलो और पिकासो में समानता का वर्णन करते समय जॉन रिचर्डसन जिस बात का जिक्र करना भूल गए या उसे जरूरी नहीं समझा, उस संबंध में पेनरोज ने लिखा है। पेनरोज के मुताबिक एंजेलो और पिकासो की कलाकृतियों में कम, लेकिन दोनों की जीवन-शैली तथा स्वभाव में समानता ज्यादा है। पिकासो के शुरुआती दौर की कैनवास पेंटिंग 'ली मूविन डी ला गेलेटे' (1900) पर तो एंजेलो की छाप है, लेकिन बाद में जैसे-जैसे पिकासो में प्रौढ़ता आती गई, वे अपने रंगों में नए-नए रूपक-अलंकार भरते गए। हर नया प्रयोग पहले से इतना अलग था कि कला समीक्षकों को किसी निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन हो जाता था।

एंजेलो को भी घुमक्कड़ी और अड्डेबाजी दोनों का शौक था। एंजेलो ने शुरुआत मूर्तिकला और कविता से की, बाद में पेंटिंग को अपनाया। रंगमंच और नाटक को उन्होंने ज्यादा महत्त्व नहीं दिया, लेकिन एंजेलो की कृतियों में गंभीरता ज्यादा और भावाभिव्यक्ति काफी गहरी है। उनके अंदर लगन ऐसी थी कि जो भी काम शुरू किया, वो अंत-अंत तक करते रहे। जबकि पिकासो की कृतियाँ बहुआयामी हैं और उनमें विविधताएँ हैं। दोनों को अपने-अपने देश के और अन्य यूरोपीय देशों के लेखकों ने 'अपने समय के सर्वाधिक चर्चित कलाकार' कहकर लिखा। जबकि एंजेलो की तरह पिकासो भी हर समय, हर जगह, हर युग में चर्चित रहे। दोनों महान् कलाकारों की अभिव्यक्ति का अंदाज इतना जबरदस्त प्रभाव

डालता है कि आज इतनी सदियाँ गुजर जाने के बावजूद, हर नए कलाकार की कला में दर्शक पहले एंजेलो और पिकासो को ही खोजता है।

पिकासो पेंटर/चित्रकार के बाद मूर्तिकार बने। उनकी मूर्तियों से ज्यादा पेंटिंग हैं। पेंटिंग की चर्चा, प्रशंसा और आलोचना भी ज्यादा हुई, इसलिए ज्यादा बिकी भी। पेंटिंग ने ही पिकासो को गरीब से अमीर बनाया, लेकिन 50 की उम्र में कविताई और लेखन की दुनिया में आने के बाद पिकासो ने पेंटिंग छोड़ दी। अपनी जिद और मनमरजी के आगे दुनियाभर में फैले प्रशंसकों/कलाप्रेमियों के आग्रह भी ठुकराते रहे।

जैसा कि प्राय: महान् विभूतियों के साथ होता है कि आरंभ में उन्हें कोई महत्त्व नहीं देता—जल्दी पहचान नहीं मिलती। अगर कोई पुरानी लीक से हटकर नया रास्ता बनाता है और पहले से स्थापित परंपरा को तोड़कर नई परंपरा कायम करने की कोशिश करता है तो लोग उसे स्वीकार नहीं करते। सबसे पहले विरोध अपने परिवार, समाज से ही शुरू होता है। हतोत्साहित करने के प्रयास होते हैं। पिकासो इस मायने में भाग्यशाली रहे कि उन्हें सबसे ज्यादा सहयोग माँ से मिला, पिता ने पेंटिंग करना सिखाया, लेकिन पिकासो का तेजी से आगे बढ़ते जाना और कम ही समय में शीर्ष पर पहुँच जाना, देश-विदेश में काफी दिनों तक 'कलाकारों की हैसियत तय करनेवाली ख्यातिप्राप्त हस्तियों की मंडी' में नहीं खपे।

उसमें बड़े विकसित और छोटे तथा कमजोर देश में पैदा होना भी मायने रखता है। उसी हिसाब से किसी देश के कलाकार और साहित्यकार की भी औकात तय होती है कि दुनिया में राजनीतिक दृष्टि से उस देश का प्रभाव कैसा है? पिकासो स्पेन जैसे कमजोर व छोटे देश में पैदा हुए। बाद में रोम, पेरिस, मास्को, लंदन में रहकर पिकासो ने अपना कॅरियर बनाया, पैर जमाए। ये उन महाशक्तियों की राजधानियाँ थीं, जो पिकासो के उत्कर्ष के समय पूरे विश्व के भाग्य का फैसला कर रहे थे। जब पिकासो की पेंटिंग की चर्चा शुरू हुई, उस समय से लेकर उत्थान के चरम पर पहुँचने के रास्ते में पिकासो ने दो-दो युद्धों की विभीषिकाएँ देखीं। अपने शहर, अपने देश को उजड़ते, लुटते देखा। जर्मनी और इटली एक-दूसरे का साथ दे रहे थे।

कुछ लेखकों का कहना है कि एंजेलो के प्रभाव के कारण ही पिकासो पेरिस के बाद रोम गए और वहाँ बैले प्रोड्यूसर के रूप में एंजेलो के अधूरे काम को पूरा किया।

नारी के बाद मौत की छाया पिकासो के मन को आजीवन मथती रही। इस बिंदु पर एंजेलो से उनकी समानता है। मौत के विषय में माइकल एंजेलो ने कहा, 'मेरे मन में ऐसा कोई विचार नहीं आता, जिसमें मौत की छाया न नजर आती हो', लेकिन साथ-साथ यह भी स्वीकारा, 'यदि कम समय की जिंदगी मिलने से खुश हैं तो मृत्यु के लिए भी शिकायत नहीं करनी चाहिए, क्योंकि दोनों देनेवाला तो एक ही है।'

पिकासो ने शैशव काल से लेकर युवा और बुढ़ापे तक भी मौत को काफी करीब से देखा था। मन-मस्तिष्क पर उसके प्रभाव ने पिकासो के प्रेमी मन को वहशी बना दिया। उनके भावों में मौत की भयावहता इस तरह व्याप्त हो गई थी, नारी सौंदर्य का चित्रण करते-करते बीभत्स और मन को बेचैन करनेवाला चित्र सामने आ जाता था। कभी-कभी जिस पत्थर से और रंग से वे कामुक परी का जीवंत चित्र उकेरते थे, वो उन्हें अपनी आँखों के सामने ही मृत प्रतीत होने लगती थी।

मानव मन के अंदर स्वाभाविक रूप से ऐसे भाव उमड़ते रहते हैं। बाहर निकलते ही उसे अश्लीलता की श्रेणी में डाल दिया जाता है। पिकासो ने अपनी कलाकृति का विषय उसे बनाया और दर्शकों तथा कलाप्रेमियों के मनोभावों को वे शब्द दिए, जो पिकासो के रंगों से निकले हुए थे। लेखक के शब्द पढ़कर जो भाव पैदा होते हैं, वो शब्दों की भाषा से निकलते हैं, लेकिन कलाकार के रंग की छाप और भाषा लेखक के शब्दों से ज्यादा असरदार होती है। एंजेलो ने सही कहा है। जिन अभिव्यक्तियों के लिए लेखक और कवि को शब्द नहीं मिलते हैं, वो कलाकार अपनी तूलिका की नि:शब्द रेखाओं में चित्रित कर देता है। पिकासो की ज्यामितिक रेखाओंवाली पेंटिंग को 'क्यूबिज्म' कहा जाता है, जो सबसे ज्यादा मशहूर हुईं। वो चित्रकला का एक नया आविष्कार था।

पिकासो की पेंटिंग प्रदर्शनी में लोगों के जुटने और मुँहमाँगी कीमत अदा करने को प्रस्तुत रहने का मूल कारण यही है। दर्शकों को लगता था कि जो वे सोचते हैं और जो आकृति उनके मन में उभरती है, वही पेंटिंग कह रही है।

पिकासो की महत्त्वाकांक्षा प्रबल थी। अपने बारे में ऊँची धारणा उनके मन में उसी समय से पनपने लगी, जब 1895 में 14 साल की उम्र में उन्होंने स्कूल एंट्रेंस परीक्षा पास कर ली। जितनी उम्र में पाब्लो ने वो परीक्षा पास की और जो अंक हासिल किए, दोनों ही एक रिकॉर्ड माना जाता है। उससे पहले 10 साल की उम्र में

उनकी पहली पेंटिंग और उस समय की बनाई हुई ड्राइंग की जो प्रदर्शनी पिकासो के स्कूल ने आयोजित की, उसे देखकर पूरा स्कूल भौचक्का रह गया। उन चित्रों में पिकासो ने अपनी उम्र के मुताबिक ज्यादा परिपक्वता और संवेदनशीलता का परिचय दिया था। पिकासो ने सड़कों पर घूमनेवाले भूखे, नंगे बच्चों, भिखमंगों का दर्द अपनी पेंटिंग में बयाँ किया था।

1895 में बार्सिलोना के फाइन आर्ट स्कूल या लोंजा में उनकी पेंटिंग की प्रदर्शनी लगी। फिर पिता और चाचा ने जब पाब्लो का 1897 में मैड्रिड के रॉयल अकेडमी ऑफ फाइन आर्ट्स में एडमीशन कराया, तो उनकी कला निखर उठी।

दुनिया की हर कला का विषय नारी सौंदर्य रहा है, लेकिन पिकासो के व्यक्तित्व और कृतित्व को सिर्फ उनकी मिस्ट्रेसों और वेश्याओं के इर्द-गिर्द रखकर आँकना इसका एकपक्षीय आकलन है। इसलिए कि उनके चित्रों में वेश्याओं का दर्द, उनकी विवशता और जबरन उस पेशे में डाले जाने की करुण भावना दर्ज है। पिकासो ने अपने समाज के मानवीय पहलुओं को सबसे ज्यादा अहमियत दी। वे स्वयं भी तो एक पीड़ित-दमित इनसान थे। सड़कों पर आवारा भटकने और जहाँ सारे लेखक, कलाकार मौज-मस्ती, अड्डेबाजी करने जुटते थे, उसकी लत पिकासो को मैड्रिड में रहते हुए ही लग गई थी। यह वही संवेदनशील कलाकार है, जो युद्ध में बेवा हुई महिलाओं के बीच जाकर रहा, उनकी दास्तान सुनी। युद्ध के बाद और युद्ध के दौरान सैनिकों की हवस का शिकार हुई और वेश्यावृत्ति में ढकेली गई महिलाओं की आपबीती जानने के लिए पिकासो ने महीनों उनके बीच गुजार दिए। पिकासो हेमिंग्वे के साथ युद्ध के बाद की स्थिति जानने के लिए स्पेन, पोलैंड समेत कई देशों में गए। हेमिंग्वे युद्ध संवाददाता थे।

पिकासो की चित्रकारी में सेक्स की प्रधानता जरूर है, लेकिन कहीं भी घुटन या कुंठा नहीं है। उन्होंने जो जीवन जिया, उसी को ईमानदारीपूर्वक अपनी तूलिका में उतार दिया। उसमें कहीं-कहीं सेक्स का विकृत रूप भी चित्रित हुआ है, लेकिन उसे किसी भी गंभीर कला समीक्षक ने मानसिक विकृति का द्योतक नहीं माना। वैसी पेंटिंग खरीदने के लिए कलाप्रेमी पिकासो की प्रदर्शनी का बेसब्री से इंतजार करते रहते थे। वैसे चित्रों की हर अभिव्यक्ति दर्शकों को कुछ सोचने को विवश कर देती थी और उसका वास्तविक अर्थ निकालना आसान नहीं होता था।

पिकासो के जीवन की कहानी में कहीं कोई ऐसा प्रसंग नहीं मिलता कि उन्होंने किसी महान् व्यक्ति से जुड़कर उनके संपर्क का लाभ उठाया हो, लेकिन

कई नामचीन लेखकों, कलाकारों ने पिकासो से नजदीकी स्थापित करके पिकासो को जितना दिया, उससे ज्यादा लिया।

उनमें ज्यादातर वैसे लेखक थे, जिनकी अपनी ही दुनिया सेक्स और अश्लीलता के इर्द-गिर्द सिमटी हुई थी। इस संबंध में एक महत्त्वपूर्ण दृष्टांत है, फ्रेंच कला समीक्षक और लेखक गिलायूम एपोलीनायर का। 1901 से 1905 के बीच जब पिकासो पेरिस में पैर जमाने की कोशिश कर रहे थे, उसी दौरान उनका एपोलीनायर से परिचय हुआ। एपोलीनायर का उस समय पेरिस के अखबारों में ऐसा दबदबा था कि सभी प्रमुख अखबार कला और साहित्य पर उन्हीं की समीक्षा कॉलम छापते थे। सेक्स और हिंसा पर लिखने-पढ़ने का दौर था। कवि, लेखक, कलाकार सब एपोलीनायर से समीक्षा लिखवाने को लालायित रहते थे। एपोलीनायर को ऐसे नए कलाकारों की तलाश रहती थी, जिनमें नयापन और विशिष्टता हो। उनको अपना मार्केट कायम रखना था और उसके लिए जरूरी था कि हर स्तंभ की रोचकता बनी रहे।

उसी क्रम में एपोलीनायर की मुलाकात युवा पिकासो से हुई, जो शीघ्र चर्चित होने के लिए कुछ भी करने को तैयार थे। पेरिस आने के तुरंत बाद पिकासो का सबसे पहले जिनसे परिचय हुआ, वे थे, उस समय के अग्रणी कवि, कलाकार मैकस जैकब। उन्हीं से पिकासो ने फ्रेंच बोलना सीखा और इसमें अपनी मातृभाषा स्पेनिश की तरह दक्षता हासिल की। एक बाहरी व्यक्ति के धाराप्रवाह फ्रेंच बोलने से ज्यादा पोलीनायर उसकी ऊँची उड़ानवाली महत्त्वाकांक्षा से प्रभावित हुए। एपोलीनायर से परिचय कराते वक्त जैकब ने पिकासो की पेंटिंग के भाव और प्रकृति के बारे में बता दिया था। थोड़ी सी अंतरंगता स्थापित करने के बाद अनुभवी कला समीक्षक ने पिकासो के अंदर मच रहे तूफान की गति को तीव्र किया। आधुनिकतावाद के एक सफल संवाहक एपोलीनायर ने पिकासो की प्रतिभा को सेक्स और हिंसा की ओर मोड़ा। उन्होंने वैसी पेंटिंग के लिए पिकासो को उकसाया, जिसमें आकर्षण भी था और भोंड़ापन भी। पिकासो की पेंटिंग हाथोहाथ बिकनी शुरू हो गई। रातोरात उन्हें वो प्रसिद्धि मिल गई, जो पेरिस में पैदा हुए खुद को पेरिसियन कहकर गर्व महसूस करनेवाले लेखकों, कलाकारों को नहीं मिल पाई थी। हर अखबार में पिकासो छाए रहते थे।

1901 से 1907 तक ही पिकासो ने धमाल मचा दिया, लेकिन हर पेंटिंग में दर्शकों का सेक्स खोजना और वैसी अभिव्यक्तियों की ज्यादा तारीफ पिकासो को

अच्छी नहीं लगी। वैसी पेंटिंग की चर्चा कम हुई या नहीं के बराबर हुई, जिसमें पिकासो ने अस्त-व्यस्त समाज की असली तसवीर खींची और चीखती-कराहती मानवता का दर्द बयाँ किया था। पिकासो अपने प्रशंसकों से चिढ़ गए और एक प्रकार से घृणा करने लगे, जो उनकी हर पेंटिंग को अनावश्यक रूप से मास्टरपीस करार देते थे। फिर पिकासो से यह अपेक्षा रखते थे कि वे उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करें! उनमें एपीलोनायर भी शामिल थे। उसके बाद पिकासो अपने एजेंडे पर आ गए।

पिकासो की तो लेखनी में भी तूलिका जैसी ताकत थी। एपोलीनायर स्वयं कवि और उपन्यासकार भी थे। उन्हें पिकासो को परखने में देर क्यों लगती? एपोलीनायर ने अश्लील कथानक पर आधारित अपने उपन्यास 'लेस ओन्ज मिलीवर्जेस' की मूल पांडुलिपि पिकासो को उपहारस्वरूप पढ़ने को दी। उपन्यास के पात्रों के संवाद में अश्लीलता को उभारा गया था। 1907 में वो उपन्यास और उसके भावों को चित्रित करनेवाली पिकासो की पेंटिंग साथ-साथ बाजार में आई। उस समय तक पिकासो इतने मशहूर हो चुके थे कि उपन्यास से ज्यादा उस पर बनी उनकी पेंटिंग बिकीं। पैसा, नाम और शोहरत किसे अच्छा नहीं लगता! पिकासो इसके अपवाद नहीं थे।

पिकासो को जितनी कम उम्र में उम्मीद से ज्यादा प्रसिद्धि मिली, वैसी खुशनसीबी गिने-चुने कलाकारों को मिली है। अखबार, मीडिया, पब्लिसिटी की दुनिया से वे परिचित थे। पिकासो एक हाथ में पेंटर की तूलिका और दूसरे हाथ में पत्रकार की कलम लिये पैदा हुए थे। 1891 में 10 साल की उम्र में पाब्लो ने अपने कला प्रशिक्षक (आर्ट टीचर) पिता की अधूरी पेंटिंग पूरी करने की क्षमता हासिल कर ली थी। 13 साल की आयु में पाब्लो ने बार्सिलोना की पत्र-पत्रिकाओं में लिखना और अपनी पत्रिका निकालनी शुरू कर दी। कला की नई-नई विधाओं के जन्मदाता पिकासो ने छापने की भी एक नई कला का आविष्कार किया और लिथो छपाई की अभिनव तकनीक विकसित की। उन्हें 'प्रिंटमेकर' भी कहा जाता है।

लेकिन शुरुआत से लेकर सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचने के समय तक पिकासो अपने आप में डूबे रहे। बहुत कम बोलते थे, ज्यादा कुरेदने पर चिढ़ जाते थे। काम के बारे में यदा-कदा पिकासो के मुँह से कुछ निकल भी जाता था, लेकिन अपने बारे में और खासकर अपनी निजी जिंदगी के विषय में इतने रिजर्व रहते थे कि उनके अजीज-से-अजीज दोस्त भी पिकासो को समझ नहीं पाए। यहाँ

तक कि पिकासो की प्रेमिकाएँ भी नहीं समझ पाईं कि उस विचित्र प्रेमी के दिल में क्या हो रहा है? दरअसल वे महिला को ही शब्द बनाकर अपना दर्द अपनी छवि बना-बनाकर बयाँ करते रहे।

पिकासो की हर मूर्ति, हर पेंटिंग उनके मानसिक उथल-पुथल की परिचायक हैं। गंभीर भावों की अभिव्यक्तिवाले पिकासो के चित्रों की सराहना जरूर हुई, लेकिन वैसे चित्र ज्यादा बिके, जिसमें नारी देह को ऊटपटाँग तरीके से पेश किया गया, लेकिन मृत्यु, हादसा और अवसाद की रेखाओं को पिकासो माथे पर नहीं उभरने देते थे। वे उनके मस्तिष्क के अंदर से निकलकर चित्रों और मूर्तियों में उभर जाती थीं।

आज तक कला समीक्षक पिकासो के चित्रों के बारे में किसी निश्चित नतीजे पर नहीं पहुँच पाए कि वे वास्तव में कहना क्या चाहते थे? पिकासो के चित्रों का वास्तविक अर्थ मानव विज्ञानियों और गणितज्ञों के लिए भी शोध का विषय रहा। दुनिया भर में उनके चित्रों को लेकर हंगामा होता रहा, टीका-टिप्पणियाँ चलती रहीं और पिकासो सबको अनसुना करते हुए अपनी दुनिया में लीन रहे।

सभी विश्लेषकों ने अपनी-अपनी रुचि और मानसिकता के हिसाब से पिकासो के विषय में धारणा बनाई। ऐसे टिप्पणीकार कम हुए, जिन्होंने पिकासो की कलाकृतियों की गहराई में जाकर कलम चलाई हो। जैसी पेंटिंग और मूर्तियों का अर्थ रहस्यपूर्ण तथा किसी सामान्य व्यक्तियों की कल्पनाओं के परे है, उसे रहस्य ही बने रहने दिया गया। पिकासो भी उसे अपने साथ लिये चले गए। अधेड़ उम्र में जब कविता लिखने के लिए कलम उठाई, तब भी खुद को नेपथ्य में रखकर पाठकों से रू-ब-रू होते रहे, लेकिन उन्होंने किसी को भी अपने तक नहीं पहुँचने दिया।

'क्यूबिक आर्ट' पिकासो की उत्कृष्ट और गंभीर भाववाली कलाकृतियों में गिनी गईं; क्योंकि अधिकांश समीक्षक इसका असली अर्थ समझने की माथापच्ची में नहीं पड़े।

इसमें ज्यामितिक रेखाओं के माध्यम से पिकासो ने मानव मस्तिष्क की विकृति उकेरी है। उसे देख गणित पढ़ने/पढ़ानेवाले अचंभे में पड़ गए, जो ज्यामिति (ज्योमेट्री) में वर्ग, वृत्त, त्रिभुज, चतुर्भुज और कोण बनाते हैं। मूर्ति और शिल्पकला में 'क्यूबिक स्टाइल' पिकासो का बिल्कुल मौलिक और अभिनव प्रयोग था। वे सारे अमूर्त और विश्लेषणात्मक थे। पिकासो का स्वभाव कैबेरेट, डांस क्लब,

कैफेटेरिया, थिएटर, जैसे मनोरंजन और मस्ती के लिए जुटनेवाली भीड़ में घुलने-मिलने का था। कला की तरह अपनी अंतरंगता भी वे खुलकर व्यक्त नहीं करते थे, लेकिन उसका बिछोह उन्हें इतना क्लेश पहुँचाता था कि उसकी मूर्ति और पेंटिंग बनाकर वो कमी दूर करते थे।

'लिस डीमोइसेलेस डी एविग्नोन' पेंटिंग ने पिकासो को हंगामेदार बनाया, लेकिन 'क्यूबिक आर्ट' ने उन्हें विश्व स्तर पर स्थापित किया।

1910 में बनाई गई कोनव्हीलर और वोलार्ड की तसवीर, 1925 में तीन डांसर की तसवीर और उससे पहले कई महिलाओं को एक-दूसरे से गुत्थम-गुत्थी करनेवाली पेंटिंग में पिकासो ने अपनी प्रतिभा का चमत्कार दिखाया।

1904 में जब पिकासो पेरिस में बसने के लिए गए, तो उनका परिचय अपनी फैन फर्नान्डी ओलिवियर से हुआ। वही उनकी पहली मिस्ट्रेस बनी। 'रोज पीरियड' के नाम से मशहूर पिकासो की अधिकांश पेंटिंग 1904 से 1906 के बीच की हैं। यह पेरिस में पिकासो के तेजी से उत्थान की ओर लगातार बढ़ते रहने का समय था। इसे 'गुलाबी काल' भी कहा जा सकता है; क्योंकि यह पिकासो के पहले प्रेम का समय था, जब उनके कला-कौशल की दीवानी ओलिवियर उन पर जान छिड़कती थी। उस समय की लगभग सभी मूर्तियाँ और पेंटिंग्स पिकासो की ओलिवियर से प्रगाढ़ता की कहानी बताती हैं।

पिकासो की इस समय की पेंटिंग खरीदने के लिए अमेरिका और इंग्लैंड से कलाप्रेमी भागे-भागे आए। 'रोज पीरियड' की सारी पेंटिंग में ओलिवियर छाई हुई थी। वहाँ के अखबारों में वैसी पेंटिंग को 'पिकासो और उनकी मिस्ट्रेस' हेडिंग देकर छापा जाता था।

जर्मनी के सबसे बड़े आर्ट डीलर और कला के इतिहासकार डैनियल-हेनरी कॉन्वेलर, अमेरिका के स्थापित आर्ट डीलर लियो तथा जेत्रूद स्टेन जैसे बड़े-बड़े पेंटिंग सौदागर अपने-अपने यहाँ प्रदर्शनी आयोजित करने के लिए कई दिनों तक पिकासो के पीछे-पीछे घूमते रहे। रिचर्डसन का कहना है कि ये लोग वैसे आर्ट डीलर थे, जिनसे मिलने के लिए बड़े-बड़े कलाकार लालायित रहते थे। इनके द्वारा प्रदर्शनी आयोजित होने का मतलब था—अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चित हो जाना।

लेकिन पिकासो ने, ठीक महिलाओं की तरह, इन्हें भी ज्यादा लिफ्ट नहीं दी, लेकिन एक बार जिससे परिचय हो गया, उसे पिकासो ने दिल में बसा लिया। वो उनकी पेंटिंग का पात्र बन जाता था।

पिकासो जीवन भर आलोचनाओं और प्रतिकूल टिप्पणियों के शिकार रहे, लेकिन अपना काम करते रहे। अपनी निंदा और अपने बारे में विपरीत प्रतिक्रियाओं ने पिकासो को प्रतिक्रियावादी बना दिया। उसी रास्ते पर चलते हुए वे महानता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचे।

पिकासो ने सामाजिक जीवन के हर पहलू के अंदर बारीकी से झाँका। मानव मन की विद्रूपता का उन्होंने इतना सटीक चित्रण किया कि पेंटिंग पर नजर गड़ानेवाले की चेतना को झिंझोड़ दे। वे आलोचना से कभी दुःखी नहीं हुए, उसी की बदौलत तो पिकासो लगातार छलाँग लगाते चले गए। पिकासो जानते थे कि प्रशंसा अल्पकालिक होती है, इसलिए उसका असर भी थोड़े ही समय तक रहता है, लेकिन निंदा लंबे समय तक चलती है, इसलिए उसका प्रभाव भी देर तक रहता है; क्योंकि निंदा करने में लोगों को मजा मिलता है और वैसे प्रसंगों की चर्चा बार-बार होती है।

दृढ़ और मजबूत मनोबलवाले पिकासो ने मनुष्य की इस कमजोरी का भरपूर लाभ उठाया। पिकासो बार-बार वैसी पेंटिंग करते रहे, जिसको लेकर हंगामा हुआ। 1907 की 'लिस डीमोइसेलेस डी एविग्नोन' और 1937 की 'गुएर्निका' पिकासो की महानतम कलाकृतियों में गिनी जाती हैं। इस श्रेणी की सारी पेंटिंग को लेकर जबरदस्त बवाल मचा। सारे कलाप्रेमी और चहेते पिकासो से चिढ़ गए। अमेरिका और अन्य यूरोपीय देशों के आर्ट डीलरों ने एक प्रकार से पिकासो को बहिष्कृत करने का असफल प्रयास किया।

क्लबों/कॉफी हाउसों में वैसी पेंटिंग को ऐसे लोग 'असभ्य', 'भोंड़ा' बताते थे और खरीदकर अपने घर भी ले जाते थे। इस बात से गर्व भी महसूस करते थे कि पिकासो जैसे चर्चित कलाकार की पेंटिंग उनके घर में है। उन लोगों में पिकासो के वैसे कवि, लेखक, मित्र भी थे, जो पिकासो की वजह से फ्रांस के अन्य इलाकों से आकर पेरिस में रहने लगे। उनमें अमेरिका के पेंटिंग संग्रहकर्ता जेत्रूद स्टेन, मनोवैज्ञानिक और कवि आंद्रे ब्रेटन, अल्फ्रेड जेरी के अलावा एपोलीनायर भी थे। कवि और लेखक एपोलीनायर के बारे में हम जान चुके हैं कि किस प्रकार उन्होंने अश्लीलता पर आधारित अपनी किताब युवा पिकासो के अंदर वैसी भावना जगाकर उनकी पेंटिंग का बिल्ला लगाकर बेची।

पिकासो के पास सहेजकर रखी मोनालिसा की पेंटिंग चुराने के संदेह में एपोलीनायर 1911 में गिरफ्तार किए गए। रेनेसाँ (पुनर्जागरण) युग के इटली के

सर्वश्रेष्ठ पेंटर/कलाकार लिओनार्दो दा विंची की महानतम कृति मोनालिसा मानी जाती है। 16वीं सदी की देवी मोनालिसा उस समय से सभी कलाकारों के दिलों पर राज करती रही हैं। पाब्लो पिकासो ने भी इसकी पेंटिंग अपने हिसाब से बनाई थी। इंजीनियर से कलाकार बने डॉ. विंची से प्रेरित होकर पिकासो की पेंटिंग में 'क्यूबिज्म' का प्रयोग माना जाता है।

वैसे दिनों में भी मस्तमौला पिकासो कमरे में बंद रहने के बजाय उन्हीं स्थानों पर बैठकी जमाते थे, जहाँ आलोचक, कवि, लेखक, पेंटर मंडली का जमावड़ा रहता था।

एकमात्र कलाप्रेमी और आर्ट डीलर थे डैनियल-हेनरी कॉन्वेलर, जिन्होंने पिकासो का साथ नहीं छोड़ा। उनकी देखा-देखी जर्मनी के ही वोलार्ड भी पिकासो के हितैषी बने रहे। कॉन्वेलर के बारे में कुछ अमेरिकी कला संग्राहकों का कहना है कि पिकासो का जर्मनी के प्रति नरम रवैया होने के कारण वे उनकी विवादास्पद पेंटिंग की भी प्रदर्शनी आयोजित करते रहते थे। फ्रांस के लेखकों ने भी ऐसे आरोपों को हवा दी।

दरअसल, बात यह थी कि 1937 में दूसरे विश्वयुद्ध के बादल आकाश में मँडरा रहे थे और पूरी दुनिया इस भय तथा आतंक में डूबी थी कि युद्ध अवश्यंभावी है। उस वक्त यूरोप की धरती पर पिकासो ने धूम मचा रखी थी। 1937 की मास्टरपीस 'गुएर्निका' पेंटिंग में नारी सौंदर्य नहीं है। युद्ध की आशंका से दहशतजदा नारियों का डर और आँखों के सामने चौंधियाते विनाश का विकराल रूप उस पेंटिंग में सामने आया है। मानव कंकाल को पिकासो ने चीखते-छटपटाते दिखाया है।

यह देखकर दर्शकों को आनंद नहीं मिलता था। उलटे आँखों के सामने मुँह फाड़े चीखती-छटपटाती औरत नजर आती थी और लोग सिहर उठते थे। निश्चित मौत को भी परे धकेलने और झूठलाने का प्रयास उन्हें पिकासो के अस्तित्व को व्यर्थ नकारने को उकसाता था। पेंटिंग और कला की अन्य विधाओं में ऐसे विषयों का समावेश उनके लिए दिमागी खराबी/फितूर थे।

संयोग कुछ ऐसा रहा कि प्रथम विश्वयुद्ध से पहले पिकासो 'की लिस डेमोइसेलेस डी एविग्नोन' पेंटिंग चर्चा में रही। 1907-1909 की अवधि में यह पेंटिंग सुर्खियों में आई। इसे पिकासो कला इतिहास के अफ्रीका प्रभावित काल की उपलब्धि कहा जाता है। 1907 में ही पिकासो ने एक आर्ट गैलरी ज्वाइन की, जो जर्मनी के डैनियल-हेनरी कॉन्वेलर ने ही पेरिस में खोली थी। कला इतिहासकार

कॉन्वेलर ने अपनी किताब में लिखा है—'पिकासो की पेंटिंग में ग्राफिक डिजाइन समेत सभी कृतियों में दुनिया भर की प्राचीन व आधुनिक कला और संस्कृति की छाप मिलती है। वे जहाँ रहे, जिन लोगों से मिले और जिस सामाजिक परिवेश में रहे, उसमें रम गए, उसे मन में बसा लिया और कलाकृति में दर्ज कर हमेशा के लिए अपने पास रख लिया। परिचितों और चाहनेवालों को याद रखने के लिए पिकासो की पेंटिंग ही उनकी डायरी या नोटबुक थी। जिन साहित्यकारों के बीच पिकासो का उठना-बैठना था, उनके संसर्ग का प्रभाव भी पिकासो की पेंटिंग और कविताओं पर है। बैले डांस कार्यक्रमों के संचालन के दौरान, जो डांसर पिकासो की फैन हुईं, उन्हें भी मरणोपरांत पिकासो ने अपनी पेंटिंग में जीवित रखा। 20वीं सदी को पिकासो कला और संस्कृति का युग यों ही नहीं कहा जाता। पिकासो के बिना कला का इतिहास लिखा ही नहीं जा सकता।'

'लिस डीमोइसेलेस डी एविग्नोन' पेंटिंग को विवादों के बावजूद फ्रांस और अमेरिका के प्रसिद्ध कला संग्रहालयों में पहुँचानेवाले कॉन्वेलर ने जर्मनी को लेकर उठे बवाल पर भी अपनी सफाई में कहा, 'ऐसी पेंटिंग की लोकप्रियता का असली कारण था, इस पर अफ्रीकी कला और संस्कृति का प्रभाव, जिसमें भूख व युद्ध से तड़पती मानवता का खौफनाक चित्रण है। साथ में अफ्रीकियों के सामाजिक जीवन की भी अजीबोगरीब झाँकी है।'

इसका राजनीतिक हालातों से कोई सरोकार नहीं है। जो पिकासो जर्मन आधिपत्य के समय पेरिस में जमे रहे, वही पिकासो अपने देश स्पेन में फ्रैंको के फासीवादी शासन से बहुत पीड़ित महसूस कर रहे थे। जर्मनी के हिटलर और इटली के मुसोलिनी की नीतियाँ अपनाकर फ्रैंको ने स्पेन को तहस-नहस कर दिया। अपने देश की हालत जानकर पिकासो ने बार्सिलोना पहुँचकर लोगों को जागरूक किया।

पिकासो की भावना उजागर करनेवाली उनकी सर्वोत्कृष्ट कलाकृति आज भी बार्सिलोना में लोगों के लिए प्रेरणास्रोत है। बार्सिलोना में केटेलोनिया प्रांत के मुख्य चौराहे पर मौजूद पिकासो की विशाल कलाकृति आज भी उनकी 'अमर चित्र कथा' बनी हुई है। 'घोड़े का नेतृत्व करता लड़का' (1905) शीर्षक की यह मार्बल मूर्ति पिकासो को ऊँचाई की बुलंदी पर पहुँचानेवाली 'रोज पीरियड' की सबसे ज्यादा चर्चित मास्टरपीस मानी जाती है। यह शिल्प, रचना, कला और अभिव्यक्ति की दृष्टि से बेजोड़ है ही, साथ में इतनी सारी विविधताएँ अपने अंदर समेटे हुए है कि दूसरी शताब्दी में भी अपने-अपने ढंग से व्याख्याएँ जारी हैं।

लेकिन सबसे बड़ा संदेश, जो पिकासो ने इस मूर्ति के जरिए अपने देश और दुनिया के लोगों को दिया, वो है—जनतांत्रिक अधिकारों के दमन के खिलाफ आवाज उठानेवालों का हौसला बुलंद करना।

स्पेन के हर प्रांत के लोग इस 21वीं सदी में भी पूर्ण लोकतंत्र से वंचित हैं। खासकर बार्सिलोना की जनता आज भी असमानता और भेदभावपूर्ण रवैए की शिकार है। पिकासो के समय में भी और आज भी बार्सिलोना का केटेलोनिया क्षेत्र समृद्ध सूबों में गिना जाता रहा है।

नवंबर 2014 में यहाँ के लोगों ने लोकतांत्रिक अधिकार और आजादी की माँग को लेकर केटेलोनिया एक्वायर पर ही झंडा गाड़ा। हजारों की संख्या में प्रदर्शनकारी इस चौराहे पर 'घोड़े' के नीचे जुटे। इसे 'पिकासो एक्वायर' भी कहा जाता है। इस मूर्ति में घोड़े को विजय रेस का प्रतीक माना गया है और जोश से भरा युवक बिना लगाम या रस्सी के ही घोड़े की कमान थामे हुए है। जैसा पिकासो ने अपनी इस मूर्तिकला का नाम रखा है—'घोड़े का नेतृत्व करता लड़का', ठीक वैसे ही लड़का घोड़े पर सवार नहीं है।

वो लड़का घोड़े को बाल पकड़कर खींचते हुए लिये जा रहा है और बिना लगाम के ही घोड़ा पूरी तरह उसके काबू में है। एक ही साथ दमनकारियों के घोड़े को रौंदने और उसे अपने काबू में करके विजय पताकावाले घोड़े में तब्दील करनेवाली अभिव्यक्ति इस कृति में है। घोड़े को खींचते हुए तबेले की ओर ले जाने का डंका यह ऐतिहासिक कलाकृति बजा रही है। नए प्रयोग, नए स्टाइल के शौकीन पिकासो ने इसमें प्राचीन यूनानी और आधुनिक कला का ऐसा अद्‌भुत सम्मिश्रण किया, जिसमें सारे आर्ट डीलर उलझे रहे। जिस अनुपात में मूर्ति पर विवाद बढ़ा, उसी अनुपात में उसकी कीमत बढ़ी।

सबसे बड़ी बात यह है कि घोड़े का नेतृत्व करनेवाला लड़का नंगा है और उसकी आँखों से चिनगारी निकल रही हैं, भुजाएँ फड़क रही हैं। वह 'अतिसभ्य' बनने के बाद पश्चिम में कुछ वर्ष पूर्व उपजी असभ्य हिप्पी संस्कृति अपनानेवालों की तरह मौज-मस्ती के लिए निर्वस्त्र नहीं हुआ है। एक नई पुनर्जागरण (रेनेसाँ) संस्कृति का नारा देनेवाला घोड़े के साथ खड़ा युवक आर्थिक शोषण के कारण किल्लत और भूखे-नंगे रहने को मजबूर गरीब, मेहनतकशों का प्रतीक है। लड़के का एक पैर देश के दबे-कुचले लोगों की उजड़ी बस्तियों की ओर उठा है।

यह कलाकृति 1905 की बनी हुई है और लगभग सभी जाने-माने कलाप्रेमियों

की राय में बेलगाम घोड़े को अपनी कमान में रखनेवाला वो युवक स्वयं ठिगना पिकासो है। उस समय फासीवाद के खेत बंजर थे। प्रथम विश्वयुद्ध के समय खेत तैयार हुआ और फासीवाद के बीज बोए गए। प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त होते-होते फासीवाद अंकुरित हुआ और दस साल में इतनी तेजी से इसके आतंकी पेड़ फैले कि दूसरे विश्वयुद्ध की नौबत आ गई।

पिकासो कम बोलते थे और उन्होंने आधी से ज्यादा उम्र गुजर जाने के बाद अभिव्यक्ति का माध्यम कलम को अपनाया। अपने बारे में होनेवाली अनर्गल बातों को भी कभी अनर्गल नहीं कहा। चुपचाप सुनते-देखते जग का मुजरा लेते रहे और अपने मतलब का सिद्धांत 'जैसी बहे बयार, पीठ तब तैसी कीजे' नहीं अपनाया। जो कुछ भी बेतुका या अनर्गल पिकासो के मन में आता था, उसे वे घुमड़ते रहने के लिए नहीं छोड़ते थे। वैसे शब्दों को तोड़-मरोड़कर अपनी तूलिका और रंगों में उतारकर चित्रों में वाक्य बनने छोड़ देते थे। एक बेतुकी के जवाब में दूसरी बेतुकी तैयार रहती थी।

किसी भी कला समीक्षक की अनुकूल या प्रतिकूल टिप्पणियों की परवाह किए बगैर पिकासो अपने काम में जुटे रहे। जिन नए प्रयोगों को शुरू में कलाप्रेमियों ने स्वीकार नहीं किया, वही बाद में कला का 'नया पिकासो सिद्धांत/वाद' कहलाया; क्योंकि जिस तरह की विचित्र अभिव्यक्ति पिकासो के चित्रों और मूर्तियों में होती थी, वैसा उनसे पहले किसी ने किया नहीं था। जैसे उनके चित्रों के बारे में किसी निष्कर्ष पर पहुँचना कला समीक्षकों और कला इतिहासकारों के लिए कठिन होता था, ठीक उसी तरह का अव्यवस्थित पिकासो का व्यक्तित्व तथा स्वभाव भी था।

उनके बचपन से लेकर बुढ़ापे तक की जिदंगी के बारे में पिकासो के हर जीवनीकार की किताब में एक बात सामान्य रूप में मिलती है कि मटरगश्ती और घुमक्कड़ी में ही पिकासो का ज्यादा समय गुजरता था। किशोर उम्र से ही उन्हें सरकस, क्लब, कैबेरेट और मौज-मस्ती की लत लग गई थी। उन्हीं स्थानों पर पिकासो अपनी कला का विषय तलाशते थे, लेकिन इस बिंदु पर किसी ने ज्यादा गौर नहीं किया कि जिस कलाकार को एक दिन भी क्लब गए बिना चैन नहीं आता था, वही कई-कई दिन घर या बाहर नजर क्यों नहीं आता था?

रिचर्डसन ने पिकासो पर कई किताबें लिखी हैं, लेकिन वे पिकासो की वैसी कलाकृतियों की गहराई में नहीं गए, जो आज तक कला समीक्षकों के लिए शोध का विषय बना हुआ है। पिकासो के पोते बर्नार्ड पिकासो की सहायता से रिचर्डसन

ने इस महान् कलाकार के जन्मस्थान मलागा में उनकी कलाकृतियों का एक संग्रहालय स्थापित किया है। रिचर्डसन ने 'रॉकफेलर फाउंडेशन' और मर्सीडीज समेत यूरोप के कई कलाप्रेमियों की मदद से एक 'पिकासो शोध केंद्र' भी खोला है। अभी समूचे यूरोप में अपने दादा को चर्चित बनाए रखने का बीड़ा बर्नार्ड पिकासो ने उठाया हुआ है। उनके सौजन्य से पिकासो के चित्रों और मूर्तियों की प्रदर्शनी आयोजित होती रहती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लोगों ने पिकासो को कवि के रूप में जाना, इसका श्रेय बर्नार्ड की पत्नी आल्मीन और उनकी माँ क्रिस्टीन को जाता है।

पिकासो की अंतिम पत्नी जैकलीन की मदद से रिचर्डसन को 'पिकासो शोध केंद्र' स्थापित करने में सहूलियत हुई। यह पेरिस में उसी जगह है, जहाँ पिकासो ने अंतिम साँस ली।

जैकलीन से पहले 1943 में पिकासो की प्रेमिका और फिर पत्नी बनी फ्रैंकोइस गिलट स्वयं एक प्रतिभाशाली पेंटर थी। पिकासो की मूर्तियों में भी एक विशिष्ट प्रकार की खूबी ने फ्रैंकोइस को पिकासो का फैन बना दिया। पिकासो ने अन्य प्रेमिकाओं की तरह फ्रैंकोइस को भी ज्यादा अपने नजदीक नहीं होने दिया। फ्रैंकोइस से पिकासो के तीन बच्चे हुए और पिकासो ने फ्रैंकोइस से दूरी बनाए रखी, लेकिन फ्रैंकोइस ने हमेशा अपने को पिकासो के निकट समझा।

दूसरे विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि तैयार होने के समय पिकासो और फ्रैंकोइस की मुलाकात हुई। आदतन पिकासो का जितनी जल्दी किसी से प्रेम होता था, उतनी ही जल्दी वे उससे किनारा करने की तैयारी में जुट जाते थे।

दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति (1945) के चार साल बाद तक फ्रैंकोइस पिकासो के चार बच्चों की माँ बन चुकी थी। निजी जीवन में भी बेतुके पिकासो के विचित्र व्यवहार ने फ्रैंकोइस गिलट को महसूस नहीं होने दिया कि पिकासो उनके प्रेमी, पति और उनके चार बच्चों के पिता थे। पिकासो फ्रैंकोइस से ऊबकर नई 'मिस्ट्रेस' को जरूर तलाश रहे थे। मगर 1943 से लेकर 1949 तक के छह साल पिकासो के कलाकार जीवन का सबसे विवादास्पद और उतार-चढ़ावों का काल था। दूसरे विश्वयुद्ध से पहले और उसके बाद पिकासो के राजनीतिक संपर्क से लेकर पेंटिंग, मूर्तियाँ सबको लेकर हंगामा मच गया। यूरोप के कला समीक्षक अपने-अपने देशों की नीतियों के हिसाब से गड़े मुर्दे उखाड़ने लगे। यहाँ तक कि 1904 और 1906 के 'ब्लू पीरियड' और 'रोज पीरियड' की पेंटिंग भी नए सिरे से चर्चा में आ गईं, जिसकी बदौलत पिकासो विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित हुए।

चर्चा में हमेशा बने रहना पिकासो का शौक था। इसके लिए वे अपनी हर कृति में कुछ-न-कुछ ऐसा पुट डाल देते थे, ताकि लोग चर्चा करें—चाहे वो सकारात्मक हो या नकारात्मक। संयोग से पिकासो नकारात्मक चर्चाओं में ही ज्यादा रहे।

इस आँधी ने पिकासो के जिन गंभीर और रहस्यमय कामों को बहा दिया, उसे वापस लाने में जैकलीन तथा फ्रैंकोइस के संयुक्त प्रयास से पिकासो के संबंध में कई महत्त्वपूर्ण जानकारी सामने आईं।

ऐसा कमाल का विवरण बहुत कम महान् कलाकारों के विषय में मिलता है। रूस की बोल्शेविक क्रांति के साथ ही पिकासो की प्रेम-क्रांति भी शुरू होती है। थिएटर और बैले कलाकार के रूप में पिकासो की हीरोइन रूसी डांसर ओल्गा कोकलोवा से एक पुत्र (पाओलो) होने के बाद वैवाहिक संबंध में थोड़ा सा खिंचाव आते ही पिकासो के जीवन में ओल्गा की जगह मेरी थीरेसी वाल्टर ने ले ली थी। उससे जब एक पुत्री माया ब्रिडमेयर पिकासो हुई, तो थोड़ी राहत पहुँचाने फ्रैंकोइस गिलट फिर से आ गई।

पिकासो की हर मूर्ति और पेंटिंग में भी तनाव के साथ-साथ खिंचाव है। पूरी तरह यह अंदाजा लगाना अभी तक संभव नहीं हो पाया है कि उस पेंटिंग या मूर्ति का चेहरा क्या कहता है और पूरे शरीर की बनावट से कौन सा भाव निकलता है? क्योंकि बहुचर्चित अधिकांश 'क्यूबिक पेंटिंग' में तो स्पष्ट पता नहीं चलता है कि कलाकार वास्तव में कहना क्या चाहता है?

1932 की पेंटिंग 'हेड ऑफ ए वुमेन' (एक औरत का माथा) के बारे में कला समीक्षक तय नहीं कर पाए कि वो माथा कैसी और किस देश या जाति की औरत का है? उसे अफ्रीका की आदिवासी जनजाति से जोड़ा गया। प्रेमिकाओं के नामवाली पेंटिंग में भी अगर नाम नहीं होता तो कला समीक्षक सोचते ही रह जाते।

सबसे ज्यादा अचंभे में डालनेवाली पिकासो की वो पेंटिंग और मूर्तियाँ हैं, जो उन्होंने अफ्रीकी कला से प्रभावित होने के बाद बनाई हैं। उनमें वहाँ की प्राचीन आदिम युग जैसी जिंदगी जीनेवाले आदिवासियों और जनजातियों के जीवन तथा संस्कृति की झलक मिलती है। उन मूर्तियों के विषय में मोटे तौर पर किए गए आकलन से इतना पता चलता है कि यह अफ्रीकी कला का प्रभाव है। पिकासो की कई कलाकृतियों में प्राचीन यूनानी और जापानी कला की छाप है। मगर यह प्राचीन कलाओं की न तो नकल है, न अनुकरण। पिकासो सीखने के दौर में उससे प्रेरित हुए और जीवन भर उसे अपने प्रेरणास्रोत के रूप में सँजोए रहे।

कला के अपने मौलिक कथानक पर प्राचीन कला का लेप चढ़ाकर पिकासो ने उसे बोधगम्य नहीं रहने दिया। उसे दुरूह और गंभीर मानने के बजाय कला समीक्षकों ने पिकासो के व्यक्तित्व और सामाजिक जीवन के विवादों से जोड़कर हल्के ढंग से लिया।

आधुनिक कला के इतिहास में पिकासो आर्ट और पिकासो युग अध्याय के साथ फ्रांस का नाम जुड़ना कोई बहुत बड़ी उपलब्धि नहीं थी। इस महान् उपलब्धि की सबसे बड़ी विशेषता थी कि पिकासो प्राचीन परंपराओं और रीति-रिवाजों को साथ लेकर चले, जिसका सबसे ज्यादा असर कला तथा संस्कृति पर पड़ा। जिस समय पिकासो अपनी किस्मत आजमाने पेरिस पहुँचे थे, उस वक्त प्राचीनता को 'आउट ऑफ डेट' या अप्रासंगिक बताकर कलाकार और लेखक मॉडर्न आर्ट को दिग्भ्रमित स्थिति में रखे हुए थे। न वे प्राचीन को छोड़ पा रहे थे और न आधुनिक की परिभाषा तय कर पा रहे थे।

पिकासो पहले कलाकार साबित हुए, जिन्होंने पेरिस में मॉडर्न आर्ट की एक नई लहर चलाई, जो बाद में चलकर विश्वव्यापी हुई। प्राचीन और आधुनिक कला का संगम स्थापित करने के लिए पिकासो उन लोगों के बीच जाकर रहे, जो सभ्य और सुसंस्कृत कहलानेवाले 'मॉडर्न सोसाइटी' से काफी दूर रहते थे। इतना ही नहीं, आदिवासी समुदाय के वे लोग सामान्य जनजीवन से अलग-थलग और आधुनिक चकाचौंधवालों की पहुँच से परे, सुदूर निर्जन स्थानों में एक ही स्थान पर स्थायी रूप से रहना पसंद करते थे। पिकासो के समय में ही आदिम मानव की वो प्रजातियाँ विलुप्त होनी शुरू हो गई थीं और अब तो लगभग विलुप्त हो चुकी हैं। उनके रहन-सहन का ढंग रूढ़िवादी अंधविश्वास पर टिकी प्राचीन परंपराओं के अनुसार चलता था। उनके शरीर की बनावट विचित्र प्रकार की होती थी। विशाल, कुरूप, कहीं पिचकी, कहीं उठी, कहीं टेढ़ी खोपड़ी, बड़े-बड़े, लंबे-लंबे, ऊपर की ओर उठे हाथ, आँखें किसी की बाहर निकली हुईं, किसी की अंदर धँसी हुईं, अर्थात् मानव आकृति का ऐसा ढाँचा रेखांकित किया कि मानवशास्त्री और शरीर रचना विज्ञानी सब-के-सब सकते में आ गए।

व्यक्तिगत जीवन की तरह ही पिकासो की पेंटिंग और मूर्तिकला की जिंदगी में भी शुरू से अंत तक औरतों का ही वर्चस्व है। औरत के जिस रूप को पिकासो ने अपनी मूर्ति में उकेरा, उसे शिल्पकला का 'आधुनिक पुनर्जागरण काल' कहा जाता है। इसमें औरत का जानवर की तरह चेहरा है, आँखें एक ही तरह हैं, माथा बहुत

छोटा है और दो नाक दो दिशाओं में निकली हुई हैं। सारी आकृतियाँ भावविहीन, मूक और बेतरतीब तरीके से बेढब बनाई गई हैं।

उसी कड़ी में क्यूबिक आर्ट भी जुड़ गई, जो ज्यामितिक स्टाइल में बनी हैं। इस स्टाइल की पेंटिंग ज्यादा हैं। ऐसी कलाकृतियाँ ठीक उसी समय सामने आईं, जब सौंदर्य से परिपूर्ण, बिल्कुल जीवंत प्रतीत होती नारियों की पेंटिंग ने दुनिया भर में पिकासो कला की धूम मचा रखी थी। पिकासो पेंटिंग की खूब बढ़ा-चढ़ाकर तारीफ लिखनेवाले कला समीक्षकों ने वैसी मूर्तियों को कला में शामिल करने से ही इनकार कर दिया, जिसमें पिकासो ने निर्जीवता और कुरूपता को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया था।

पिकासो की वैसी कलाकृतियों पर शोध चल रहे हैं। जिन जनजातियों का कुछ आँखों से देखकर और कुछ कल्पना के आधार पर पिकासो ने चित्रण किया, उसकी कुछ प्रजाति भारत में भी मौजूद हैं। पिकासो ने जिस खोजी कला की नींव रखी, उसकी दीवानगी फ्रांस में आज भी बरकरार है। खोजी शोधकर्ता दुनिया भर में ऐसी चीजों की टोह में रहते हैं, जो सामान्य से अलग हों।

पिकासो का मकसद कला का सिर्फ व्यापार करना नहीं था। जब उनकी पेंटिंग नहीं बिकी और प्रदर्शनी से वापस आने के बाद पिकासो के लिए जीवन-यापन का खर्च निकालना कठिन हो गया, तब भी उन्होंने वैसी पेंटिंग बनानी छोड़ी नहीं। खूब पैसा कमानेवाले काम की धुन में पिकासो ने अपनी मौलिकता और सशक्त भावाभिव्यक्ति वाली पेंटिंग की ज्योति मद्धिम नहीं पड़ने दी।

फ्रांस के लोग कलाकार पिकासो को अपने यहाँ का निवासी मानते हैं, लेकिन उसी फ्रांस में पिकासो का नाम लेकर कलाकारों ने अन्य देशों की सभ्यता और संस्कृति को मनोरंजन के लिए बेचने की वस्तु समझ रखा है। उन्होंने भारत को भी नहीं बख्शा है।

भौगोलिक और सामाजिक दृष्टि से मेनलैंड इंडिया (मुख्य भारत) से काफी दूर, बिल्कुल अलग-थलग अंडमान-निकोबार द्वीप समूह में ऐसी आदिम जनजाति का अस्तित्व है। लगभग विलुप्त हो रही यह जनजाति 'जारावा' नाम से जानी जाती है। इनकी संस्कृति में प्राचीन मान्यता है कि गैर-आदिवासी या किसी अन्य समुदाय के लोगों ने अगर इन्हें देख लिया तो दैवी प्रकोप से ये समाप्त हो जाएँगे। भारत सरकार ने जारावा जनजाति इलाकों के आसपास सैलानियों और पर्यटकों के जाने पर प्रतिबंध लगाया हुआ है।

बंगाल की खाड़ी वाली इस समुद्री सीमा पर तैनात सुरक्षा प्रहरियों और नौसैनिकों को भी उनकी तरफ ताक-झाँक करने की मनाही है। 2004 के चक्रवाती तूफान सुनामी लहर से ही जारावा जनजाति के बारे में जानकारी सामने आई। उससे पहले लोगों को पता तक नहीं था कि झीलों में भी एक मानव जाति का अस्तित्व है, जिसकी दुनिया इतनी भिन्न और विभिन्न है कि न तो बाहरी दुनिया से उनका कोई संपर्क है, न ही बाहरी दुनिया के लोगों की उन तक पहुँच है। सुनामी लहर की तसवीरों में जब इस विलुप्त जनजाति को कैमरे में कैद करने की कोशिश की गई, तभी यह अजीब मान्यता भी प्रचारित हुई। उसमें पर्यटकों और मनोरंजन के लिए ऐसी रोचक सामग्रियाँ खोजनेवालों को आकर्षित करनेवाली जानकारी यह थी कि अगर इनका फोटो लिया गया, तो जारावा लोगों की मृत्यु हो जाएगी।

जारावा जनजाति के रहन-सहन और लाइफ स्टाइल के बारे में जो जानकारी बाहरी दुनिया तक पहुँची, वो आदि मानव की याद ताजा कर देती है। जारावा लोग खुले आसमान के नीचे रहते हैं। धूप, बारिश से बचाव के लिए विशाल पेड़ों के छज्जे, पत्ते, डालियों और बाँस, नारियल, ताड़ की खपच्चियों से झोंपड़ियाँ बनाते हैं। स्त्रियों, पुरुषों के हमेशा नग्न रहने की परंपरा है। वे बिना किसी संकोच के बिल्कुल खुले में झुके पेड़ों के मजबूत तने के सहारे लेटे, सहवास करते देखे गए हैं। समुद्री इलाकों की तरह जारावा लोगों के भी देवता समुद्र हैं, और उनका मानना है कि देवता को छोड़ किसी अन्य की दृष्टि अगर उन पर पड़ी तो जारावा जाति का सर्वनाश हो जाएगा।

जारावा लोगों के साथ ऐसा पहले कभी हुआ है या नहीं अथवा भविष्य में भी होने की संभावना है या नहीं, इस संबंध में मानव विज्ञानी और समुद्री जीवन विशेषज्ञ कोई निश्चित प्रामाणिक राय नहीं बना पाए हैं, लेकिन भारत सरकार ने इस अंधविश्वास को तवज्जो दी, ताकि इसी बहाने जारावा जनजाति को किसी भी तरह सर्वनाश से बचाया जा सके। इसके लिए कड़े कदम उठाए गए, ताकि यह जगह पर्यटक या पिकनिक स्पॉट न बने। इस स्थान को 'संरक्षित जारावा जनजाति रिजर्व' घोषित कर दिया गया है और इसके आसपास किसी सैलानी को फटकने की इजाजत नहीं है। चीन, म्याँमार से लगी अंडमान की समुद्री सीमा सुरक्षा की दृष्टि से बेहद संवेदनशील मानी जाती है। इस रास्ते से दुनिया के किसी भी हिस्से से लोगों का पहुँचना आसान है। जारावा के विषय में जैसी जानकारी प्रचारित हुई, उसके बाद तो इस समुदाय की अंतरंग बातें जानने की ललक में उन पर चौतरफा विदेशी हमले स्वाभाविक हैं।

ऐसे हमलावर कलाकार ज्यादातर पश्चिम के होते हैं और उनमें भी प्राय: फ्रांस अव्वल रहता है। 'पिकासो फैन' दो ऐसे फ्रांसीसी फिल्मकारों से अक्तूबर 2014 में मेरी बातचीत हुई। वे थे—प्रस्तावित फिल्म के निर्देशक अलेक्सांद्र डेराइम्स और निर्माता क्लेयर बीलवर्ट। उन्हें 'जारावा' जनजाति रिजर्व में गैरकानूनी तरीके से घुसने की कोशिश करते हुए पकड़ लिया गया। हमें यहाँ इसके विस्तार में नहीं जाना कि उन्होंने वहाँ क्या किया और उसके बाद उनके साथ-साथ क्या-क्या हुआ? संयोग से दोनों फिल्मकार मैड्रिड में जनमे और पेरिस के बाशिंदे निकले।

पाठकों को याद दिला दें कि पिकासो ने 'मैड्रिड रॉयल आर्ट अकादमी' की प्रवेश परीक्षा पास करने के बाद 1896 में मैड्रिड में ही रहकर पेंटिंग शिक्षा और ट्रेनिंग हासिल की। मैड्रिड में रहते हुए भी पिकासो दूरदराज के सुदूर गाँवों और जारावा की तरह सिर्फ प्रकृति की गोद में जीवनयापन करनेवाले अज्ञात समुदायों के बीच पहुँच जाते थे। आर्ट स्कूलों के शिक्षक जिन परंपरागत विषयों पर पेंटिंग बनाने के लिए छात्रों पर दबाब डालते थे, उसकी सीमाएँ तोड़कर पिकासो 15 साल की उम्र में ही अपने समय और जमाने से काफी आगे निकल गए थे।

ये दोनों फिल्मकार भी पहले पेंटर बने और फिर उन्हीं विषयों को आधार बनाकर फिल्म निर्माण उद्योग में किस्मत आजमाने लगे। क्लेयर वीलवर्ट को पिकासो के बारे में विस्तृत जानकारी उन्हीं की तरह मैड्रिड से स्कूल की पढ़ाई करके पेरिस जाने के बाद मिली। दुर्लभ और काल के गर्भ में खोई सामग्रियों की तलाश पिकासो को रहती थी। उसके लिए इधर-उधर भटकने की प्रेरणा इन दोनों को पिकासो की पेंटिंग से मिली। फिल्म-निर्माण की प्रेरणा का श्रेय भी दोनों पिकासो को ही देते हैं।

भूमिका में ही बताया जा चुका है कि कला की कोई विधा पिकासो से अछूती नहीं बची, जिसमें फिल्म-निर्माण भी शामिल है। 1956 में जैकलीन और फ्रैंकोइस गिलट की मदद से पिकासो ने कई फिल्में बनाईं। उनमें कुछ फिल्में अफ्रीका की आदिम जनजातीय समुदाय की संस्कृति और रीति-रिवाज पर आधारित थीं। अलेक्सांद्र और वीलवर्ट को जारावा औरतों में बिंदास भोली नग्नता की थोड़ी सी झलक मिल गई। इस संबंध में चर्चा करते हुए वीलवर्ट ने पिकासो के जीवनवृत्त लेखक रिचर्डसन की पंक्ति उद्धृत की—'औरत पर हावी रहना पिकासो अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते थे, क्योंकि औरत उनकी पेंटिंग में धौंस जमाती रहती थी।'

□

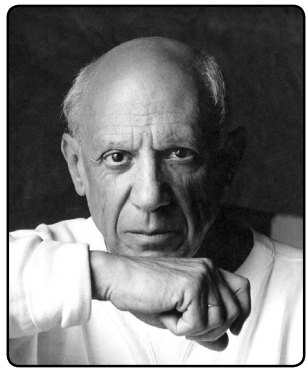

पेंटर और शिल्पी पिकासो अंतरराष्ट्रीय ख्याति की ओर

पिकासो की पेंटिंग और शिल्पकला की बारीकी में जाने के बाद दुनिया के सारे कला समीक्षकों को एक ही सवाल बार-बार कुरेदता है कि आखिर ऐसा लापरवाह व्यक्ति अंतरराष्ट्रीय स्तर का कैसे बना? जिस कलाकार ने न तो अपनी जिंदगी को और न ही कला को कभी गंभीरता से लिया; जो हमेशा निजी जिंदगी से लेकर हर क्षेत्र में विवादों से घिरा रहा, उस व्यक्ति को आज लोग आधुनिक कला का महान् इतिहास पुरुष मानते हैं।

पिकासो ने जिस चीज को छुआ, जिस क्षेत्र में कदम बढ़ाया, उसे विवादास्पद बनाकर चर्चा में ला दिया। हलचल, क्रांति, तूफान, हंगामा उनके दिलो-दिमाग में समाया हुआ था। जिस काम में पिकासो ने हाथ डाला, उसकी शुरुआत ही क्रांतिकारी प्रयोग से की और वो भी सनसनी फैलानेवाला प्रयोग! यही सोचकर पिकासो ने इस जोखिम भरे रास्ते के लिए पेरिस को चुना, जहाँ हर प्रयोग को लोग गंभीरता से लेते थे। सनसनी फैलाने के लिए पिकासो ने प्राचीन और आधुनिक काल के बीच सेतु बनाने का खाका इस हिसाब से तैयार किया, ताकि बिल्कुल नया जैसा लगे, मगर आधार पुराना ही हो। नींव, पाये प्राचीनता से लिये और नक्काशी में ऐसा कला-कौशल दिखाया कि चर्चा जब शुरू हुई, तो होती ही रह गई। उससे प्राप्त प्रसिद्धि जब फैलने लगी, तो फैलती ही चली गई। पिकासो ने जो सेतु बनाया, वो उनके जीवनकाल तक चरमराता रहा, मगर उसकी मजबूती बरकरार रही। अब तो

वह इतना ठोस बन चुका है कि कोई भी कला समीक्षक या कला इतिहासकार इससे गुजरे बगैर कुछ बोल ही नहीं सकता।

जिन प्रतीकों और बिंबों को लेकर पिकासो ने यह क्रांतिकारी कदम उठाया, वो नया ही नहीं, अजूबा भी था। जैसे हल्के-फुल्के सड़कों पर बिखरे अवयवों को जोड़कर पिकासो ने आधुनिक कला का नया इतिहास रच दिया, वो उस समय के लिए बेढंगे और वाहियात थे। विश्व की सर्वाधिक प्रसिद्ध यूनानी कला समेत उस समय की किसी भी प्राचीन कला में तो ऐसी कल्पना का प्रश्न ही नहीं उठता था। आधुनिक कला के प्रणेताओं ने भी इस तरह की बात नहीं सोची थी। गंभीरता का पैमाना ऐसी मानसिकता पर आधारित था, जिसके लिए पिकासो अनफिट थे। पिकासो इस बात को बखूबी समझ रहे थे। इसलिए उन्होंने प्राचीन कला से सीखा जरूर, उसकी थोड़ी नकल भी की, लेकिन अपनी अक्ल और बहुमुखी प्रतिभा से उसे नया बना दिया।

पिकासो ने ख्याति की नब्ज पकड़ी। उसके लिए चर्चित होना पहली शर्त थी। पेरिस जैसे विश्व कला-साहित्य केंद्र की विशाल नदी में गोते लगाकर किनारे लगने में काफी समय लगता। शांत जल को ज्यादा देर देखने से मन ऊब जाता है। कंकड़ डालने से तरंगें उठती हैं और जल में हलचल पैदा होती है। ताल का संगीत बदल जाता है।

कंकड़ की आवाज सुनकर नदी के किनारे खड़े और बैठे समरूपता से ऊबे लोगों का ध्यान भी उस तरफ चला जाता है। इसलिए पिकासो ने कंकड़ नहीं, बड़ा सा पत्थर डालकर सागर जैसी नदी में हलचल मचाई और यह सिलसिला जीवन के अंतिम क्षण तक जारी रखा। उस हलचल के शांत होने तक पिकासो अगला पत्थर फेंकने की तैयारी कर लेते थे। जी हाँ, यही है पिकासो के सफलता के चरमोत्कर्ष पर पहुँचने का असली रहस्य!

जिन बड़े-बड़े कला व्यापारियों और समीक्षकों ने किसी उभरते कलाकार की कलाकृति या किसी चित्रकार के चित्र की कसौटी परखने का ठेका ले रखा था, उन्हीं को पिकासो की पेंटिंग बाद में रहस्यपूर्ण लगी। पहले उन्हीं लोगों ने पिकासो की पेंटिंग को पेंटिंग मानने से ही इनकार कर दिया था। उसे एक असंतुलित, राह भटके युवक के फितूर को तेल और रंगों में डूबी आड़ी-तिरछी, टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ

बता दिया। पिकासो की मूर्तियों को भी कला की श्रेणी में रखने पर उन्हें अपने वर्चस्व और प्रभुत्व पर खतरा दिखाई दे रहा था। जैसा आमतौर पर युगों तक होता आया है, कुछ भी नया और पहले से जड़ पकड़ चुकी परंपरा को बदलनेवाला प्रयोग स्वीकार्य नहीं होता। उसमें भी ऐसी पुनर्जागरण (रेनेसाँ) चेतना, जिसके आधार पर आधुनिक कला की नई परिभाषा तय होनी थी, कला समीक्षकों के गले के नीचे उतर नहीं रही थी। उसमें भी जिस तरह के प्रतीकों का सहारा पिकासो ने लिया, उसे उनसे पहले और उनके समय में भी किसी पेंटर ने अपनी पेंटिंग का विषय नहीं बनाया। या तो उनकी सोच का दायरा उतना विकसित नहीं हुआ था, अथवा वे डरते थे कि इससे उनकी कला को घटिया नजरिए से देखा जाएगा। उससे भी बड़ी बात थी, कुंठित मानसिकता।

ऐसे वातावरण में पिकासो ने अपनी किश्ती दरिया में छोड़ी—न लंगर, न किनारे लगने की फिक्र, लेकिन पतवार न टूटने दिया, न हाथ से छूटने दिया। ऊँची-ऊँची, पीछे धकेलनेवाली तेज लहरों से जूझते रहे—

एहसान नाखुदा का उठाए मेरी बला,
किश्ती खुदा पे छोड़ दूँ, लंगर को तोड़ दूँ।

पिकासो की न ईश्वर में आस्था थी, न किसी धर्म में; सिर्फ अपने कर्म और आँखों के सामने मौजूद यथार्थ पर भरोसा था। न वे आस्तिक थे, न नास्तिक। इस विषय पर माथापच्ची करने के बजाय पिकासो पेंटिंग के अलावा साहित्य, संगीत, नाटक, नृत्य, थिएटर, बैले और नौटंकी समेत ललित कलाओं में भी सारे मिथक तोड़ते रहे। सारी परंपराएँ, रीति-रिवाज, संस्कारों को अपनी पेंटिंग की तरह ही पिकासो ने नया रंग दिया तथा एक नए युग निर्माता के रूप में उभरे। जब पिकासो इस दिशा में बहते हुए धारा के बीचोबीच पहुँच चुके थे, तब भी नदी में उनकी मौजूदगी को अनदेखी करने के प्रयास हुए, लेकिन पिकासो विवादों की लहरों में उपलाते, तेज धारा की विपरीत दिशा में तैरते रहे।

वास्तव में पिकासो के मन में न कोई गाँठ थी, न कोई घुटन। अवचेतन मन को वाद बनानेवालों से भी वे न कभी जुड़े, न उसे ज्यादा महत्त्व दिया। इसका विवेचन आगे आएगा, जो फ्रायड के सिद्धांत से निकला हुआ है। लोग क्या कहेंगे, यह सोचकर नया कुछ आजमाने से घबराने के बजाय पिकासो ने इस बात को

ज्यादा अहमियत दी कि देखें, दुनिया क्या कहती है ? दुनिया के कला मानचित्र पर स्वयं को एक चमकते हुए सितारे के रूप में देखने की परिकल्पना पिकासो ने पहले ही कर ली थी। ऐसा तारा, जो रात में कब निकलता है, यह तो कोई नहीं देखता, मगर सुबह सभी देख लेते हैं। उसे 'सुबह का तारा' कहा ही जाता है, जिसकी चमक सूर्य की लालिमा के पूर्ण रूप से उदित होने तक दिखाई देती है।

पिकासो की उपलब्धियों का विवेचन करनेवाला हर व्यक्ति यह जानकर अचंभे में पड़ जाता है कि ऐसा अव्यवस्थित व्यक्ति आखिर इतनी महान् ऊँचाइयों तक पहुँचा कैसे ? आज 'सफलता का रहस्य/कुंजी' बतानेवाले दुनिया के बेस्टसेलर उपदेशकों के सारे 'सक्सेस गुरु', 'दर्शन पिकासो' के सामने खारिज हो जाते हैं। निश्चित लक्ष्य और मुकाम तक पहुँचने के लिए बेस्टसेलर लेखक निश्चित योजना, समयबद्ध तरीके से काम पूरा करने की रूपरेखा, मन-मस्तिष्क की एकाग्रता जैसे जितने उपाय बताकर जीवन से निराश और हतोत्साहित उद्यमियों का हौसला बढ़ाकर डॉलर बटोर रहे हैं, उन्हें एक बार पिकासो जैसे व्यक्ति का जीवनवृत्त गौर से पढ़ना चाहिए। यह महान् कलाकार सफलता के चरम शिखर तक जिस तरीके से पहुँचा, उसे आज के युग में कोई तरीका ही नहीं माना जाएगा। उसे आज पागल का फितूर करार दिया जाएगा; क्योंकि आधुनिक युग में सफल होने के 'सक्सेस गुरु' वर्णित कोई भी दर्शन पिकासो पर लागू नहीं होते।

विश्व कला और साहित्य पर राज करनेवाले पिकासो जैसे कवि, कलाकार के जमाने में सफलता के उपायों की बिक्री का चलन नहीं था। प्रकृति प्रदत्त प्रतिभा के धनी उद्यमियों का उद्‌गम ही बेस्टसेलर हुआ। न कोई योजना, न कोई निश्चित लक्ष्य और न ही कोई निश्चित समय-सीमा—दिशाहीन रास्ते पर चलते हुए, हर पड़ाव पर अपने पदचिह्न छोड़ते हुए पिकासो अनवरत आगे बढ़ते रहे। कभी यह सोचने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी कि किस दिशा से आए और किधर बढ़ रहे हैं ?

पदचिह्न भी ऐसा, जिसे शुरू में किसी भूले-भटके राही का मानकर जिन लोगों ने भुलाने का प्रयास किया, वही फिर उसे ढूँढ़ते रहे और फिर उसी से संकेत पाकर रहगुजर के अन्य कदमों के निशान तलाशने को विवश हुए। इस विवशता का कारण था, उस पदचिह्न को लेकर उठा विवाद और उस वजह से छिड़ी चर्चा। वैसे तो हर क्षेत्र में कोई भी चीज बिना विवाद के चर्चा में नहीं आती। खासकर

साहित्य और कला की दुनिया में तो कोई कृति विवादास्पद हुए बिना बहुचर्चित होती ही नहीं।

पिकासो ने अपनी कला यात्रा के किसी भी पड़ाव को वीरान या गुमनाम नहीं होने दिया। अगले पड़ाव को विवादित बनाने की धुन में पीछे या पुराने पड़ चुके पिछले रास्ते की ओर भी लौटते थे। पिकासो के पीछे मुड़कर देखने का यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि वे अपनी विफलताओं का जायजा लेने के लिए वैसा करते थे। पिछले पड़ाव की ओर लौटे, फिर एक ऐसा नया निशान छोड़ा, जिसको लेकर नए सिरे से विवाद खड़ा हो और आगे बढ़ गए—

कबिरा खड़ा बाजार में, लिये लुकाठी हाथ।
जो घर जारे आपना, चले हमारे साथ।।

यह पद अक्षरश: हू-ब-हू पिकासो पर फिट बैठता है।

19वीं शताब्दी में कला की धरती पर पिकासो बीच बाजार में सड़क पर चक्कर लगाते हुए जब अपना आशियाना बना रहे थे, उस समय तक कला जगत् में विवाद का प्रवेश नहीं हुआ था। पिकासो ने विवाद की ही बाँस-बल्ली से अपना घर बनाया और आजीवन विवादों से ही उसे जारकर छवाते रहे।

अपनी जिद, जुझारूपन और हर सनक को खुल्लम-खुल्ला समाज के सामने पेश करने के अड़ियल रवैए ने पिकासो के लिए रीढ़ का काम किया। वैसा ही काम करने के पीछे हाथ धोकर पड़े व्यक्ति के बारे में उलटी-सीधी चर्चा स्वाभाविक थी। विवादों में पड़ना गुस्सैल मिजाज के पिकासो का शौक था और उसी शौक ने उनकी शोहरत में चार चाँद लगा दिए।

पिकासो आर्ट और उनकी निजी जिंदगी के हर विवाद पर आज विश्व के हर कला मंच पर गंभीर चर्चा होती है। पिकासो की प्रासंगिकता उनके अपने समय में जितनी थी, उतनी ही आज भी है। उनके विषय में चर्चा का विषय अब यह है कि जब तक पिकासो की पेंटिंग का कथ्य असरदार नहीं था, तो आखिर उसे लेकर विवाद छिड़ा कैसे? अगर कोई हल्की-फुल्की बेतुकी बातों में गंभीरता न हो तो उसकी चर्चा कुछ दिन बाद अप्रासंगिक हो जाती है। यह मायने नहीं रखता कि चर्चा किस रूप में होती है? महत्त्वपूर्ण यह है कि उस व्यक्ति का काम आपको उससे संबंधित विमर्श में शामिल करने को मजबूर करता है।

पिकासो ने कला के क्षेत्र में एक वाद को जन्म दिया। एक नए सिद्धांत का प्रतिपादन किया। ऐसे आविष्कारक खोजकर्ता को तो ऐतिहासिक होना ही है, जिसने एक नया इतिहास रच दिया। वैसे तो विश्व के हर वाद ('इज्म') को लेकर विवाद हुआ है, लेकिन पिकासो के वाद के साथ कई विवादित वाद जुड़े हैं—मार्क्सवाद-लेनिनवाद, फासीवाद, पूँजीवाद, समाजवाद। अगर सिर्फ कला, साहित्य व संस्कृति से जोड़ें, तो अवचेतनवाद (सरियलिज्म), यथार्थवाद, रहस्यवाद। ये सारे 'इज्म' (ISM) पिकासो द्वारा प्रतिपादित इज्मों के साथ चलते रहे। कला इतिहासकारों और समीक्षकों ने पिकासो के उस नए 'प्रयोगवाद' (एक्सपेरिमेंटिज्म) को 'क्यूबिज्म' तथा 'सेरामिसिज्म' का नाम दिया है।

इस 'इज्म' की पहली और सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है, पिकासो आर्ट का नया अंदाज, नया स्टाइल, नया कलेवर—अस्त-व्यस्त कपड़ों और भाव-भंगिमा में जीवंत बोलती आकृति। उनमें अधिकांश के बदन खुले या अधखुले हैं।

'पिकासोइज्म' (पिकासोवाद) को पहले पेरिस के कला मठाधीशों ने एक प्रकार से 'फितूरवाद' बताकर नकार दिया, लेकिन जब पिकासो के हमले ताबड़-तोड़ एक के बाद होने लगे—यानी कि एक हंगामे या विवाद के जवाब में दूसरा हंगामेदार धमाका। पेरिस से लेकर न्यूयॉर्क, लंदन, रोम समेत पश्चिम की तमाम कला-मंडियों में अपनी पेंटिंग से हड़कंप मचाने के लिए एक सैनिक की तरह पिकासो बुलेट पर बुलेट दागते रहे। पिकासो ने अहमियत न देनेवाले आर्ट डीलरों को इस स्थिति में ला दिया कि उन्हें अपने पहले के आकलन पर विचार करना पड़ गया।

जिस फितूरवाद को शुरू में कला की श्रेणी में रखने लायक नहीं समझा गया, उसका रहस्य एक सदी गुजर जाने के बावजूद भी रहस्य ही बना हुआ है। पश्चिमी देशों के सभी प्रसिद्ध कला संग्रहालयों की सबसे अनमोल धरोहर हैं पिकासो। कोई भी नया आर्ट म्यूजियम पिकासो की पेंटिंग के बगैर अपूर्ण माना जाता है। यहाँ तक कि कोई नया विवाद भी अधूरा रह जाता है। इन विवरणों से इतना तो स्पष्ट है कि व्यापक चर्चा और विवाद ने पिकासो को अंतरराष्ट्रीय ख्याति के शीर्ष पर पहुँचाया। सीरियस भाववाली पेंटिंग को एकाध बार प्रदर्शनी से वापस लानेवाले पिकासो ने बेतुकी और बेढंगी घोषित पेंटिंग को रंग, स्टाइल बदलकर जब पेश किया तो

लूट मच गई। बड़े-से-बड़े आर्ट डीलर पिकासो के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने लगे। पिकासो से जुड़ना शान की बात हो गई।

एक वैज्ञानिक की तरह पिकासो के ऐसे अभिनव प्रयोगों के संबंध में अभी तक जो भी जानकारी उपलब्ध है, उसका हम एक-एक करके प्रसंगानुसार जिक्र करेंगे, लेकिन पहले इस बात का विश्लेषण आवश्यक है कि आखिर पिकासो की कला को बेतुकी क्यों कहा गया? फिर उसी को समाज के उपेक्षित और दबे-कुचले की आत्मा के साथ-साथ मन-मस्तिष्क की दबी कुंठावाली सरियलिज्म कला बताकर उन्हें सम्मान देना भी विवेचन का विषय है।

पिकासो के समय में उनके अपने प्रदेश से लेकर दुनिया में राजनीतिक और सामाजिक तनाव का माहौल था। उसमें पिकासो के पहले से स्थापित कलाकारों और साहित्यकारों को भी सच तथा स्पष्ट बोलने से पहले सोचना पड़ता था। कई तो सोचते ही रह जाते थे।

वैसे प्रतिकूल वातावरण में वजूद कायम करने के लिए पिकासो ने अपना परिवेश और आसपास के माहौल को भी प्रतिकूलता से रँगा। यह सारा कुछ पिकासो की पेंटिंग के वाटर कलर, ऑयल कलर, कैनवास और पेंसिल से उकेरी गई भंगिमाओं के आवरण में ढक-सा गया।

हर आदमी के दिमाग में फितूर और बेतुकी बातें उपजती हैं। मननशील और बुद्धिजीवी ज्यादा सोचते हैं, इसलिए उनको इस तरह के विचार ज्यादा परेशान करते हैं, लेकिन उसे व्यक्त करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। खासकर लेखक लोग क्लबों और गोष्ठियों में भी नपे-तुले शब्दों में और सभ्य भाषा में सँभल-सँभलकर बोलते हैं। आपस में भी दबी जुबान से मन की भड़ास निकालते हैं, ताकि ऐसे 'अति सभ्य' से असभ्य की श्रेणी में न डाल दिए जाएँ।

पिकासो के समय में ऐसे 'अति सभ्यों' (अल्ट्रा मॉडर्न) का बोलबाला था और पिकासो को उनके बीच अपने लिए जगह बनानी थी। बस फितूर को ही सामग्री के रूप में इस्तेमाल करके आसमान में सुराख करनेवाला पत्थर फेंका—

कौन कहता है कि आसमान में सुराख हो नहीं सकता
एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारो।

और वाकई पिकासो अपने इस साहसिक अभियान में शत-प्रतिशत सफल

रहे। निंदा, आलोचना, तिरस्कार झेलने की हिम्मत रखनेवाला ही ऐसी दृढ़ता से अनर्गल में भी मंगल मना सकता है। लेखन, पेंटिंग, थिएटर, सरकस, बैले में कलाकार पिकासो का योगदान बंद कमरे में किताबें पढ़कर हासिल किया गया ज्ञान नहीं है; क्योंकि उन्होंने तो सारा ज्ञान आवारा, मनचले की तरह अड्डेबाजी करके अर्जित किया। मानव मन के अंदर घुमड़नेवाले वहशीपन को बाजार में बिक्री की चीज बना दिया। मानवता को प्रताड़ित और कलंकित करनेवाली बेहयाई को समाज के सामने लाकर रख दिया। ऐसी खरी-खरी बोलनेवाला कैसे स्वीकार्य होगा?

पिकासो की वृत्तनुमा (क्यूबिक) पेंटिंग की तरह उनका जीवन-वृत्त भी उलझन और बिखराव से भरा है। औरत की तरह किसी भी प्रसिद्धि को पिकासो ने ज्यादा दिन तक नहीं ढोया। लोग काम से ऊबते हैं, ज्यादा दिनों तक पहचान न मिलने से उकता जाते हैं और प्रसिद्धि मिलने के बाद उससे उकता जाते हैं।

पिकासो को प्रसिद्धि मिलने में ज्यादा समय नहीं लगा। एक प्रसिद्धि से थोड़े समय में ही ऊबकर पिकासो दूसरी प्रसिद्धि की ओर बढ़ गए। हर नई प्रसिद्धि उनके लिए एक नई मिस्ट्रेस ले आई। इसलिए पिकासो के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में हर शोध एक नई जानकारी लेकर आता है; क्योंकि पिकासो के जीवन की तरह उनके विषय और कार्यक्षेत्र भी बिखरे हैं।

पिकासो से संबंधित बातें सुनने और पढ़ने में भले हास्यास्पद या अजीब लगें, लेकिन आज वो एक बहुचर्चित कलाकार की सबसे बेमिसाल देन हैं। उनके बाद दूसरा चित्रकार नहीं पैदा हुआ, जो पिकासो के समानांतर लकीर खींच सके।

पिकासो को इस ऊँचाई तक किस तरह की पेंटिंग ने पहुँचाया? इस सवाल का पहला जवाब है, औरत और दूसरा है, घोड़ा। सामाजिक और राजनीतिक त्रासदी से भरी मानवीय पीड़ा भी इसी के इर्द-गिर्द घूमती है। पिकासो को सहयोगी भी अपने ही जैसे मनचले और विचित्र सोचवाले मिले। जिस किसी से भी वे प्रभावित हुए, उसे भी उतना ही प्रभावित किया। पिकासो के फैन भी अजीब तरह के लोग बने। उन्हें वैसे पेंटिंग से ही महान् सफलता मिली, लेकिन सरकस, थिएटर के क्षेत्र में भी पिकासो ने विशिष्ट छाप छोड़ी। जिस रास्ते को चुना, उसमें मील का पत्थर साबित हुए, जिसकी अनदेखी करके कोई गुजर ही नहीं सकता। पथिक वहाँ अटकता है

और एक बार उसके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करके ही आगे बढ़ता है। पिकासो को पथभ्रष्ट नहीं कह पाता।

इसका ताजा उदाहरण हाल ही में प्रस्तुत किया है, पेरिस की सबसे बुजुर्ग सरकस कलाकार मैडम रोजा ने। पिकासो की विभिन्न सांस्कृतिक यात्राओं की हमसफर रही हैं, 103 वर्षीया रोजा। पिकासो को काफी नजदीक से उनके आसपास रहकर देखनेवाले इक्का-दुक्का लोग ही जीवित बचे हैं। उन्हीं में से एक मशहूर नाम है—मैडम रोजा। पेरिस जिन बड़े-बड़े अंतरराष्ट्रीय ख्याति के साहित्य, कला और सांस्कृतिक मंचों का केंद्र रहा है, उसमें एक 'विंटर सरकस' भी है। आज यह यूरोप का सबसे पुराना और मशहूर सरकस माना जाता है। इसे स्थापित करने में पिकासो के सहयोग की चर्चा मैडम रोजा ने की है।

फ्रांस के सबसे बड़े अखबार 'पेरिस टाइम्स' के साप्ताहिक कला-मनोरंजन परिशिष्ट के लिए थॉमस एडमसन के साथ भेंटवार्त्ता में मैडम रोजा ने अपने बारे में कई ऐसी विचित्र जानकारी दी, जो पिकासो की विचित्रताओं से मेल खाती है। सरकस शो में घोड़े के साथ अजीब मुद्रा में डांस करके तालियों की गड़गड़ाहट के साथ दौलत और शोहरत बटोर चुकी हैं, मैडम रोजा।

इस महिला की हिम्मत और जुर्रत देखिए कि उसने सरकस के संस्थापक जोसेफ बुगवियोन से शेर की माँद में शादी की। मैडम रोजा जिस तरह का डांस जानती थीं, उसे पेरिस में 'बनाना डांस' कहा जाता था। सरकसों में कभी शेर और कभी घोड़े के साथ अथवा कभी दोनों उद्दंड जानवरों के साथ रिंग मास्टर की मदद के बिना भी यह डांस प्रस्तुत करने के लिए रोजा को कहा जाता था।

पाठकों ने पीछे देखा है और आगे भी देखेंगे कि घोड़ा पिकासो की अधिकांश पेंटिंग की थीम है—प्राचीन और मध्यकालीन युग के चित्रकारों की तरह पिकासो का घोड़ा सम्राटों, राजाओं द्वारा युद्ध के मैदानों में या शाही सवारी में अथवा आखेट में इस्तेमाल करनेवाला घोड़ा नहीं है। आधुनिक कला के स्टाइलिस्ट उन्नायक पिकासो का घोड़ा सरकस का है। वैसा घोड़ा, जिसको रिंग मास्टर के कोड़े पर लड़की से प्रेम का इजहार करना सिखाया जाता है। लड़की सरकस शो के लिए घोड़े को भड़काती है। लड़की और घोड़े को एक साथ विभिन्न भाव-भंगिमाओं में पिकासो ने कई पेंटिंग में चित्रित किया है। 'लेस डीमोइसेल्लेस डी एविग्नोन' सीरिज

की ऐसी ही पेंटिंग को लेकर कला की दुनिया में तूफान उठ खड़ा हुआ।

थॉमस एडमसन ने मैडम रोजा से बातचीत के आधार पर लिखा है कि पिकासो से रोजा की मुलाकात सरकस के 'बनाना डांस शो' में हुई। जब पिकासो ने जाना कि मैडम रोजा की शादी में सरकस के शेर, हाथी, घोड़े बराती थे और उनसे शादी करनेवाले जोसेफ बुगवियोन शेर की माँद में रिंगमास्टर की पोशाक में दूल्हा बने हुए थे, तो पिकासो जैसे विचित्र खोजी कलाकार के शौक की माँग के मुताबिक वहाँ उनकी मौजूदगी स्वाभाविक थी।

मैडम रोजा और उनकी सबसे नजदीकी दोस्त जोसेफीन बेकर दोनों पेरिस में पिकासो के घर के पास ही एक अपार्टमेंट लेकर रहती थी। अमेरिका में एक अश्वेत परिवार में जनमी जोसेफीन बेकर को एक डांस पार्टी के सिलसिले में पेरिस जाने का अवसर मिला, तो वहीं की होकर रह गई। जोसेफीन का पेरिस में सबसे पहले जिनसे परिचय हुआ, वो थीं मैडम रोजा और उन्हीं के जरिए जोसेफीन पिकासो के करीब आई। तीनों कलाकारों में कई बातों में समानता थी, जिसने उन्हें एक जगह ला दिया और उनकी एक-दूसरे के यहाँ बैठकी जमने लगी।

तीनों अपने-अपने क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित कर चुके थे और कला की विभिन्न विधाओं में वे मास्टर थे। रोजा के परिवार के लोग बेल्जियम से आकर फ्रांस में बसे थे और उनके माता-पिता दोनों ही ऐसे थिएटर किरदार थे, जिनके बिना दर्शकों को कुछ कमी महसूस होती थी।

अपने समय की मशहूर ग्लोबल स्टार जोसेफीन बेकर एक ही साथ गायिका, डांसर, कंपोजर के अलावा पेंटर भी थीं। उन्हीं से रोजा ने 'बनाना डांस' सीखा। इस डांस की प्रस्तुति के पीछे जोसेफीन का एक खास अंदाज और मकसद था। उनके पूर्वज अफ्रीका से आकर अमेरिका में खानाबदोश बंजारों की तरह रहे थे। अमेरिकी नागरिक बनने के बावजूद जोसेफीन बेकर के माता-पिता ने अश्वेतों के साथ भेदभावपूर्ण रवैए का दंश झेला था। अमेरिका में अश्वेतों को गोरी चमड़ीवाले लोग आज भी अपने समकक्ष नहीं मानते। जिस समय जोसेफीन के नाम से ही यूरोप की कोई फिल्म बॉक्स ऑफिस पर हिट होती थी, उस वक्त भी उपेक्षापूर्ण दोयम नागरिकता वाले नजरिए को लेकर पूरे अमेरिका में आंदोलन का दौर था।

यही भेदभावपूर्ण रवैया जोसेफ के 'बनाना डांस' की थीम थी और वे अपने हर प्रोगाम में बड़ी सूझ-बूझ के साथ यह संदेश दर्शकों तक पहुँचाती थी। जोसेफीन की हर प्रस्तुति में एक ऐसी नई खूबी होती थी, जो दर्शक बेहद पसंद करते थे। इसलिए उन्हें मनवांछित लोकप्रियता और प्रसिद्धि मिली।

उधर रोजा भी 'विंटर सरकस' की जान थीं। पिकासो का नाम तो चारों तरफ फैला हुआ था ही। अफ्रीकी कला और काले अफ्रीकियों की जिंदगी ने पिकासो को फ्रांस आने के बाद सबसे पहले आकर्षित किया। उस समय तो कई उत्तर और पश्चिम अफ्रीकी देश फ्रांस के उपनिवेश थे। फ्रांस के जाने-माने गणमान्य नागरिक होने के कारण पिकासो को इन देशों में आने-जाने में कोई दिक्कत नहीं होती थी। पिकासो की अफ्रीकी कला से प्रभावित पेंटिंग में भी कई कला समीक्षकों को सिर्फ औरत की देह का विद्रूप चित्रण नजर आता है, लेकिन इस गहराई को वर्षों बाद कला इतिहासकारों ने समझा कि उस पेंटिंग में औरत की चाहत या भूख नहीं है, बल्कि भुखमरी और गरीबी की मार से अधमरी हुई औरत की तसवीर है, जिसके पास देह ढकने को गुदड़ी नहीं है।

रोजा और जोसेफीन दोनों आकर्षक महिला थीं। एक तो औरत, दूसरे उस रास्ते पर चलनेवाली जो औरतें वह काम अपनाना पसंद नहीं करतीं, वो काम करनेवाली जो हर औरत नहीं कर सकती—पिकासो जैसे अलमस्त मनमौजी के लिए इतना पर्याप्त था।

प्रतिकूल परिस्थितियों और हौसलापस्त करनेवालों का सामना करने का साहस तथा माद्दा तीनों रखते थे। कहते हैं, प्रतिकूल परिस्थितियाँ प्राय: मनुष्य को तोड़ देती हैं, ज्यादातर लोग टूट जाते हैं, लेकिन कुछ लोग उसी में रिकॉर्ड तोड़ते हैं। उसमें भी गिने-चुने लोग ही रिकॉर्ड तोड़ बेजोड़ कीर्तिमान स्थापित कर पाते हैं। उसे समाज सहजता से स्वीकार नहीं करता, इसलिए उनके विषय में सारी कहानियों को भी तोड़-मरोड़कर पेश किया जाता है। स्वस्थ आलोचनाएँ कम, बीमार मानसिकता वाली आलोचनाएँ ज्यादा होती हैं। आलोचकों और समीक्षकों के साथ पहला संकटग्रस्त मुद्दा होता है संकीर्ण, संतुलित दिमाग। इसलिए वे पूर्वग्रह से ग्रसित होकर इसी समस्या का निदान खोजते हुए जिंदगी गुजार देते हैं कि ऐसी ऐतिहासिक शख्सियत को नकारा कैसे जाए? उसे शामिल किए

बगैर तो उस विधा का इतिहास ही नहीं लिखा जाएगा। चर्चा किस रूप में करें, उससे ज्यादा उन्हें यह डर सताता रहता है कि ऐसे कालजयी रिकॉर्ड ब्रेकरों को दरकिनार करके लिखा गया इतिहास प्रामाणिक नहीं माना जाएगा और बाद की पीढ़ी उन्हें माफ नहीं करेगी।

सारे कला समीक्षक और कला इतिहासकार पिकासो को घेरे रहते थे, जिनका नाम लोगों ने पिकासो के नाम से ही जाना; क्योंकि अकेले पिकासो ही इतनी सारी कला-विधाओं के पारंगत और विशारद थे कि समीक्षकों तथा इतिहासकारों के लिए उनकी बहुआयामी कृतियों का आकलन करना कठिन हो जाता था; क्योंकि जब तक वे पिकासो के बारे में किसी निष्कर्ष पर पहुँचते थे, अभिनव प्रयोग के शौकीन पिकासो तब तक पहले से बिल्कुल अलग नया गुल खिला देते थे। सारे समीक्षकों का मूड मुरझा जाता था। झुँझलाकर वे गोष्ठियों और क्लबों में हमेशा चर्चा में रहनेवाले पिकासो को निंदा तथा प्रतिकूल टिप्पणियों का शिकार बनाते थे।

किशोरावस्था की दहलीज पर कदम रखते ही पिकासो को नाक से सिगरेट पीने का शौक चर्राया। अपने कस्बे से दूर गलियों व सड़कों पर 11-12 साल तक की उम्र के लड़कों को नंगे देखने का मूड पालनेवाले पिकासो की कला में भी सनकी मिजाज झलकता था। जैसे-जैसे पिकासो अनुभवी और उम्रदराज होते गए, उनका आए दिन बदलनेवाला यह शौकिया स्टाइल आधुनिक कला का नया रहस्यमय इतिहास बनता गया। पिकासो के विषय में कोई निश्चित धारणा ही नहीं बन पाई।

किसी भी आलोचना से घबराकर पिकासो न रुके, न झुके। इतिहासकारों और समीक्षकों को बौखलाहट तब होती थी, जब गंभीर कलाप्रेमी और पाठक उनकी टिप्पणियों पर ही उँगली उठा देते थे।

पेरिस के अलावा बर्लिन, रोम, लंदन, टोक्यो, मैड्रिड, न्यूयॉर्क जैसे विश्व के भाग्य-निर्माता शहरों में भी पिकासो हलचल मचाए रखते थे। उनके बारे में निश्चित राय का दावा करनेवालों को भी बाद में अपनी अवधारणा मजबूरन बदलनी पड़ी। कठिन परिस्थितियों में आनंद का अनुभव करनेवाले पिकासो को ऐसी चर्चाओं में घसीटनेवाले वही आर्ट डीलर थे, जिन्होंने अपने व्यावसायिक

हित को ध्यान में रखकर पिकासो की पेंटिंग को कभी बेतुका, कभी अजूबा और फिर अद्‌भुत बताया।

पिकासो को ऐसी असामान्य परिस्थिति उस समय झेलनी पड़ी, जब वे नाजी जर्मनी के आधिपत्य के समय भी पेरिस में ही रहे। यहाँ बताते चलें कि पहले और दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान मैडम रोजा ने भी पेरिस नहीं छोड़ा, न ही सरकस छोड़ी।

नाजी जर्मनी के कब्जे के समय पिकासो के पेरिस स्थित मोंटपार्नेस आवास के आसपास सिर्फ मैडम रोजा और जोसेफीन बेकर रहती थीं। जर्मन कला इतिहासकार डैनियल-हेनरी कॉन्वेलर आते-जाते रहते थे। एक ईमानदार कलाकार होने के नाते पिकासो के जाति, समुदाय और धर्म से परे कुछ यहूदी कलाप्रेमियों से भी अच्छे संबंध थे। पाठकों को स्मरण रहे कि नाजी जर्मनी ने यहूदियों को निर्वंश करने का अभियान चलाया था। उनमें से एक यहूदी आर्ट डीलर पॉल रोजेन्बर्ग भी थे, जिन पर नाजी सैनिकों की नजर थी। उनकी गिनती फ्रांस के नामी-गिरामी व्यक्तियों में होती थी, लेकिन यहूदी पिता की संतान होने के कारण उन्हें संदेह की नजर से देखा जाता था। दूसरा विश्वयुद्ध छिड़ने के समय तक पिकासो और उनकी रूसी पत्नी कोकलोवा ने अपने अपार्टमेंट में रोजेन्बर्ग को भाई की तरह रखा।

जॉन रिचर्डसन और जेम्स लॉर्ड लिखते हैं कि पेरिस में रहते हुए पिकासो निर्भीक होकर अपना काम करते रहे और नाजी सैनिक उन्हें संदेह की दृष्टि से देखते रहे, लेकिन कम्युनिस्ट कलाकारों और साहित्यकारों ने पहले तो पिकासो को नाजी समर्थक बता दिया, फिर जब वे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बने, तो उन पर रूसी नीतियों के अनुकूल पेंटिंग बनाने का दबाव बनाया। जबकि पिकासो अंत-अंत तक फ्रांस पर जर्मन हमले का विरोध करते रहे।

कला को प्रदूषित करनेवाली इस गंदी राजनीति में पिकासो की कलाकृतियों को भी घसीटा गया। इसका असर 1945 में नाजी जर्मनी के पतन के पहले वर्ष बीत जाने के बावजूद पिकासो और उनके समकालीन कलाकारों की कृतियों पर जबरन थोपा जा रहा है।

इसके विस्तार में जाने से पहले बर्लिन से छपनेवाले जर्मन साप्ताहिक 'डेर स्पीएगेल' के 2 अक्तूबर, 2014 के अंक में छपी एक खबर का हवाला लेते चलें।

इस खबर से और भी कुछ जानकारी सामने आई है, जो या तो दब गई अथवा अभी तक दबाकर रखी रही।

'विश्व यहूदी कांग्रेस' के अध्यक्ष रोनल लाउडर ने स्विट्जरलैंड के सबसे बड़े म्यूजियम को चेतावनी दी है कि नाजियों द्वारा लूटी गई वो पेंटिंग स्वीकार न करें, जो जर्मन आर्ट संग्रहकर्ता कोर्नेलियस गुर्लिट ने दी है। यहूदी नेता ने वैसी तकरीबन 1200 पेंटिंग, स्केच, ड्राइंग को अनमोल धरोहर बताया है, जिसकी कोई कीमत नहीं आँकी जा सकती। रोनल लाउडर ने जर्मन अखबार 'डेर स्पीएगेल' के साथ बातचीत में कहा कि स्विस म्यूजियम के संचालक कोर्नेलियस गुर्लिट की दी हुई कलाकृतियाँ अगर स्वीकार करेंगे तो एक नया अंतरराष्ट्रीय बखेड़ा फिर से शुरू हो जाएगा; क्योंकि वो नाजियों ने पिकासो के शहर फ्रांस और स्पेन से लूटकर लाई हुई हैं, जिसे अब तक जर्मन आर्ट संग्रहकर्ता अपनी परिसंपत्ति मानता रहा है।

उसी साक्षात्कार में जर्मनी की संस्कृति मंत्री मोनिका ग्रुएटर्स ने इस तरह का संकेत दिया कि वो ऐसी दुर्लभ पेंटिंग स्विस म्यूजियम में धरोहर के रूप में सुरक्षित रखने के पक्ष में हैं। उन पेंटिंग, ड्राइंग और स्केच में सबसे ज्यादा पिकासो की उस समय की कलाकृतियाँ हैं, जब फ्रांस नाजी शासन के अधीन था। वे अपने कमरे में बैठकर लोगों के बीच व्याप्त भय और आतंक के स्केच बनाते रहते थे। कड़ी पाबंदी के कारण वो पेंटिंग किसी प्रदर्शनी में बिक्री के लिए घर से बाहर जा नहीं सकती थीं। पिकासो के घर आने-जानेवालों पर भी सैनिकों की संदिग्ध निगाहें टिकी रहती थीं। इसलिए किसी आगंतुक को भी दिखा नहीं सकते थे।

खबर के मुताबिक इस झंझटिया पेंटिंग संग्रह में पिकासो के अलावा मोनेट, छगल और कुछ अन्य ग्रेंडमास्टरों के भी स्केच तथा ड्राइंग हैं, लेकिन नाजी और यहूदी तनाव से उठे इस विवाद में पिकासो को ही मुख्य रूप से मोहरा बनाया गया है। पिकासो के कारण ही मामले ने इतना तूल पकड़ा कि स्विट्जरलैंड और जर्मनी के बीच इतनी उच्चस्तरीय बातचीत का विषय बना।

नाजी सैनिकों ने यहूदी भगाओ/सफाया अभियान में फ्रांस में मौजूद कलाकारों की कृतियाँ और संपत्ति लूट ली। जिन इक्का-दुक्का लोगों को रहने दिया गया, उनकी पेंटिंग और संपत्ति चोरी चली गई। पिकासो के साथ भी

ऐसी बदसलूकी हुई। वो चाहे पिकासो को यहूदी मानकर किया गया हो अथवा यहूदियों से उनके संबंध के कारण हो, लेकिन पिकासो की भी पेंटिंग लूटी गईं। पिकासो के घर में भी 'लाइसेंसी बौद्धिक' चोरों ने सेंधमारी की। उन्हें पिकासो और उनकी पेंटिंग की कीमत तथा अंतरराष्ट्रीय महत्ता मालूम थी। इस खबर से यह जानकारी पक्की होती है।

'विश्व यहूदी कांग्रेस' नेता रोनल लाउडर ने अपने बयान में चुराई गई कलाकृतियों का जिक्र किया है, जिसको लेकर उसके उत्तराधिकारियों ने दावा ठोंका। काफी समय तक मुकदमा चला। कोर्नेलियस गुर्लिट के पिता नाजी युग के आर्ट डीलर थे। 81 साल की उम्र तक विरासत में मिले इस झमेले से जूझते रहने के बाद मृत्यु से पहले मई 2014 में गुर्लिट ने लूटी गई पेंटिंग के असली हकदारों का पता लगाने के लिए जर्मन सरकार से समझौता किया। उसमें पिकासो समेत अन्य यहूदियों की भी कलाकृतियाँ हैं।

रिपोर्ट से तो लगता है कि पिकासो भी यहूदी थे, लेकिन उनके संबंध में जीवनीकारों ने अब तक जितने तथ्य जुटाए हैं, उसमें पिकासो के यहूदी होने का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता, लेकिन नाजी शासन से उनकी पेंटिंग और राजनीतिक-सामाजिक गतिविधियों को अपने-अपने मतलब के हिसाब से जोड़ने के ठोस प्रमाण नहीं मिलते।

जब पूरी दुनिया के तथाकथित 'प्रगतिशील' सोचवाले बुद्धिजीवियों के बीच गैर-वामपंथी विचारधारा के विरोध का बहुप्रचारित नारा फासीवाद बना हुआ है, उस समय भी जर्मन सरकार एक पक्ष बनी हुई है।

पिकासो की पेंटिंग और कैनवास वाल पेपर स्केचों को अभी तक जर्मन सरकार की जानकारी में उस आर्ट डीलर ने छिपाकर रखा हुआ था। लूट और चोरी का माल अंतरराष्ट्रीय बाजार में बिक नहीं सकता था। उसमें जर्मनी की सरकार खुद भी बदनाम होती। ये सारा माल बर्लिन में छिपाकर रखा हुआ था, जो दूसरे विश्वयुद्ध के समय तक जर्मनी की राजधानी थी।

राजनीतिक इतिहासकारों को याद आ जाएगा कि युद्धकाल में 'रोम, बर्लिन, टोक्यो, एक्सिस' से फासीवादी युद्ध नीति तय होती थी। उनके खिलाफ पूरे विश्व को एकजुट करनेवाले अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस, सोवियत सेनाओं की काट में

मोरचाबंदी भी हिटलर के नेतृत्व में बर्लिन में एक्सिस नेता तैयार करते थे।

गुर्लिट की इस अनमोल संपत्ति का राज 2012 में खुला, जब टैक्स चोरी की जाँच के सिलसिले में अधिकारियों ने उसके अहाते में छापा मारा। उसके बाद गुर्लिट ने उन चित्रों को म्यूजियम में सुपुर्द करने की पेशकश की। उस समय भी गुर्लिट का असली मकसद टैक्स चोरी के अपराध में फँसने से बचना था, लेकिन जर्मन सरकार ने उसके बावजूद चुप्पी साधे रखी, जबकि विश्वविख्यात पिकासो की पेंटिंग के उस गुप्त तहखाने में गड़े होने में कोई सबूत की जरूरत नहीं रह गई थी। इसका मतलब नाजी शासन ने पिकासो को काफी ठेस पहुँचाई, परेशान किया और युद्ध छिड़ने के अंतिम दिनों में उन्हें पेरिस छोड़ने को मजबूर किया।

एक आहत और पीड़ित कलाकार ने उस समय रोंगटे खड़े करनेवाले स्केच बनाए। बाद में पिकासो इससे दु:खी हुए कि वे आर्ट डीलरों और पत्रकारों द्वारा कुरेदने पर भी कुछ बोल नहीं पाते थे। उनकी कला को खास जाति और धर्म से जोड़कर कलंकित कर दिया गया था। आज भी वैसी लूटी गई पेंटिंग की चर्चा यहूदी से जोड़कर होती है। कम्युनिस्टों की तरह यहूदी राजनीति में भी पिकासो की कला को घसीट दिया गया है। जेम्स वॉर्ड के मुताबिक, यह वैसा ही है, जैसे युद्ध के मैदान से लाशें गायब करने के लिए घायल सैनिकों को घसीटा जा रहा हो!

इस संबंध में पिकासो के पोते बर्नार्ड पिकासो ने फिलहाल अपना रुख स्पष्ट नहीं किया है कि अपने दादा की धरोहर मलागा या बार्सिलोना म्यूजियम ले जाने में उनकी दिलचस्पी है या नहीं?

बर्न (स्विट्जरलैंड) के अखबार 'बर्न क्रोनिकिल' ने अपने पेरिस संवाददाता इल्विन गोरिस की रिपोर्ट 10 नवंबर (2014) को छापी। उसमें बर्नार्ड पिकासो का स्वभाव भी अपने दादा से मिलता-जुलता बताया गया है। लगभग सभी प्रमुख जीवनीकारों ने लिखा है कि पिकासो की प्रेस और मीडिया से भेंट-मुलाकात में ज्यादा रुचि नहीं थी। जब वे प्रसिद्धि की ओर बढ़ने का रास्ता बना रहे थे, उस समय मीडिया से बचते फिरते थे। और जब प्रसिद्धि को ही नई पहचान देने की स्थिति में पिकासो आ गए, तब उन्होंने मीडिया की मरजी पर ही सबकुछ छोड़ दिया। किसी भी टिप्पणी पर न कोई प्रतिक्रिया देते थे, न ही उसका खंडन-मंडन करते थे।

9 नवंबर, 1989 की रात को बोर्नहोल्मर स्टेट सीमा क्रॉसिंग खोलनेवाले गार्ड हराल्ड जेगर को धन्यवाद देने ओलिवियर विडमेयर पिकासो पहुँचे थे। पूर्वी जर्मनी की सीमा तोड़कर पश्चिम जर्मनी जाने के लिए उतावली भीड़ को रोकना गार्ड के लिए संभव नहीं था।

ओलिवियर पिकासो ने वहाँ एक दिन रुककर अपने पिता पाब्लो पिकासो को याद किया, जिन्होंने जर्मनी के विभाजन का विरोध किया था। अपना विरोध प्रकट करने पिकासो सीमा पर गए भी, जहाँ दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद विभाजन दीवार 'बर्लिन वाल' बनाई गई। इस बात का जिक्र पिकासो के अभिन्न मित्र और अंतिम साँस लेने तक उनके सचिव रहे मेरियानो मिगुएल मोन्टेनेस ने अपनी किताब में किया है।

'गार्डियन' में रॉबर्ट हफ्स ने लिखा है कि 9 नवंबर, 2014 को 25वीं वर्षगाँठ पर आयोजित समारोह में 'वाल एंथम' (दीवार राष्ट्रगीत) इंग्लैंड के गायक-गीतकार पीटर गैब्रिएल ने प्रस्तुत किया। गिटार पर उनकी धुन पिकासो के संगीत से और गिटार भी पिकासो के गिटार से मिलती-जुलती थी। उतना ही नहीं, जर्मन रॉक सिंगर यूडो लिंडेंबर्ग के प्रोग्राम में भी 'पिकासो बैले' का असर था। 1983 में उन्हें एरिक होनेकर (पूर्वी जर्मनी के चांसलर) ने बर्लिन में प्रोग्राम आयोजित नहीं करने दिया था। लिंडेंबर्ग ने पिकासो स्टाइल पॉप संगीत भी प्रस्तुत किया। पिकासो द्वारा विकसित पॉप आर्ट में पॉप संगीत भी शामिल है। इसे बढ़ावा देने में अमेरिकी कलाप्रेमी नेल्सन रॉकफेलर ने काफी पैसे खर्च किए, वे थे भी पैसेवाले।

उस जमाने में आज की तरह मीडिया को सिर्फ मसालों की तलाश नहीं रहती थी, लेकिन किसी भी खबर या टिप्पणी को चटपटी बनाने के लिए थोड़ी सी नमक-मिर्च मिलानी पड़ती है, तभी रोचक बनती है। खासकर पिकासो जैसे विवादास्पद मसीहा के विषय में विचार किए बगैर तो कुछ लिखा ही नहीं जा सकता। पिकासो की पेंटिंग, शिल्प, थिएटर, नाटक, बैले, नौटंकी, लेखन सबकुछ विवादों से पटा है। सबका ताल्लुक औरत से है, जिनमें पिकासो का संपूर्ण जीवन सराबोर था। जितनी औरतों से उनके संबंध हुए, सबके साथ पिकासो की खट-पट हुई। संबंध टूटने के बाद उन सभी औरतों की पिकासो ने पेंटिंग बनाई। वो आज धरोहर जरूर हैं, मगर विवादों से अछूती नहीं हैं।

इंग्लैंड के पिकासो विशेषज्ञ रिमोथी हिल्टन और अमेरिकी जीवनीकार जॉन बीयर्डस्ले ने पिकासो पर अपनी किताबें सिर्फ उनकी कलाकृतियों पर केंद्रित रखी हैं। खासकर हिल्टन ने तो अपनी किताब में पिकासो को समय से साथ कौन कहे, अपने समय से आगे चलनेवाला महामानव बताया है और उनकी निजी जिदंगी का उल्लेख नहीं किया है। हिल्टन और जॉन के मुताबिक, पिकासो के मीडिया से बात करने में परहेज का कारण यह रहा होगा कि कई औरतों से उनके संपर्क के विषय में ही ज्यादा सवाल उनसे पूछे जाते थे।

न्यूयॉर्क के एक लेखक हफींगटन ने तो अपनी पूरी किताब में कलाकार की कला का कम प्रेमिकाओं/मिस्ट्रेसों का ज्यादा वर्णन किया है।

ऐसी अधिकांश किताबें 1990 के दशक में और उसके भी बाद छपी हैं। उसी समय से बर्नार्ड पिकासो ने अपने दादा की 'मील का पत्थर' मानी जानेवाली पेंटिंग और शिल्पकलाओं को सँजोने का बीड़ा उठाया हुआ है। वास्तव में, यह योजना बर्नार्ड के पिता पाउलो और माँ क्रिस्टीन ने ही बनाई थी, जिसको कार्यान्वित करने का जिम्मा बाद में पुत्र को दे दिया गया। इस काम में उन्हें अपने दादा की तीसरी पत्नी फ्रैंकोइस गिलट से जनमे पुत्र क्लाउड और पुत्री पलोमा से भी सहयोग मिला, लेकिन बाद में उनका मतभेद हो गया; क्योंकि वे लोग विवादास्पद और खासकर औरतों के भोंड़े सौंदर्य चित्रणवाली पेंटिंग को भी शामिल करने के पक्ष में थे, लेकिन बर्नार्ड अपने दादा पिकासो की छवि धूमिल करनेवाली कोई भी पेंटिंग चर्चा में नहीं देखना चाहते थे।

फ्रैंकोइस गिलट अपने पति के संबंध में कई अंतरंग बातें मीडिया को उनके जीवनकाल में ही बताती रहीं। इससे वे काफी नाराज रहते थे और बाद में उससे काफी नफरत करने लगे।

फ्रैंकोइस के बारे में कहा जाता है कि उनकी माँ यहूदी थी और बाद में बर्लिन जाकर एक जर्मन इतिहासकार से शादी करके वहीं बस गईं। फ्रैंकोइस की पिकासो से पहली मुलाकात पेरिस में 1940 में बताई जाती है, जब जर्मनी का कब्जा था।

फ्रैंकोइस गिलट ने लंदन में रहकर पिकासो पर किताब लिखी, जो 1990 में छपी। गिलट स्वयं एक जानी-मानी कलाकार थी और कई वर्षों तक पिकासो के

साथ रहने का अवसर उन्हें मिला। गिलट ने पिकासो की सुपरहिट पेंटिंग और अन्य कामों का उल्लेख सिर्फ उनसे अपने निजी संबंध के आलोक में किया है। पिकासो द्वारा इस्तेमाल किए गए रंगों को उन्होंने रंगों के नए सौंदर्य शास्त्र का प्रणेता बताया है, लेकिन साथ में यह भी लिखा है कि औरत के साथ संबंध जोड़ने के बाद सनकी पिकासो खूँखार हो जाते थे और संबंध-विच्छेद के बाद संवेदनशील होकर उसका स्केच बनाने लगते थे। इससे उनकी पेंटिंग और स्केचों की स्वाभाविक भाव-भंगिमा का रंग बदरंग हो जाता था।

□

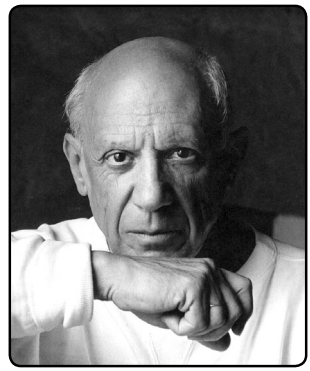

युग निर्माता कलाकार पाब्लो पिकासो

शुरू में ही लिखा जा चुका है कि इस युग, यानी कि बीसवीं सदी के महान्, सबसे ज्यादा चर्चित और प्रभावशाली कलाकार माने जाते हैं—पाब्लो पिकासो। हर विधा, हर क्षेत्र में अपनी छाप पिकासो ने छोड़ी और साहित्य से लेकर राजनीति तक अपना प्रभाव डाला। कला का तो कुछ कहना ही नहीं, उसकी तो दुनिया ही पिकासो की धुरी पर घूमती थी। संपूर्ण विश्व-समाज ही पिकासो से प्रभावित था। उनका पेंट ब्रश बौद्धिकता पर जमी कुंठा की काई साफ करने का काम करता था।

ऐसा सर्वव्यापी अति विशिष्ट व्यक्ति स्वयं किससे प्रभावित हुआ होगा? कैसे महानुभावों ने पिकासो पर प्रभाव डाला, जिनसे उन्हें प्रेरणा मिली, यह जानकारी भी पिकासो की ही तरह रोचक है। उनमें से अधिकांश कलाकार, साहित्यकार और चित्रकार अपने समय के अंतरराष्ट्रीय महारथी थे। साथ-साथ ऐसी गहरी छाप छोड़ गए, जिसकी चर्चा आज भी हो रही है और सदियों तक होती रहेगी। दिलो-दिमाग को झंकृत करनेवाले रचनाकार काल और समय की सीमा से बँधे नहीं होते।

पिकासो की पेंसिल ने स्केच और तैल चित्र (ऑयल पेंटिंग) पर जो रहस्यमय वक्र रेखाएँ बनाईं, उससे कई साहित्यिक कृतियों की सीधी पंक्तियाँ आड़ी-तिरछी हो गईं। पिकासो की कई पेंटिंग और कुम्हार कला के भावों के रहस्य पर से आज तक परदा नहीं उठ पाया है। उनकी मिस्ट्रेसों की तरह कला भी रहस्य-रोमांच से ओत-प्रोत है।

कुछ पश्चिमी लेखक पिकासो के वासनामय प्रेम के प्रति लगाव और दुराव पर विख्यात फ्रेंच साहित्यकार मोपासाँ का असर मानते हैं। पिकासो की तरह

मोपासाँ की रचना भी पाठकों की भावनाओं को गहराई से छू लेती हैं। मोपासाँ ने भी कई प्रेम किए और असफल रहे। उनकी कृतियों पर भी लड़कियाँ दीवानी होती थीं और कुछ दिनों के मेल-जोल के बाद मोपासाँ उन्हें औरत बनाने की जुगत भिड़ाने लगते थे। पिकासो के साथ भी तो यही होता था। मोपासाँ को शादी में ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी।

पिकासो के जन्म (1881) से चार साल पहले की बात है। उस समय मोपासाँ का नाम फ्रांस तो क्या, समूचे यूरोप की जुबान पर था। मोपासाँ की एक प्रशंसिका या फैन कह लीजिए, बहुत दिनों तक छद्म नाम से उन्हें पत्र लिखती रही। मोपासाँ जितना उसके नजदीक जाने की कोशिश करते, उतना ही वो दूर भागती थी। उस प्रेमिका का नाम था मेरी बशकिर्त्से, जैसा कि माना जाता है। उसके कुछ पत्रों के जवाब मोपासाँ ने दिए, लेकिन उसके पहले कि मोपासाँ उसके बारे में कुछ, अर्थात् उसकी असलियत जान पाते, वो अदृश्य हो गई। मोपासाँ कभी नहीं जान पाए कि उन्हें छद्म नाम से प्रेमपत्र लिखनेवाली उनकी यह रहस्यमयी प्रेयसी कौन थी?

ऐसा एक पत्र पिकासो के हाथ लगा। आज तो इस पत्र के विषय में सभी जानते हैं, लेकिन पिकासो को यह पत्र पेरिस के उस क्लब में देखने को मिला, जहाँ लेखकों, कलाकारों का अड्डा जमता था। पिकासो ने पत्र को कैबरे डांस देखने के दौरान पढ़ा। 1884 में लिखे गए पत्र का मजमून ज्यों-का-त्यों प्रस्तुत है—

'मॉश्योर (यूरोप का आदरसूचक संबोधन),

मैंने आपकी कृतियाँ पढ़ीं, कहना पड़ेगा कि बहुत मजा आया। प्राकृतिक सत्यता के साथ, जो आपके लेखन का मूल सूत्र है। इसमें आप एक ऐसी प्रेरणा की खोज कर लेते हैं, जो वाकई अलौकिक है। जबकि आप अपने पाठकों की मानवीय भावनाओं को बहुत गहराई से छू लेते हैं। हम सबको लगता है, जैसे आपके पृष्ठों में हमारा ही चित्रण है और यह एहसास आपके प्रति एक नितांत निजी प्रेम की भावना जगा देता है।

क्या यह एक ऊपरी प्रशंसा है? अपने आप पर भरोसा रखिए, यह एक सच्चा वक्तव्य है। आप समझ सकेंगे कि मैं आपसे बहुत सी बारीक और बेबाक बातें कहना चाहती हूँ, पर यह बड़ा मुश्किल काम है—खासकर इस तरीके से।

यह इस वजह से और ज्यादा खेदजनक है, क्योंकि आपकी महानता आपकी खूबसूरत आत्मा के साथ एकाकार होने के रूमानी स्वप्नों को जगा देती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि आपकी आत्मा बहुत खूबसूरत है, लेकिन अगर ऐसा नहीं है

और आपके बारे में ये बातें सत्य नहीं हैं, तो मुझे सबसे पहले तो आपके लिए बहुत अफसोस होगा। फिर मैं अपने मन से यह बात निकाल फेंकूँगी कि आप इस साहित्य के रचयिता हैं और हमेशा के लिए इससे जुड़े अपने विचारों को भुला दूँगी।

पिछले एक वर्ष से मैं आपको लिखने की सोच रही हूँ। कई बार तो ऐसा करने के काफी करीब पहुँच गई। फिर मैं सोचती कि शायद आपकी योग्यताओं को मैं बढ़ा-चढ़ाकर देख रही हूँ और इस तरह का पत्र लिखने का कोई अर्थ नहीं है।

मगर दो दिन पहले ही एक पत्रिका में मैंने देखा कि किसी ने आपके बारे में तारीफों से भरा लेख लिखा है और आपने उस व्यक्ति को धन्यवाद देने और उसे पत्र लिखने के लिए उसका पता जानने की कोशिश की है। यह पढ़ते ही मैं ईर्ष्या से भर गई। आपकी साहित्यिक योग्यताएँ पूरी प्रचंडता के साथ मेरे खयालों पर छा गईं और यह रहा मेरा पत्र!

और अब मुझे यह भी कह लेने दीजिए कि मैं अपनी पहचान आपसे छिपाकर रखूँगी। दूर से भी आपकी एक झलक पाने की मेरी कतई कोई इच्छा नहीं है; क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि आपकी शक्ल-सूरत मेरे खयालों पर खरी न उतरे!

फिर क्या कहा जा सकता है? मैं आपके बारे में सिर्फ इतना जानती हूँ कि आप युवा हैं और अभी तक आपने शादी नहीं की है। ये दोनों ही बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य हैं—खासकर दूर की चाहत के लिए, लेकिन मैं आपको यह जरूर बताना चाहूँगी कि मैं बेहद मोहक दिखती हूँ। यह मीठा प्रतिबिंब आपको मेरे पत्र का जवाब देने के लिए उकसाएगा।

मुझे ऐसा लगता है कि यदि मैं पुरुष होती, तो एक अधेड़ उम्र की अंग्रेज स्त्री के साथ किसी तरह का संपर्क पसंद नहीं करती, गुप-चुप मिलना तो क्या, पत्र-व्यवहार भी नहीं, चाहे वो कुछ भी सोचती।

—मिस हस्सिं,

मेदेलिन जी.पी.ओ., 1884'

आगे हम देखेंगे कि चित्रकार पिकासो जिस तरह प्राचीन महानतम कलाकारों की कृतियों में डूबकर किशोरावस्था में ही वयस्कवाली परिकल्पना उकेरने लगे थे, ठीक उसी तरह प्राचीन और समसामयिक साहित्य भी वे खूब चाव से पढ़ते थे।

पिकासो वैसे पहले कलाकार थे, जिन्होंने साहित्य की तरह कला को भी समाज का दर्पण बनाया। यही आधुनिक और इस सदी की कला की पहली परिभाषा है।

धरती के इस प्रयोगवादी फरिश्ते का संपूर्ण जीवन ही प्रयोगों से परिपूर्ण है। हमने देखा है कि उनका प्रेम, विवाह और स्त्रियों से संबंध भी प्रयोगों से भरा है। पेंट ब्रश और पेंसिल से पिकासो किसी बेजान चीज को ऐसा जीवंत और रसपूर्ण बनाते थे कि हर कृति में एक नया प्रयोग नजर आता था, लेकिन मानवीय और खासकर स्त्रियों के साथ संबंधों में प्रयोग आजमाने के समय पिकासो भूल जाते थे कि उन्हें अपने ब्रश और तूलिका से किसी स्त्री की बोलती तसवीर नहीं बनानी है, ताकि दर्शक देखकर चित्रकार की मनोभावना समझ जाए।

सामने स्त्री स्वयं सशरीर मौजूद है, जो मनमाने ढंग से खरोंचने पर प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकती है, यह बात पिकासो भूल जाते थे। अपनी इस भावनाशून्य मानसिकता के कारण पिकासो ने स्वयं को और अपनी कई पेंटिंग को भी नीरस और बेजान बना दिया, जो उन्होंने कल्पना से नहीं, स्त्री को साकार देखकर बनाई।

पिकासो के फैन मशहूर चित्रकार सल्वाडोर डाली ने तो यहाँ तक कह दिया कि आधुनिक पेंटिंग और शिल्पकला में जितने प्रयोग पिकासो ने किए हैं, वो इतने व्यापक तथा विस्तृत हैं कि हर प्रयोग पर एक किताब लिखी जा सकती है। सल्वाडोर डाली को 'दूसरा पिकासो' कहा जाता है। उनका कहना है कि आधुनिक कला को समसामयिक समाज से जोड़ने की आधारशिला पिकासो ने ही रखी। सल्वाडोर डाली ने स्वयं भी कई मौलिक प्रयोग किए हैं, लेकिन स्त्री-विमर्श और नारी-त्रासदी को दरशाती सल्वाडोर की शुरुआती पेंटिंग पिकासो जैसी है।

समाज की तसवीर और हर क्षेत्र में सामाजिक बदलाव को अपना मुख्य विषय बनाकर भारतीय पेंटिंग में अपनी विशिष्ट पहचान बना चुकी गोगी सरोज पाल का कला-सिद्धांत बिल्कुल पिकासोवाला है। सरोज पाल ने वैसे प्रेरणा तो ग्रहण की सल्वाडोर डाली से, लेकिन वे अपने गुरु के प्रेरणास्रोत पिकासो को कला-जगत् का अवतार मानती हैं।

पिकासो के पदचिह्नों पर चलकर भारतीय चित्रकला की जानी-मानी हस्ती बनी सरोज पाल का कहना है कि पेंटिंग या किसी भी कलाकृति में उस समय की छाप अवश्य होनी चाहिए, जब वो बनाई जा रही है। उसमें समाज की कल्पना नहीं, आँखों के सामने मौजूद समाज की छवि दिखाई देनी चाहिए। अपनी कला को प्रासंगिक बनाने के लिए आपको समाज में हो रहे परिवर्तनों पर भी नजर रखनी होगी, ताकि पेंटिंग बनाते समय दिमाग में वो सारी बातें रहें।

सरोज पाल ने स्त्री के मनोभावों और दिमाग को पेंटिंग में उतारा, जिसे वे स्त्री

की 'आइकोनोग्राफी' कहती हैं। उनके आइकोन पिकासो और सल्वाडोर डाली को इस कला में महारत हासिल थी।

पाठकों ने पीछे के पृष्ठ पर देखा है कि 15 साल की उम्र में पिकासो का अपना स्टूडियो था। वे उन शिक्षकों के लिए एक चुनौती बन चुके थे, जो 1896 में 'मैड्रिड रॉयल आर्ट अकेडमी' में उन्हें पढ़ाते थे। आत्मविश्वास से भरे पिकासो ने उसी उम्र में अपने को एक निष्णात चित्रकार साबित कर दिया था। उस समय की परंपरागत शिक्षण प्रणाली से चिढ़कर पिकासो ने अपनी शिक्षा पद्धति भी स्वयं निर्मित की और सबको चमत्कृत कर दिया। उन्होंने परंपरागत कला से सीखा जरूर, लेकिन घिसी-पिटी लीक पर चलते रहना स्वीकार नहीं किया। उसी उम्र में वे नए प्रयोग आजमाने लगे, जिससे उन्हें तुरंत पहचान मिली।

पिकासो की अद्‌भुत और विशिष्ट प्रकार की स्टाइल में उनकी फोटोग्राफी भी आज तक लोगों को उनकी याद दिलाती है। पहले वे अपनी कल्पना के विषय बार्सिलोना की सड़कों पर और गाँव-कस्बों में चक्कर लगाकर खोजते थे। फिर उसे कैमरे में कैद करके उसे गौर से बार-बार निहारते रहते थे, ताकि पेंटिंग बनाते समय वो विषय और उसकी तसवीर उनके दिमाग में रहे। बार्सीलोना, पेरिस और बूगिन्स (फ्रांस) में भी अपने स्टूडियो में पिकासो ने एक डार्करूम बना रखा था, जहाँ उन्होंने अंतिम साँस ली।

पिकासो के मित्र व जीवनीकार रोलेंड पेनरोज ने उनकी फोटोग्राफी पर फ्रांस के ही चित्रकार और फोटोग्राफर लुई देगुरे का प्रभाव माना है। अपने समय के प्रसिद्ध फोटोग्राफर लुई देगुरे आधुनिक फोटोग्राफी के जन्मदाता कहे जाते हैं। मनुष्य द्वारा मनुष्य को दिखानेवाला पेरिस की सड़क पर लिया गया लुई का फोटो 1838 का है। ऐसी फोटोग्राफी इतिहास का यह पहला फोटो माना जाता है।

इस फोटो में जो दृश्य क्लिक हुआ है, वो आधुनिक चित्रकला के पुरोधा पिकासो के संपूर्ण पेंटिंग साहित्य पर छाया हुआ है। उस फोटो में सड़क पर जूता पॉलिश करनेवाले के पास एक घोड़ागाड़ी दिखाई दे रही है, जिसमें दो महिलाएँ हैं। घोड़ागाड़ी जिस इमारत के सामने से गुजर रही है, उसकी दूसरी मंजिल की खिड़की से एक बच्चा झाँक रहा है। यह फोटो काफी दूर से लिया गया है, जिसमें पेरिस की सुनसान सड़क पर जूता पॉलिश करनेवाले और करानेवाले को दिखाया गया है। फोटो में दोनों महिलाओं का, बच्चे का और जूता पॉलिश करने/करानेवाले के चेहरे का भी अजीबोगरीब भाव कैद किया हुआ है।

जिस प्रकार उस फोटो में इस्तेमाल कला और तकनीक को 'देगुरे टाइप' कहा जाता है, ठीक उसी तरह पिकासो के भी सारे प्रोडक्शनों को 'पिकासो टाइप' या 'स्टाइल' की संज्ञा दी जाती है।

पिकासो की आत्म-छवि (सेल्फ पोट्रेट) वाली पेंटिंग पर भी अमेरिकी मनमौजी फोटोग्राफर और चित्रकार रॉबर्ट कोर्नेलियस का असर है, जिन्होंने यह कला विकसित की। रसायनज्ञ से फोटोग्राफर बने कोर्नेलियस ने 1839 में एक ऐसी कला का ईजाद किया, जो दुनिया की ऐसी पहली फोटोग्राफिक सेल्फ-पोट्रेट (आत्म-छवि) मानी जाती है। आत्मछविवाली पेंटिंग और कला को अब 'सेल्फी' नाम से शब्दकोश में स्थान मिला हुआ है। कार्नेलियस ने 30 साल की उम्र में इस कला का आविष्कार किया।

मृत्यु से पहले दो-तीन सालों तक के समय में पिकासो ने सबसे ज्यादा सेल्फ-पोट्रेट बनाए।

चित्रकार केसाजीमस वर्ष 1900 में पिकासो के बार्सिलोना स्टूडियो में उनके साथ काम कर रहे थे। केसाजीमस ही उपरोक्त दोनों फोटो साथ ले आए थे। दोनों पेंटरों ने अपने-अपने कक्ष में वो फोटो टाँग रखी थीं। केसाजीमस के जिम्मे स्टूडियो का काम छोड़कर 'ली मूलिन डी ला गेलीटी' पेंटिंग सीरिज पूरा करके पिकासो पेरिस गए। फिर जब वापस बार्सिलोना लौटे, तब खुशी की जगह उदासी उनका इंतजार कर रही थी।

केसाजीमस ने आत्महत्या कर ली थी और उनकी गरदन उसी फोटो पर लुढ़की मिली। उधर पेरिस में आयोजित 'गैलरी वोलार्ड' में पिकासो की पहली पेंटिंग प्रदर्शनी आयोजित थी। भारी मन से पिकासो उसी काम के लिए दूसरी बार पेरिस गए। वहाँ उनकी 15 पेंटिंग मुँहमाँगी कीमत में बिकीं। आशा से कहीं ज्यादा पैसे आए, पहली प्रदर्शनी में ही वे अंतरराष्ट्रीय हो गए और 'पिकासो युग' के पहले चरण 'ब्लू पीरियड' की शुरुआत हुई।

उसके बाद पिकासो बार्सिलोना और पेरिस आते-जाते रहे, लेकिन उस आघात के लिए पिकासो तैयार नहीं थे, इसलिए वे मानसिक रूप से बेहद परेशान रहते थे। हर जगह रम जानेवाले पिकासो खुद को टूटा महसूस करने लगे। मुकद्दर का सिकंदर बनानेवाला भविष्य उनके सामने था। इसका निदान निकालनेवाला भी एक प्रयोग पिकासो ने आजमाया। उन्होंने केसाजीमस के कैमरे से उनके फोटो से फोटो खींची और उसे सामने रखकर केसाजीमस की पेंटिंग बनाकर टाँगी। उस

पेंटिंग को पिकासो ने किसी प्रदर्शनी में बिक्री के लिए नहीं रखा। चार साल बाद बार्सिलोना स्टूडियो को हमेशा के लिए अलविदा करके पिकासो पेरिस के हो गए।

'ब्लू पीरियड' की जगह ले ली 'रोज पीरियड' ने, अर्थात् पिकासो पेंटिंग 'पुनर्जागरण युग' का दूसरा चरण, जिसकी अधिकांश पेंटिंग खिन्नता की खुशबू बिखेरती हैं।

नीरवता में कोलाहल मचानेवाली पिकासो पेंटिंग और उनके थिएटर/बैले/फिल्म और नौटंकी शो से अत्यधिक प्रभावित फ्रेंच लेखिका अनाइस नीन ने उनकी एक प्रदर्शनी में कहा, 'हम चीजों को वैसा नहीं देखते, जैसी वे होती हैं। हम उन्हें वैसा देखते हैं, जैसे हम होते हैं।' यह पंक्ति पिकासो के सारे प्रोडक्शन पर खरी उतरती है।

नोबेल साहित्य पुरस्कार विजेता प्रसिद्ध फ्रेंच लेखक अल्वेयर कामू को भी अपने समय का सर्वाधिक प्रभावशाली और चर्चित साहित्यकार माना जाता है। उनका यह कथन शत-प्रतिशत पिकासो पर लागू होता है—'नेता या अभिनेता बनना आसान है, लेकिन खुशियों की तलाश करना बहुत कठिन होता है।'

पिकासो जीवन भर अंदर से दु:खी रहे और बाहर खुशी ढूँढ़ते रहे। पकी उम्र में देह त्यागा और एक बार चढ़ाव के मस्तूल पर पहुँच जाने के बाद उतार नहीं देखा। अल्वेयर कामू पिकासो के बाद पैदा हुए और पिकासो से पहले चले गए। कामू के बारे में कहा जाता है कि वे पिकासो के ऐसे फैन थे कि अपने बेडरूम, ड्राइंग रूम और स्टडी रूम सबमें पिकासो की पेंटिंग लगा रखी थीं। उनमें पिकासो की विवादास्पद पेंटिंग ज्यादा थीं।

1907 में पिकासो की सुपरहिट पेंटिंग 'लिस डीमोइसेले डी एविग्नोन' को लेकर हंगामा मचा। 1909 में ब्रेक के साथ मिलकर पिकासो ने एक नई विधा 'क्यूबिक पेंटिंग' का आविष्कार किया, तो अल्वेयर कामू ने विद्रोही पेंटर पिकासो पर कई लेख लिखे।

1911 में न्यूयॉर्क में पहली पिकासो पेंटिंग प्रदर्शनी के समय 'न्यूयॉर्क टाइम्स' ने पिकासो पर कामू का लंबा लेख छापा। उस लेख का एक पैरा पिकासो के संपूर्ण प्रोडक्शन को रेखांकित करनेवाला है—'विद्रोह करने के बाद ही जागरूकता का जन्म होता है। प्रोडक्शन मॉडल पर तैयार किया गया समाज सिर्फ प्रोडक्टिव होता है, क्रिएटिव नहीं। पिकासो इस मायने में बेमिसाल हैं, जिन्होंने समाज का ही मॉडल अपने प्रोडक्शन में तैयार किया।'

दुनियादारी समझने के लिए कई मौकों पर खुद को उससे दूर रखना पड़ता है और पिकासो दुनिया के बीच रहकर भी दुनियादारी से दूर रहे; क्योंकि उन्होंने एक बुद्धिजीवी की तरह हमेशा खुद के दिमाग की तरफ ध्यान दिया। किसी अंतिम निर्णय का इंतजार किए बगैर हर दिन एक नया निर्णय किया और विचार-विमर्श में समय खपाने के बजाय, सीधे काम में जुट गए।

पिकासो ने कला की दुनिया का नक्शा बदलने के लिए सदियों से जमी धूल झाड़ने के लिए जो ब्रश उठाया, तो अराजक स्थिति पैदा हो गई। फिर पिकासो ने जब नया नक्शा बनाना शुरू किया तो किसी ने उसे विद्रोह, तो किसी ने क्रांति का नाम दिया।

उस समय यूरोप और दुनिया भर में वादों और विचारधाराओं को लेकर भी अराजकता का दौर चल रहा था। पिकासो को भी उसी में घसीट लिया गया, जबकि पिकासो कला और अपने राजनीतिक संपर्क के मामले में पहले से कायम व्यवस्था खत्म करने के पक्षधर नहीं रहे। उन्होंने हमेशा समय और माहौल के अनुकूल बदलाव तथा नयापन लाना चाहा। चमक कायम रखने के लिए धूल झाड़ी।

□

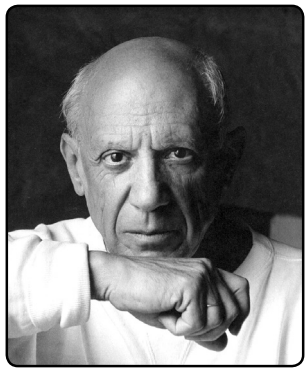

पिकासो और सल्वाडोर डाली

पिकासो पर कला जगत् में अपने विचित्र प्रयोगों से अराजकता फैलाने का आरोप लगानेवाले और इसका प्रचार करनेवाले पहले व्यक्ति थे, सल्वाडोर डाली। यह भी एक अजूबा है कि पिकासो के परम भक्त और अनुयायी सल्वाडोर डाली ने ही पिकासो की सबसे ज्यादा आलोचना की। डाली के कई आरोप तो धज्जियाँ उड़ाने जैसे हैं। सल्वाडोर डाली की एक ही पंक्ति से यह स्पष्ट हो जाता है—'पिकासो ने अपना मूड थोपने के लिए चित्रकला के साथ खिलवाड़ किया और पेंटिंग में जबरन अपनी विधा स्थापित करके इसकी परंपरागत मौलिकता को रौंदा।'

सल्वाडोर डाली भी इस सदी के धाँसू कलाकार में गिने जाते हैं। कई कला समीक्षक और इतिहासकार सल्वाडोर डाली को पिकासो की टक्कर का महारथी मानते हैं। कला की दुनिया में युगांतरकारी परिवर्तन और नयापन लानेवाले दोनों ही कलाकारों के तुलनात्मक अध्ययनों में सल्वाडोर डाली को 'दूसरा पिकासो' कहा गया है। कुछ समीक्षकों ने तो यहाँ तक कह दिया है कि सल्वाडोर डाली ने पिकासो को पीछे छोड़ दिया; क्योंकि डाली ने अपनी पेंटिंग के रंगों और रेखाओं को अंतर्चेतना से जोड़ा। मनुष्य की सुप्त अंतर्चेतना को जगानेवाले बिंबों और भावों को चित्रित करके सल्वाडोर डाली ने लोगों की कल्पना पर ही सीधा धावा बोला। इसलिए डाली की पेंटिंग मन-मस्तिष्क को जब कुरेदने लगती है तो खत्म होने का नाम ही नहीं लेती। दर्शकों का आसानी से पीछा नहीं छूटता।

सल्वाडोर डाली ने अपने समय/युग अर्थात् इस सदी की परिकल्पना को ही चुनौती दी। सल्वाडोर डाली ने जिस युग में अपनी पहचान बनाई, वो निर्विवाद रूप से पिकासो का युग माना जाता है। दोनों का आविर्भाव और कार्यकाल 20वीं सदी

है। जिस प्रकार आधुनिक कला और चित्रकारी का इतिहास पिकासो के बिना नहीं लिखा जा सकता, ठीक उसी प्रकार सल्वाडोर डाली के बगैर 'पिकासो-चर्चा' पूरी नहीं हो सकती।

इस प्रसंग का सबसे रोचक पहलू यह है कि सल्वाडोर डाली ने भी पिकासो की तरह प्राचीन परंपरागत कला की दकियानूसी सोच के खिलाफ विद्रोह से शुरुआत की, लेकिन जब उन्हें 'दूसरा पिकासो' कहा जाने लगा तो डाली ने पिकासो के प्रयोगों से विद्रोह करके नए प्रयोग आजमाए। एक नए उथल-पुथल की नींव डाली और 'पिकासो अराजकता' की जगह नई 'डाली अराजकता' कायम की।

सल्वाडोर डाली के प्रेरणास्रोत थे पाब्लो पिकासो। अति विशिष्ट पहचान बनाने के लिए नए प्रयोगों में समसामयिक विवादास्पद विषयों का समावेश करके तहलका मचानेवाले गुर डाली ने पिकासो से सीखे। दोनों अपनी कला-यात्रा में लगभग मिलते-जुलते रास्ते से गुजरे हैं, लेकिन कुछ पड़ाव ऐसे हैं, जो बिल्कुल मेल नहीं खाते। इसका असली कारण है—उनका पेंटिंग से इतर राजनीतिक और अन्य संपर्क। सल्वाडोर डाली ने अंत तक पिकासो को अपना गुरु माना।

जिस राजनीतिक संपर्क और उस समय के प्रचलित 'इज्मों' (वादों/विचारधारा—मार्क्सवाद-लेनिनवाद, पूँजीवाद, नाजीवाद, फासीवाद) के प्रभाव से पिकासो की पेंटिंग प्रदूषित हुई, उससे सल्वाडोर डाली भी बच नहीं पाए। यह अलग बात है कि मार्क्स-लेनिन की विचारधारा पर टिके पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट सोवियत साम्राज्यवादी खेमे का पतन और सोवियत संघ को सल्वाडोर डाली ने बिखरते देखा। जबकि पिकासो ने उस समय संसार से विदा ली, जब सोवियत संघ अपने उत्थान के चरम बिंदु पर था। अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिम यूरोप के पूर्वी यूरोप से चल रहे ऐतिहासिक शीतयुद्ध का दूसरा मोरचा सोवियत संघ ने थाम रखा था। दोनों ही खेमे के चित्रकार पूरे विश्व में एक नए साम्राज्यवादी विस्तार को प्रगतिशीलता के माहौल में बाँटने के खिलाफ थे।

उनमें बुनियादी फर्क यह था कि पिकासो हर वाद की दुनिया में रम गए। अपनी सुविधा और मूड के हिसाब से उसे अपनाया और किनारा भी कर लिया। ठीक औरत की तरह पिकासो को किसी के करीब आने और उससे दूरी बनाने में ज्यादा देर नहीं लगती थी। पिकासो की मानववादी सोच भी उनकी व्यक्तिगत और घरेलू उलझनों में फँसी रहती थी।

ठीक उसके विपरीत सल्वाडोर डाली ने जिस वाद को पकड़ा, उससे जुड़े

रहे और एकदम से पल्ला नहीं झाड़ा। दोनों के कैनवास में भी फर्क है। पिकासो की पेंटिंग इस मायने में बदनाम है कि उनकी पेंटिंग के सौंदर्य में भोंड़ापन ज्यादा है और नारी देह को उन्होंने अपने मस्तिष्क की तरह विकृत तरीके से चित्रित किया। पिकासो की अधिकांश पेंटिंग वैसी ही हैं। पिकासो की आधी उम्र तक की पेंटिंग नारीमय और औरत के प्रति एक मर्द के कामुक नजरिए से ओत-प्रोत हैं।

आल्फ्रेड एच. जूनियर ने अपनी किताब 'पिकासो कला के 50 वर्ष' में लिखा है कि पिकासो अपनी मानसिक अस्त-व्यस्तता से उबर नहीं पाए और उनकी पेंटिंग के नएपन से कभी-कभी दिमागी दिवालिएपन का भ्रम हो जाता है, लेकिन वे साथ-साथ यह भी मानते हैं कि पिकासो के उन्मुक्त जीवन में इतनी विविधताएँ हैं और कलाकार के रूप में उनका व्यक्तित्व इतना बहुआयामी है कि सिर्फ एक पहलू के आधार पर आकलन या उस पर ज्यादा जोर देने से समीक्षक का विश्लेषण ही हल्का माना जाएगा।

पिकासो की सबसे बड़ी खासियत यह रही कि उन्होंने अपने कॅरियर के आरंभ—12 साल की उम्र से लेकर अपने जीवन के अंत 92 वर्ष तक कभी किसी सिद्धांत, विचारधारा, पंथ या परिपाटी को ज्यादा तवज्जो नहीं दी। उसमें डूबे जरूर, मगर जब बाहर निकले तो उसकी अगली कड़ी बनने की बजाय नई कड़ी जोड़ दी। पिकासो को उत्तराधिकारी बनना गवारा नहीं था, इसलिए आविष्कारक और प्रतिपादक के रूप में स्थापित हुए। विशेषकर राजनीतिक सिद्धांत या प्रणाली से जुड़ते समय पिकासो इसके प्रति सचेत रहते थे कि उनकी कोई पहचान उस दल या व्यक्ति के जरिए न बने। 'कलाकार' पिकासो को उन्होंने भीड़ का हिस्सा नहीं बनने दिया और खुद को ऐसा मणियुक्त बनाए रखा, जिसकी चमक से भीड़ जुट जाए।

दूसरे विश्वयुद्ध की मानव त्रासदी वास्तव में दो ध्रुवों की दादागीरी से उत्पन्न आपसी टकराव का परिणाम थी, इसलिए पिकासो ने फासीवाद और नाजीवाद के जवाब में मार्क्सवाद-लेनिनवाद दोनों को ही नकार दिया। मानवता को एक विध्वंस के जवाब में दूसरा, उससे भी ज्यादा विनाशकारी विध्वंस झेलना पड़ा।

जीवनभर चुनौतियों और आलोचनाओं का सामना करते हुए तमात विघ्नों के बीच अपने रास्ते पर पिकासो चलते रहे। 1944 में पेरिस के नाजी कब्जे से मुक्त होने के बाद पिकासो की पेंटिंग और शिल्पकला का एक नए स्वरूप में पुनर्जन्म हुआ। उन्होंने अपने चारों तरफ लगे तमाम राजनीतिक बाड़ों को एक झटके से तोड़ दिया और चट्टानों के बीच परत-दर-परत सबकी बखिया उधेड़नेवाले पथ का

निर्माण किया। वैसा करने के पीछे पिकासो का एकमात्र मकसद अपनी पेंटिंग पर किसी वाद का दाग न लगने देना था। पिकासो कला पर नाजी/फासी समर्थक होने का आरोप लगा और पिकासो के कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल होने से सोवियत संघ के लोग शान का अनुभव करते थे। वैसे कम्युनिस्टों का अमेरिका तथा इंग्लैंड में भी शानदार स्वागत हुआ। सबको अपने में समेटे पिकासो ने किसी भी आरोप को खुद से सटने नहीं दिया। उनकी पेंटिंग को विश्वस्तर पर प्रतिस्थापित करने में सबसे अहम भूमिका अमेरिका ने निभाई, इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता।

पिकासो के एक और जीवनीकार लायल बर्टनबेकर ने अपनी किताब 'दि वर्ल्ड ऑफ पिकासो' में लिखा है कि कम्युनिस्ट पार्टी को पिकासो ने अपना अपहरण नहीं करने दिया, न ही अमेरिका के नेतृत्व में उपजा पूँजीवाद उन्हें बंधक बना पाया।

पिकासो स्वयं प्रतिपादित इस सिद्धांत पर हमेशा कायम रहे कि कलाकार का अपना अलग धर्म और पंथ होता है, जो उसकी कला से ही निकलता है। पिकासो की सोच के मुताबिक, कलाकार को वैसी किसी स्थिति से समझौता नहीं करना चाहिए, जिसमें उसे अपने को स्थापित करने के लिए कला से इतर अन्य ताम-झाम का सहारा लेना पड़े।

इसी बिंदु पर आकर सल्वाडोर डाली पिकासो के सामने नहीं ठहरते। पिकासो ने सेक्स को प्रतीक बनाकर नारी देह के प्रति आकर्षण और विकर्षण चित्रित करनेवाली पेंटिंग से ही कला जगत् में अपना विशिष्ट स्थान बनाया। पिकासो को इस बात की जरा भी परवाह नहीं थी कि लोग क्या कहेंगे और क्या सोचेंगे! उन्हीं कला समीक्षकों, इतिहासकारों और आर्ट डीलरों के बीच उठते-बैठते, उन्हीं के जरिए पिकासो ने अपनी पेंटिंग की धूम मचाई, जो शुरू में मान्यता देने को तैयार नहीं थे। अपने ही हिसाब से पिकासो ने किसी पुरुष के अंदर नारी संबंध को लेकर जगने वाले इनसान और हैवान की तसवीर पेंटिंग में उतारी। वो देर से ही सही, कलाप्रेमियों के गले के नीचे आखिर उतरी तो!

पिकासो की पेंटिंग और उनके राजनीतिक संपर्क के बारे में टिप्पणियाँ करनेवाले इस पहलू की उपेक्षा कर देते हैं कि वे समय या परिस्थिति के अनुकूल नहीं चले। समय और परिस्थितियाँ पिकासो के अनुकूल हो गईं; क्योंकि वे समय के साथ नहीं, उसके आगे चले।

याद कीजिए, 12 साल की उम्र में पेंटिंग बनानेवाला पिकासो, जिसके बारे में

न्यूयॉर्क के 'सोलोमन गूगेनहीम आर्ट म्यूजियम' के डायरेक्टर थॉमस मेसर ने 1946 की न्यूयॉर्क प्रदर्शनी में कहा, 'अगर किसी गंभीर कलाप्रेमी को पहले से कुछ न पता हो तो एक नजर में यह पेंटिंग किसी मँजे हुए अनुभवी पेंटर की कल्पना लगेगी।' 15 साल की उम्र में जो किशोर व्यावसायिक प्रदर्शनी लगाने की स्थिति में था, वो तो निस्संदेह असाधारण प्रतिभा का धनी था ही, इसे दुनिया के सारे कला समीक्षकों ने माना है।

कच्ची उम्र में प्रौढ़ जैसी गंभीर अभिव्यक्ति से रँगी उसी पेंटिंग से पिकासो ने दौलत और शोहरत बटोरी। शुरुआती दौर में पेरिस की सड़कों पर फटीचर, आवारा की तरह घूमते हुए जब पिकासो गरीबी से छुटकारा पाने के लिए कठिन संघर्ष कर रहे थे, उस समय आर्ट डीलर और शौकिया कलाप्रेमी वो पेंटिंग खरीदने को तैयार नहीं थे। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही बुर्जुआ सोच के वशीभूत वे पिकासो की उम्र देखकर उनकी पेंटिंग को तौलते थे।

आत्मकेंद्रित, अपनी ही धुन में डूबे रहनेवाले पिकासो स्वभाव से ही 'बोलना बहुत कम और करना बहुत ज्यादा' की नीति का पालन करते रहे। उन्होंने अपनी पेंटिंग को बाजार में खपाने के लिए विषय बदला, थीम में फेर-बदल किया और रंग-बिरंगी कल्पनाओं के रंग से उसमें नयापन ला दिया। प्रस्तुत करने के स्टाइल में भी नई तकनीक का समावेश किया, लेकिन आकृतियों की अभिव्यक्ति की मूल भावना को जस-का-तस रहने दिया, ताकि पेंटिंग बाजारू जैसी न लगे।

उस तरह की पेंटिंग ने पिकासो को मालामाल कर दिया। वैसी पेंटिंग को अंतरराष्ट्रीय बनाने में मुख्य भूमिका निभानेवाले उस समय के मशहूर आर्ट डीलर लियो और जेट्रूड स्टीन, बोलार्ड और कॉन्वेलर ने बाद में जो बात बताई, वो पिकासो पहले से ही जानते थे। पब्लिक मूड की रेगिस्तानी शुष्कता से तुलना करके पिकासो के मित्र कवि मैक्स जैकब ने उन्हें उस स्थिति की याद दिला दी, जब पिकासो ने पेरिस के चौराहे पर अपनी पेंटिंग टाँगकर लोगों के विचार जानने चाहे थे। भीड़तंत्र का अपना कोई विचार नहीं होता। उसके विचारों को आकार देने का काम विचारक और चिंतक करते हैं। कला और साहित्य मननशील दिमाग की उपज है, इसीलिए उनका काम देखकर लोग मन-ही-मन सोचने लगते हैं। मैक्स जैकब की योजना के मुताबिक बोलार्ड और जेट्रूड स्टीन ने पिकासो को प्रदर्शनी का समय समाप्त होने के बाद हॉल में आने को कहा।

वो प्रदर्शनी बारी-बारी से मैड्रिड, पेरिस और न्यूयॉर्क तीनों जगह आयोजित

की गई। सबसे पहले पेरिस के 'क्लीवलैंड आर्ट म्यूजियम' की गैलरी में इसका आयोजन किया गया। जेट्रूड स्टीन उसी काम के लिए न्यूयॉर्क से पेरिस आई थीं। 1901 की उस प्रदर्शनी में न तो पिकासो स्वयं मौजूद थे, न ही उनकी किसी पेंटिंग में उनकी उम्र और पेंटिंग की तारीख लिखी थी। कलादीर्घा में गाहे-बगाहे चक्कर लगानेवाले पेंटिंग फोबिया से ग्रसित लोगों के अलावा व्यावसायिक कसौटी के आधार पर मूल्यांकन करनेवाले आर्ट डीलर भी उस प्रदर्शनी में देर तक जमे रहे।

बाद में जेट्रूड स्टीन और मैक्स जैकब ने युवा पिकासो को बताया कि वैसी पेंटिंग कुछ घंटों में ही बिक गईं, जिन्हें पहले बुर्जुआ पेंटिंग संग्रहकर्ताओं ने गंभीर नहीं माना था, अर्थात् जब 14-15 साल के पिकासो ने स्वयं अपनी प्रदर्शनी आयोजित की थी। प्रदर्शनी समाप्त होने के समय से पहले वो सारी पेंटिंग खत्म हो गईं और आयोजक याचकों की माँग पूरी नहीं कर पाए। मैड्रिड में तो और कमाल हो गया। वहाँ की प्रदर्शनी में पिकासो स्वयं मौजूद थे। पिकासो की आदतों के अनुकूल उनके मन के मुताबिक ही वैसा किया गया। मैड्रिड प्रदर्शनी में पिकासो का स्कूल 'रॉयल आर्ट अकेडमी' भी प्रतिभागी था। पिकासो के आर्ट टीचर मौजूद थे, जिनकी पढ़ाई को पिकासो ने समय से काफी पीछे चलनेवाली बताकर बीच में ही स्कूल छोड़ दिया था। अंदाजा लगाया जा सकता है कि शिक्षकों को अपने ऐसे प्रतापी छात्र को देखकर कितना गर्व महसूस हुआ होगा!

मैड्रिड प्रदर्शनी में बार्सिलोना के भी पेंटर कलाकार आमंत्रित थे। पिकासो के उस स्कूल के भी शिक्षकों को न्योता भेजा गया था, जहाँ से उन्होंने पेंटिंग की कायदे से शिक्षा ग्रहण की। उसके पहले, अर्थात् बार्सिलोना में स्टूडियो खोलने (1896) के कुछ महीने बाद पिकासो ने प्रदर्शनी आयोजित करने के लिए अपने स्कूल का सहयोग माँगा। जवाब मिला कि पिकासो को थोड़ा धैर्य रखना चाहिए और इतना हड़बड़ाकर कोई काम नहीं करना चाहिए, इससे बनती हुई छवि बिगड़ भी सकती है।

सबसे ज्यादा सहयोग माँ ने किया और हौसला बढ़ानेवाले तो पिता थे ही। उन्हीं स्कूल शिक्षकों ने पिकासो के पिता को यह कहकर गद्गद कर दिया कि पिकासो की कल्पना में किसी फरिश्ते की शक्ति है। तभी तो उसे बाहर से न दिखाई देनेवाली आसमान से भी ऊपर ब्रह्मांड की अनंत ऊँचाई और सागर की अतल गहराई भी नजर आती है।

पिकासो ने प्रकृति से नीला रंग लिया—आसमान और सागर का रंग नीला

होता है। 'ब्लू पीरियड' के नाम से मशहूर 1901–1904 की अवधि की पिकासो की सुपरहिट पेंटिंग में नीले रंग का भरपूर इस्तेमाल हुआ है। पेंटिंग तो नीले वाटर कलर से रँगी हैं, लेकिन आकृति के चेहरे के भाव तथा अन्य अंगों का रंग अभिशप्त धरती की असह्य पीड़ा से स्याह पड़ चुका है। आँखों में खून उतर आया हुआ है—कराहती छटपटाती मानवता है। उसी नीले रंग में मन और शरीर की सुंदरता भी है, अंतर्चेतना में झन-झन करनेवाली रूमानी आत्मा की स्वरलहरी भी है।

बार्सिलोना में दर्शकों ने इसे बिना सोचे-समझे उकेरा गया रंगों का दिग्भ्रमित कैनवास करार दिया, लेकिन इससे पिकासो एक मिनट के लिए भी न तो विचलित हुए, न ही उनका हौसला टूटा। वे अपने काम में जरा भी बदलाव नहीं लाए और अपने गुरुजनों व बुजुर्गों की टिप्पणी को एक सिरे से खारिज कर दिया।

ऐसी नकारात्मक और एक नजर में बेतुकी बताकर स्वीकार न की जानेवाली टिप्पणी पेरिस से लेकर न्यूयॉर्क तक पिकासो का पीछा करती रही।

पहली टिप्पणी की चुनौती भी जंग और घुन लगी रूढ़िवादी परंपरा के आधार पर बनी कहावत 'घर की मुरगी दाल बराबर' को चरितार्थ कर रही थी। उस चुनौती का सामना करते हुए पिकासो को उन बंद सीलन भरी गलियों को तोड़कर खिड़कियों और दरवाजों से खुली हवा तथा रोशनी आने का इंतजाम करना था। उसी सीखने की उम्र में पिकासो ने अपने अंदर ऐसी दृढ़ता पैदा कर ली थी कि वे जरा भी टस-से-मस नहीं हुए, न ही घबराए। न तो काम करने का तरीका छोड़ा और न ही प्रतिकूल टिप्पणियों से चिढ़कर या उसे अपने में कोई कमी मानकर परंपरागत पेंटिंग की नकल करने की सोची।

प्रतिकूल टिप्पणियों ने पिकासो का पीछा किया और पिकासो ने उन टिप्पणियों का। पिकासो ने किसी व्यक्ति या समाज को नहीं, सामाजिक व्यवस्था को चुनौती दी थी। उन्होंने एक ही तरह के बने-बनाए साँचे में ढली कलाओं में नई क्रांति तथा परिवर्तन लाने का बीड़ा उठाया था। दूसरी चुनौती पिकासो के लिए ज्यादा संघर्षपूर्ण थी; क्योंकि राजनीतिक उलटफेर के हिसाब से चित्रकला की दुनिया लोग बदलने को तैयार नहीं थे। कला के मठाधीश सत्ता की तरह किसी नई करवट या हलचल से हिलना नहीं चाहते थे, ताकि उनका सिंहासन न हिले।

अपनी पेंटिंग पर गंभीरता और अद्‌भुत का बिल्ला लगाने के लिए पिकासो ने उन चेतन मस्तिष्क की परिकल्पना को भी प्रतीकात्मक बोलती पेंटिंग में उतारकर सभी आलोचकों को कुरेदा।

पिकासो पहले चित्रकार थे, जिन्होंने महसूस किया कि धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक वादों/सिद्धांतों की तरह चित्रकला का भी अपना एक वाद होना चाहिए, ताकि उसकी समाज में अलग पहचान हो। पिकासो का तात्पर्य मुख्य रूप से पेंटिंग से था और इसी क्षेत्र में उन्होंने कई वादों को जन्म दिया। 'क्यूबिज्म' से ही निकालकर उन्होंने 'अवचेतनवाद' (सरियलिज्म) में एक नया 'पिकासो सिद्धांत' जोड़ा। इसकी रहस्यमय अभिव्यक्तिवाली पेंटिंग पर कोई टिप्पणी करते समय कला समीक्षक भी चक्कर में पड़ जाते थे।

सबसे ज्यादा सिद्धांत विज्ञान के क्षेत्र में प्रतिपादित हुए हैं और मानव सभ्यता पर हावी रहे हैं तथा हमेशा हावी रहेंगे। बाद में चिंतकों और दार्शनिकों ने इसे अध्यात्म से जोड़ दिया। यह नौबत उस समय आई, जब विकास और विनाश पर आधारित वैज्ञानिक युग में दुनिया का भविष्य तय करनेवाले शक्तिशाली देश विज्ञान की इन दोनों परिणतियों के बीच सेतु नहीं बना पा रहे थे।

दो विश्वयुद्धों के महाविध्वंस के बाद विज्ञान का अध्यात्म से समन्वय स्थापित करने की बात सोची गई। पीछे आपने देखा है कि दोनों युद्धों के पिकासो चश्मदीद गवाह और भुक्तभोगी भी थे। यह युद्धोत्तर अध्यात्म 'सरियलिज्म' (अवचेतनवाद) से निकला हुआ है।

पिकासो ने विज्ञान के विनाशकारी पहलू को छोड़ दिया। अध्यात्म को उन्होंने अपने मन में सेक्स की जगह नहीं लेने दी। जिन वैज्ञानिक प्रतीकों का पिकासो ने अपनी पेंटिंग की अभिव्यक्ति के लिए सहारा लिया, उसका असली उद्देश्य पेंटिंग में एक नया प्रतीकवाद चलाना था। मानव विज्ञान के साथ-साथ पिकासो ने मनोविज्ञान को भी पेंटिंग से जोड़कर अवचेतनवाद चलाया। अवचेतनवाद से ही पिकासो ने साहित्य की तरह पेंटिंग और अपनी अन्य कलाकृतियों में भी यथार्थवाद की शुरुआत कर डाली।

इन तमाम वादों में पिकासो ने सारी पेंटिंग के लिए मानव मन-मस्तिष्क के अंदर से प्रतीक निकाले। चेतन या अवचेतन मन में, सोते या जागते पनपनेवाली विकृतियों और अव्यक्त वासनाओं को बाहर निकालकर उसकी पेंटिंग बना दी। सपनों को भी चित्रित कर दिया—यह है अवचेतनवाद का मूल सिद्धांत। पिकासो ने इसे ज्यों-का-त्यों मूल रूप में चित्रित कर दिया है, जैसे अवचेतन मन में कोई विकृत वासना पनपती है और कुलबुलाती रहती है। इसका असली कारण परिवार, समाज के भय से उसके पूरा न होने की छटपटाहट है। उस स्थिति में दिमाग सही

काम नहीं करता, इसलिए हर काम में मन का चिड़चिड़ापन अजीब-अजीब रूपों में सामने आता है।

पिकासो ने अपने-आप को अंदर से खानेवाली इस मन:स्थिति का रेखांकन करने के लिए किसी बाहरी आयाम की मदद नहीं ली। सेक्स से जुड़ी हिंसा और हिंसा से जुड़े प्रेम को उनके दिमाग पर सवार शैतान ने अपने आगोश में ले रखा है। इससे प्रकृति प्रदत्त स्वाभाविक मानवीय-भावना पिकासो के अंदर स्वयं को असहज महसूस करती है, जिसे पिकासो ने बिल्कुल सहजता से उकेर दिया है। इसलिए पिकासो के भावों में मौलिकता है। जिन प्रतीकों के जरिए पिकासो ने मानव मस्तिष्क के नेगेटिव लेंस निकाले, वो 'प्रतीक विज्ञान' कहलाया। उसके आविष्कारक और प्रतिपादक पिकासो थे। वैसा सिद्धांत और प्रयोग साथ-साथ करने की कला पिकासो से पहले किसी चित्रकार के दिमाग में नहीं उपजी थी। किसी कला वैज्ञानिक ने सोचा भी हो तो इतना साहस नहीं जुटा पाए कि खरी-खरी व्यक्त करके कसौटी पर कसें और अच्छे या बुरे परिणाम की परवाह न करें। उसके लिए पहली शर्त है कि आप जिस क्षेत्र में भी किस्मत आजमा रहे हों, उसमें आगे कदम रखने के समय फूँक-फाँक न करें, सोचने-समझने में वक्त बरबाद करने के बजाय झटके से आगे बढ़ें। अनुकूल या प्रतिकूल प्रतिक्रिया की फिक्र समाज पर और उस क्षेत्र में हाथ-पाँव मार रहे अन्य दिग्गजों पर छोड़ दें, जिनसे आगे आपको निकलना है।

पिकासो को विश्वप्रसिद्ध बनानेवाली 'डीमोइसेलेस डी एविग्नोन' पेंटिंग में पिकासो के मन की दुविधा पागलपन की स्थिति में है। उसमें उनकी बेचैनी मिस्ट्रेसों की देह नोचने के बाद भी दूर नहीं होती और फिर वे बौखलाहट में अपना ही शरीर नोचने लगते हैं, कपड़े फाड़ने लगते हैं। अतृप्ति, असंतोष और बेलगाम बुभुक्षा की पराकाष्ठा पिकासो के अंतरतम से निकली। इसमें न कोई भूमिका है और न आत्मकथा। पिकासो ने स्वयं को ही दाँव पर लगा दिया। इसलिए पिकासो की यह कल्पना अस्वाभाविक नहीं है कि जब मिस्ट्रेसों से वे उकताए, गुस्सा हुए और नफरत की तो मिस्ट्रेसों के मन में भी पिकासो के प्रति ऐसे भाव जरूर जगे होंगे। जिन मिस्ट्रेसों से ऊबकर पिकासो ने उन्हें छोड़ दिया, या जिन्होंने पिकासो के दुर्व्यवहार से खिन्न होकर उनसे किनारा कर लिया, उनके मन में भी बवंडर उठे ही होंगे। मानव स्वभाव के अनुसार स्वत: स्फूर्त उदात्त प्रेम हिकारत या नफरत से कम नहीं होता। बस, कुछ पलों के लिए दब जाता है। प्यासी आत्मा पछाड़ती रहती है।

इसकी जड़ में है सेक्स, जिसके हर पहलू को पिकासो ने बिना किसी दुराव-छिपाव के अपनी पेंटिंग और मूर्तियों में उभारा।

उनकी पेंटिंग के ऐसे प्रयोग बार्सिलोना के वेश्यालय से शुरू होते हैं, जो एविग्नोन स्ट्रीट का मशहूर कैबरे हॉल था। वहाँ पिकासो नियमित रूप से जाते थे। 1906-07 की पिकासो की पेंटिंग का क्लाइमेक्स है—'क्यूबिज्म' (कोणवाद)। उनमें उकेरी गई आकृतियों की मुद्राओं में इतनी विभिन्नता है कि हर कोण एक नए दृष्टिकोण का परिचायक है। इस पेंटिंग का नाम ही पिकासो ने उसी दृष्टिकोण से जोड़ा—'डीमोइसेलेस डी एविग्नोन'—अर्थात् 'बार्सिलोना का एविग्नोन स्ट्रीट'।

70 साल से ज्यादा समय तक पिकासो ने जितनी नई खोजें कीं, जितने नए स्टाइल आजमाए, उसका भी क्लाइमेक्स इसी पेंटिंग में है। नग्नता के पाँच कोणों से किसी में आधी, किसी में पूरी निर्वस्त्र औरतें एक फल के चारों ओर इकट्ठी दिखाई गई हैं। उनमें पाँचों की मुद्राओं में अलग-थलग भाव हैं। किसी में हाहाकार है, आक्रोश है, किसी का निरपेक्ष भाव है तो किसी में वितृष्णा है, लेकिन सब उसी एक फल को काटना चाहती हैं। बार्सिलोना की ही पेंटिंग है, 'एल्स क्वाग गैट्स' (चार बिल्लियाँ)। एक-दूसरे की देह नोचती ये बिल्लियाँ आहत भावनाओं से पीड़ित औरतों का प्रतीक हैं। पिकासो की पेंटिंग में चित्रित हर नारी की पीड़ा उजागर हुई है और किसी की भी भाव-भंगिमा सामान्य मानसिक अवस्था की द्योतक नहीं है।

पिकासो ने अपने समय के स्थापित परंपरागत चित्रकारों से सीखा जरूर, लेकिन उसमें नया स्टाइल देकर अपना विशिष्ट प्रभाव छोड़ा। इसलिए आधुनिक चित्रकला के पिकासोवाद में कई वाद समाए हैं। इन्हें परिभाषित करने, व्याख्या अथवा विश्लेषण करने के लिए किसी अन्य वाद से जोड़ने की जरूरत नहीं है, जो विज्ञान का वाद कहलाता है। बेचैन करनेवाली जिन कुंठाओं को हम शब्दों में या वाणी से व्यक्त नहीं कर पाते, उसे पिकासो ने रंगों और वक्र रेखाओं के माध्यम से खुलकर बोल दिया।

फ्रायड का विश्वप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक सिद्धांत का मूल आधार यही है कि—'मनुष्य की सारी क्रियाएँ उसके अवचेतन में बैठी कुंठाओं से परिचालित होती हैं।' जीवन के अन्य क्षेत्रों की आकांक्षा पूरी न होने या असफलता की हताशा व्यक्ति को ज्यादा समय तक परेशान नहीं करती, लेकिन सेक्स की कुंठा व्यक्ति को जीवन भर परेशान करती है और यही सबसे ज्यादा मन को मथती है। कुंठा अवचेतना

में स्थायी भाव से कुंडली मारकर बैठी रहती है, क्योंकि चाहत का कभी अंत नहीं होता।

इस मानसिक अव्यवस्था को अपनी कला में चित्रित करके पिकासो ने पेंटिंग का एक अभूतपूर्व सिद्धांत चलाया, जो मनोवैज्ञानिकों के लिए भी आकर्षण और कौतूहल का विषय बना। न्यूयॉर्क के 'मॉडर्न आर्ट म्यूजियम' में रखी पिकासो की पाँच औरतों की एक फल को घेरकर विभिन्न मुद्राओं में बोलती और उससे मिलती-जुलती अन्य पेंटिंग पिकासो की सुपरहिट कृतियों में गिनी जाती हैं। ये सारे प्रयोग पिकासो के अपने मनगढ़ंत हैं और स्वत: विश्लेषणात्मक हैं; क्योंकि पेंटिंग में वर्णित मुद्राएँ देखने से कामुक और परखने से आक्रामक लगती हैं।

ठीक इसके विपरीत, सल्वाडोर डाली का अवचेतनवाद या इसे कुंठावाद कहें, पिकासो से बिल्कुल अलग हटकर है। डाली की ऐसी पेंटिंग और मूर्तियों में कला का सिर्फ अपनी मनोवृत्ति पर टिका विज्ञान नहीं है, बल्कि वो परिमार्जित और फ्रायड के साथ-साथ कई अन्य वैज्ञानिक सिद्धांतों में मिश्रित है। सल्वाडोर डाली के ही अनुसार, आधुनिक कला के प्रयोगवादी पिकासो की पेंटिंग में इस्तेमाल हर रंग, हर रेखाकृति एक नई सोच, नई परिकल्पना है। जिस पेंटिंग को आलोचकों ने विकृत मस्तिष्क की उपज बताया, उसे उन्हीं लोगों ने 'विकृतिवाद' कहकर महिमामंडित किया।

पिकासो और सल्वाडोर डाली दोनों ने ही अपनी कल्पना को आकार देने के लिए जिन प्रतीकों का सहारा लिया, वो भी एक अलग वाद (प्रतीकवाद) के नाम से कला के इतिहास में दर्ज हुआ। पिकासो की अभिव्यक्ति में असीम गहराई है, जिसमें दुनिया के सारे शास्त्रों और कला तथा साहित्य के ग्रंथों का सार मिल जाता है। जिन बाहरी कारणों और खुली आँखों के सामने की परिस्थितियों के चलते काम, क्रोध, हिंसा, तीखी प्रतिक्रिया या कोई अन्य बलवती इच्छाएँ व्यक्त होकर बाहर नहीं निकल पातीं, वो मन में अंदर की परेशानियों का कारक बन जाती हैं। मानस-पटल की अप्रिय और विचलित करनेवाली स्मृतियों की जगह ले लेती हैं। मानव स्वभाव में नकारात्मक सोच की प्रधानता रहने के कारण व्यक्ति उनसे उबर नहीं पाया। लेखक की तरह कलाकार को भी प्रतिकूल माहौल में सामान्य रूप से काम करने की कोशिश में वैसी दमित वासनाएँ बार-बार नाकाम करती हैं।

अवचेतन के सुप्त और जाग्रत् चेतना की अवस्थाओं में अनवरत चलती रहनेवाली गुत्थम-गुत्थी का सीधा प्रभाव आचार-व्यवहार तथा दिनचर्या पर पड़ता

है। समय गुजरता जाता है और कलाकार, लेखक अपने कामों में उसे जोड़-जोड़कर उससे निजात पाने के प्रयास में जुटा रहता है। स्वभाव में, आदतों में चिड़चिड़ापन, बदमिजाजी, बेतुकी हरकतें और अनायास उत्तेजना जैसी असामान्य गतिविधियाँ सहज परिणाम हैं। कुलबुलानेवाली ऐसी निराकार इच्छाएँ अवचेतन मन के अंदर जिस तरह घुमड़ती रहती हैं, उसी की अभिव्यक्ति जाग्रत् चेतना को दिग्भ्रमित करके बाहर निकलती है। इसलिए बौखलाहट और झुँझलाहट से ओत-प्रोत पिकासो के 'अवचेतनवाद' ने उनके 'कोणवाद' (क्यूबिज्म) पर भी जबरदस्त असर डाला है। पिकासो ने वैसी अवस्थाओं को अपनी ज्यामितिक रेखाओं में उतार दिया, जहाँ विज्ञान और मनोविज्ञान दोनों पिछड़ जाते हैं। ऐसे रास्तों पर पिकासो और डाली साथ-साथ चल रहे हैं।

1925 में इसी वाद का चित्रण करनेवाली पिकासो की बहुचर्चित पेंटिंग 'थ्री डांसर्स' (तीन नर्तकियाँ) अवचेतन सिद्धांत की 'क्यूबिक अभिव्यक्ति' है। लंदन की 'टेटे आर्ट गैलरी' में रखी इस पेंटिंग के बारे में इंग्लैंड के प्रसिद्ध चित्रकार एडवर्ड जेम्स ने कहा है—'दमित इच्छाएँ मनुष्य के अवचेतन मन को कभी-कभी जघन्य और अमानवीय कृत्यों की ओर खींचकर ले जाती हैं। उस समय विवेक काम नहीं करता और कुछ अनहोनी घट जाने के बाद वही मन पश्चात्ताप में गलता रहता है। पिकासो की 'थ्री डांसर्स' वैसी मानसिक अवस्थाओं के गुँथे हुए कोण हैं, और हमारे युग की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति है। इसमें आईने की तरह अपना चेहरा नजर आता है।'

एडवर्ड जेम्स ने पिकासो के अनुयायी के रूप में सल्वाडोर डाली के साथ मिलकर 'सरियलिज्म' (अवचेतनवाद) और 'क्यूबिज्म आंदोलन' को विश्वव्यापी बनाया। डाली के प्रतीकों में भी कई विचित्रता, बेढंगापन है और सेक्स पिकासो से ज्यादा है। मनोविज्ञान पिकासो ने नहीं पढ़ा था, लेकिन वे मन की भाषा पढ़ना जानते थे। इसलिए स्वप्न में भी देखी गई मानसिक उथल-पुथल को उन्होंने चित्रित किया और उसे अपनी कल्पना से रंगीन बनाया।

1920 के दशक की पिकासो की ऐसी पेंटिंग ने सल्वाडोर डाली के अलावा आंद्रे डेरेन, जॉजियो डी शिरिको, गीनो, सीवीरीनी, ज्याँ मेत्जिंगर सरीखे कई यूरोपीय कलाकारों को पिकासो का फैन बनाया।

सल्वाडोर डाली ब्रांड अवचेतनवाद आंदोलन की विशेषता बयाँ करती दो पेंटिंग लंदन की 'टेटे आर्ट गैलरी' में पिकासोवाली कतार में ही एडवर्ड जेम्स ने लगवाई हुई हैं। उनमें एक है 'लॉस्टर टेलीफोन', और दूसरी है 'मेई वेस्ट लिप्स

सोफा'। पिकासो की ही स्टाइल में सल्वाडोर डाली ने इन दोनों पेंटिंग में पेट और सेक्स की भूख से उपजे कुरेदनेवाले मनोभावों को चित्रित किया है।

'मेई वेस्ट लिप्स सोफा' वाली पेंटिंग सल्वाडोर की प्रेमिका रही अदाकारा मेई वेस्ट पर केंद्रित है। उसे देखकर लगता है कि पेंटिंग का सारा समय शुरू से आखिर तक डाली ने मेई वेस्ट के होंठ के पास गुजारा। वे वेस्ट को पाने में असफल रहे और उसकी खीझ डाली की रेखाओं से झलकती है।

'पिकासो फैन' बनने के बाद उनके प्रभाव में आकर सल्वाडोर डाली में भी आवारगी और उद्दंडता आ गई। 1926 में इसके लिए डाली को आर्ट स्कूल से निकाल दिया गया।

ठीक पिकासो की तरह असाधारण प्रतिभा के धनी सल्वाडोर ने भी मैड्रिड में ही प्राचीन और आधुनिक कला का प्रशिक्षण लिया। उस समय के मशहूर आवासीय आर्ट स्कूल 'रियल अकेडमिया डी बेल्लास आर्टेस डी सान फर्नेंडो' में 1922 में सल्वाडोर ने दाखिला लिया और जाने के साथ ही छा गए। युवा सल्वाडोर के व्यक्तित्व के हर पहलू में आकर्षण था, लेकिन उसका सबसे विशिष्ट पहलू था—पेंटिंग में क्यूबिक स्टाइल का प्रयोग, जिसने सबको आश्चर्य में डाल दिया। उनके सारे शिक्षक भौचक रह गए और सल्वाडोर की अपने सहपाठियों के बीच एक अलग पहचान बन गई।

1924 में क्यूबिक आर्ट की पेरिस में धूम मची थी। इसी में गुँथी अवचेतन की भड़ास चित्रित करनेवाली पेंटिंग को अंतरराष्ट्रीय चर्चा का विषय बनानेवाले पिकासो का नाम हर किसी की जुबान पर था। बहुत सारे, और खासकर सेक्स से जुड़े अध्याय पढ़ने की उस समय ईसाई प्रभुत्ववाले समाज में मनाही थी। प्राचीन कला में आधुनिकता का पुट देकर पिकासो ने जो नया आंदोलन चला रखा था, उससे शिक्षक आंदोलित नहीं हो रहे थे। वे या तो गणित और दर्शन को जोड़कर निकले हुए इस नए वाद का गूढ़ अर्थ समझ नहीं पा रहे थे, अथवा समझते भी हों तो छात्रों को बताने तथा समझाने में असमर्थ साबित हो रहे थे। उसमें बाहर से ओढ़ी हुई नैतिकता और तथाकथित आदर्श का लबादा शिक्षकों को यथार्थ स्वीकारने में बाधक बन रहा था। वैसे घुटन भरे माहौल में किशोर सल्वाडोर ने अपने मन की प्राकृतिक प्रक्रिया को पेंटिंग में उतार दिया, तो तहलका मचना स्वाभाविक था। उनके शिक्षकों ने तूफान खड़ा कर दिया और उस समय की शिक्षा नीति के हिसाब से मैड्रिड का शैक्षिक वातावरण प्रदूषित हो गया।

आखिरकार तय हुआ कि सल्वाडोर को स्कूल से निकाल दिया जाए, क्योंकि इसके रहने से कला प्रशिक्षण में अराजक स्थिति पैदा हो जाएगी। वस्तुत: वो स्थिति आ ही गई, जिसकी संभावना जताकर कूपमंडूक शिक्षक समुदाय वास्तविकता पर परदा डालने की असफल कोशिश कर रहे थे।

'अकेडमिया आर्ट स्कूल' से चार साल बाद सल्वाडोर को ठीक उस समय निष्कासित कर दिया गया, जब उनका फाइनल इम्तिहान करीब था। स्कूल प्रशासन ने सल्वाडोर को अकेडमी में अराजकता फैलाने का दोषी पाया, लेकिन उन चार वर्षों में अपने स्कूल को सल्वाडोर ने जो कुछ दिया और जो कुछ पढ़ाई से इतर हासिल किया, उससे वे अपने चित्रकार जीवन के सभी इम्तिहानों में अव्वल रहे। सल्वाडोर को अपने स्कूल की फाइनल परीक्षा में शामिल न होने और डिग्री न ले पाने का मलाल नहीं रहा।

इसका श्रेय सल्वाडोर पाब्लो पिकासो को देते हैं; क्योंकि क्यूबिक प्रयोग ने सल्वाडोर को इतना चर्चित बना दिया कि उनकी चर्चा मैड्रिड से निकलकर पेरिस तक पहुँच चुकी थी। उस समय तक पिकासो कृत क्यूबिक आर्ट का अराजक साम्राज्य समूचे यूरोप में फैला हुआ था। उसी वर्ष 1926 में सल्वाडोर डाली पेरिस में पिकासो से मिले और उनका साधुवाद प्राप्त किया। यह अलग बात थी कि सल्वाडोर ने पिकासो से प्रेरणा पाकर इस अराजक आर्ट से अपने कॅरियर की शुरुआत की, लेकिन कुछ ही वर्षों बाद वे सरियलिस्ट आंदोलन (अवचेतनवाद) से जुड़ गए। सरियलिस्ट पेंटिंग और ड्राइंग में सल्वाडोर डाली पिकासो से ही नहीं, पिकासो के समकक्षों से भी आगे निकल गए।

पिकासो और सल्वाडोर डाली का तुलनात्मक अध्ययन करनेवाले जीवनीकार क्लाउड सेर्नूशी ने लिखा है कि पिकासो के क्यूबिक आर्ट में अराजकता तथा रहस्यवाद ज्यादा है। दोनों ही महान् कलाकारों ने यूनानी, रोमन और अपने देश स्पेन के प्राचीन पेंटरों से प्रेरणा ग्रहण की। पिकासो की पेंटिंग और मूर्तियों में विचित्रता तथा विविधता इतनी जटिल है कि कला समीक्षक किसी नतीजे पर नहीं पहुँच पाए। जबकि सल्वाडोर डाली ने क्यूबिज्म को सरियलिज्म से जोड़कर इसे व्यावसायिक और व्यवस्थित रूप दे दिया। सल्वाडोर की पेंटिंग को परखते हुए कोई निष्कर्ष निकाला जा सकता है, कोई धारणा बनाई जा सकती है। कमाल की बात यह है कि उसके लिए भी पिकासो की पेंटिंग की जानकारी जरूरी है।

दोनों ही महान् कलाकारों की विशिष्टता का विश्लेषण विज्ञान, साहित्य और

दर्शन पर केंद्रित है। क्यूबिक आर्ट पिकासो की सबसे बड़ी देन मानी जाती है, लेकिन इसका गणित उस रेखागणित (ज्योमेट्री) से अलग है, जो स्कूल, कॉलेज में गणित (मैथ्स) के छात्र और शिक्षक पढ़ते-पढ़ाते हैं।

पिकासो का क्यूबिक आर्ट दिमाग में चक्र की तरह चलायमान कल्पनाओं का चित्रण है, जो अवचेतन मन-मस्तिष्क में घिरनी की तरह नाचते रहते हैं। ऐसे मनोभावों से व्यक्ति का पीछा नींद में भी नहीं छूटता। स्वप्नलोक में तैरनेवाली सुप्त चेतनाओं को उसी रूप में पिकासो ने उतार दिया। इसलिए उनकी पेंटिंग में उलझन और झनझनाहट है, जो बार-बार दर्शक को चौंकाती है।

इस प्रयोग में शास्त्रों का दर्शन छिपा है। शास्त्रों में चेतना के हमेशा सुप्त अवस्था में रहने का वर्णन है, जिसे योगी, ध्यानी सदियों से जगाते आ रहे हैं। उस दौरान वे जितनी तरह की विचित्र अवस्थाओं से गुजरते हैं, उसमें उद्दीप्त काम भी है, जिसका वे खुलकर बखान नहीं कर पाते।

भारत ही नहीं, पूरे विश्व का प्राचीन और मध्यकालीन इतिहास ऐसे योगियों, ध्यानियों से पटा है। शास्त्रों में इस बात का तो जिक्र है कि इससे मन-मस्तिष्क को शांति मिलती है, लेकिन जाग्रत् चेतना को अशांत करनेवाली अनुभूतियों के विस्तार में जाने से परहेज किया गया है, ताकि 'धर्मग्रंथियों' पर कोई धब्बा न लगे।

पिकासो ने मन की तमाम अशांतियों को निकाल बाहर करके उसे शास्त्रवाद से जोड़ दिया। प्राचीन कला और शास्त्र का विशद अध्यात्म 'पिकासो युग' की आधुनिक कला में सांकेतिक अध्यात्मवाद के रूप में उभरा। क्यूबिज्म में मिस्टीसिज्म भी समा गया। इस अध्यात्म का किसी धर्म या पंथ से कोई सरोकार नहीं है। इसमें छिपा गहरा संदेश सिर्फ प्रतीकों और रेखाओं के माध्यम से पिकासो ने दिया है। इसका रहस्य तरंगायित आकृतियों में डूबने पर पता चलता है।

कला इतिहासकार मेलिसा मैक्विलान ने पिकासो की इस स्टाइल को भी कला की एक नई विधा 'नवशास्त्रवाद' (नियो-क्लासिज्म) कहा। मानवनिर्मित विपदा प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान और उसके बाद त्राहि-त्राहि कर रही संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए उस समय के अधिकांश लेखक, कलाकार अपने-अपने स्तर से हिंसाग्रस्त यूरोप के हृदय परिवर्तन के उपायों में जुटे थे। 1917 में युद्ध समाप्त होने के वक्त ही पिकासो ने अपनी पेंटिंग में अध्यात्म को जोड़कर प्रतीकों से बताया कि हिंसा और सेक्स किस प्रकार मनुष्य को विध्वंस की ओर ले जाती है।

सन् 1900 के बाद का वह समय यूरोप के बौद्धिक समाज का 'नव

पुनर्जागरण' (रेनेसाँ) काल माना जाता है। फ्रायड का सिद्धांत अपने चरम पर था। आइंस्टाइन की 'रिलेटिविटी थ्योरी' दुनियाभर में चर्चा का विषय बनी हुई थी। 1900 में सिग्मंड फ्रायड की किताब 'दि इंटरप्रेटेशन ऑफ ड्रीम्स' (सपनों की व्याख्या) छपी। 1900 में ही मैक्स प्लैंक की 'क्वांटम थ्योरी' छपी।

वैज्ञानिक आविष्कारों के उस युग में विज्ञान के निर्माण और विनाशकारी पहलू पर दुनिया के सारे बुद्धिजीवियों के बीच विचार-विमर्श चल रहा था। उसी माहौल में फ्रायड की नई मनोवैज्ञानिक खोज ने बहस का विषय बदल दिया। विमर्श की जगह मंथन शुरू हो गया, क्योंकि वह मन का दस्तावेज था।

अपने चारों तरफ की हर नई घटना, हलचल के प्रति चौकन्ना रहनेवाले पिकासो हमेशा समय के साथ और कभी-कभी उससे आगे भी चलते थे।

पिकासो फ्रायड से प्रभावित हुए और उन्होंने बहस में भरपूर हिस्सा लिया। पिकासो की उस समय की कलाकृतियों में उसकी स्पष्ट छाप है। उस समय के प्रसिद्ध फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक लेखक और कवि आंद्रे ब्रेटन ने पिकासो को अवचेतनवाद का क्रांतिकारी कलाकार बताया। लेखन में आंद्रे ब्रेटन के जरिए और पेंटिंग में पिकासो के जरिए फ्रांस के लोगों ने 'सरियलिज्म' (अवचेतनवाद) को जाना।

आंद्रे ब्रेटन ने ही सल्वाडोर डाली के बारे में कहा था—पिकासो के बाद कौन? सवाल का जवाब है—सल्वाडोर डाली।

1908 में आयोजित 'प्रथम मनोविश्लेषण कांग्रेस' का अंतरराष्ट्रीय अधिवेशन हुआ। सम्मेलन में शामिल होने के लिए ब्रेटन के साथ जाने को पिकासो इस शर्त पर तैयार हुए कि वे सिर्फ श्रोता के रूप में बैठेंगे। पहली बार इस मनोवैज्ञानिक खोज पर बहस छिड़ी थी कि मन-मस्तिष्क कैसे काम करता है और किस प्रकार उससे सारे कामकाज प्रभावित होते हैं?

खुली आँखों से दिखाई न देनेवाली अवचेतन दिमाग की दुनिया पर जाग्रत् और चेतन दिमाग ने शोध शुरू कर दिया। प्रथम विश्वयुद्ध की विभीषिका के बाद इस अवचेतन विज्ञान के आंदोलन ने बाकी सारे वैज्ञानिक सिद्धांतों को पीछे छोड़ दिया। पिकासो ने कला और विज्ञान की स्टाइलों के बीच सबसे महत्त्वपूर्ण धुरी का काम किया। पहले ही बताया जा चुका है कि पिकासो आधुनिक कला में 'स्टाइलवाद' के प्रणेता माने जाते हैं। जिन कला समीक्षकों को पिकासो की पेंटिंग और ड्राइंग में सिर्फ सेक्स और मन की भड़ास नजर आ रही थी, उन्हें नए सिरे से पिकासो इतिहास

लिखना पड़ गया। जब मानव मन पर हावी हैवानित का मनोवैज्ञानिक इलाज फ्रायड और आंद्रे ब्रेटन खोज रहे थे, उस समय पिकासो मन-पंछी की उड़ानों को अपनी पेंटिंग में कैद करने में लगे थे।

विश्वयुद्ध (1914-1917) और उसके बाद 1920 के दशक तक यूरोप के लगभग सभी कलाकारों ने पिकासो आंदोलन में हिस्सा लिया। विशेषकर आंद्रे डीरेन, जियोर्जियो डी सिरिको साथ कदम मिलाकर चले।

अगर ऐतिहासिक आँकड़ों को ही मानकर चलें, तो उस युद्ध में दस मिलियन से ज्यादा लोग मारे गए और 20 मिलियन से भी अधिक घायल हो गए। यूरोप के सारे अस्पतालों में डॉक्टरों के सामने जिंदगी और मौत से जूझ रहे घायलों के इलाज में सबसे बड़ी बाधा मरीजों पर पड़े मनोवैज्ञानिक असर के कारण आ रही थी। सैनिकों और आम लोगों पर आँखों देखी मौत की भयावहता का ऐसा बुरा प्रभाव पड़ा था कि दहशत तथा खौफ के मारे मरीज बार-बार मूर्च्छित हो रहे थे। होश में लाए जाते ही सारे घायल चीत्कार करके बेहोश हो जाते थे। उन्हें डॉक्टरों के भेष में हमलावर नजर आते थे।

इस स्थिति का मनोवैज्ञानिक निदान खोजने के लिए वियना के सबसे बड़े अस्पताल की ओर से 1920 में एक कमीशन गठित किया गया। उसमें फ्रायड के नेतृत्व में एक सलाहकार समिति गठित की गई। पीड़ित सैनिकों के दिमाग से युद्ध ट्रॉमा निकालने के लिए उनके मनोविश्लेषण के उपाय सुझाने के लिए फ्रायड से कहा गया। सपनों में मौत का साया मँडराते देखनेवाले सैनिकों को भय और आतंक के इस सदमे से उबारना था। उधर आंद्रे ब्रेटन युद्ध के दौरान जख्मी हो-होकर भरती हो रहे फ्रांस के नान्तेस अस्पताल में मानसिक आघात से तड़पते मरीजों का मनोवैज्ञानिक इलाज करने में जुटे थे।

युद्ध के बाद की मानव त्रासदी पर आंद्रे ब्रेटन और पिकासो दोनों ने ही महाविनाश को लेकर अफसोस जतानेवाले शासकों तथा वैज्ञानिकों को जमकर लताड़ा। एक रिपोर्ट है कि अस्पताल के मस्तिष्क रोगवाले जिस वार्ड में ब्रेटन फ्रायड सिद्धांत को व्यावहारिक रूप में आजमा रहे थे, उसका चक्कर पिकासो ने भी लगाया था। अपने आत्मलीन स्वभाव के कारण पिकासो प्रायः मीडिया से कतराते थे। इसलिए आंद्रे ब्रेटन के इस विचार पर उन्होंने सहमति जताई कि अगर विज्ञान विश्व को शांति नहीं दे सकता, तो सुरक्षा की दुहाई देकर अपने अवचेतन दिमाग का खूँखार पागलपन थोपने का उसे कोई हक नहीं है।

वास्तव में वह पिकासो की ही सोच थी और वे अपनी आशा के अनुरूप आंद्रे ब्रेटन के मुँह से सुनना चाहते थे। आइंस्टाइन, फ्रायड और ब्रेटन ने अवचेतन दिमाग की विनाशकारी परमाणु युग प्रवृत्ति में बदलाव लाने की अपील जारी की। उस वक्त पिकासो युद्ध के खौफ से तड़फड़ाती मानवता के अवचेतन को अपनी पेंटिंग में चित्रित कर रहे थे। उनकी व्याख्या सबसे अलग थी।

विनाश से कुपित यूरोप के सारे युवा बुद्धिजीवी फ्रायड और आइंस्टाइन के सिद्धांत में इस बिंदु को जोड़कर देख रहे थे कि मनुष्य के सारे कार्यकलाप, सारी गतिविधियाँ एक-दूसरे से जुड़ी हैं, क्योंकि ये अवचेतन मन की प्रक्रियाएँ हैं। उसमें मैक्स प्लैंक की क्वांटम थ्योरी का भी शामिल होना स्वाभाविक था; क्योंकि इसमें भी दिमाग के कोष्ठ-प्रकोष्ठ में समाए आपस में हमेशा टकराते रहनेवाले विचारों की विज्ञान सम्मत व्याख्याएँ हैं।

लेखक, कवि, दार्शनिक, राजनीतिक और सामाजिक चिंतक सभी को इस मानसिक अंतर्द्वंद्व ने परेशान किया। उन लोगों ने अपने-अपने हिसाब से उसका विश्लेषण किया। अपनी रचनाओं का विषय बनाया। अंतरराष्ट्रीय बहस का विषय यही था कि वैज्ञानिक आविष्कारों के विनाशकारी प्रभाव से अगर मानवता को बचाना है तो समाज के अन्य वर्गों को भी ऐसी नई खोज करनी होगी, जो मनुष्य के खौलते दिमाग को शीतलता प्रदान करे।

बर्टेंड रसेल जैसे महान् दार्शनिक भी अपने स्तर से अभियान चला रहे थे। उन्होंने अपनी सभी किताबों, लेखों में विनाश की जगह विकास जैसी मानसिकता लाने के उपाय बताए हैं। रसेल ने प्रथम विश्वयुद्ध रोकने के लिए अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति वुडरो विल्सन को लिखा भी था।

संयोग से पिकासो उस समय न्यूयॉर्क में ही थे और सल्वाडोर डाली अवचेतनवाद में अपना विशिष्ट योगदान दर्ज करने के लिए हाथ-पाँव मार रहे थे। पिकासो अपनी पेंटिंग को दर्शन में खौफबद्ध कर रहे थे।

अन्य चिंतकों में मतभेद अवचेतन मन के अवगुंठन को लेकर था, जो हिंसा के सूखे पाँक से निकल नहीं पा रहा था, लेकिन चित्रकार और कलाकार इतने जाग्रत् नहीं हुए थे कि प्राचीनता को निचोड़ने के अलावा अपने वर्तमान को टटोलें। आकाश, धरती, सागर, वन-उपवन और सूर्य-चंद्र की कल्पनाओं में डूबे रहनेवाले कलाकारों ने समाज को रौंद रही मानसिक विकृतियाँ पैदा करनेवाले अवचेतन पर विहंगम दृष्टि नहीं डाली थी। जिनका उस तरफ ध्यान गया, वे जाग्रत् और सुप्त

चेतना अथवा यों कहें कि चेतन तथा अवचेतन खोपड़ी की हेकड़ी समझ नहीं पा रहे थे। कहने का तात्पर्य यह है कि चेतन और अवचेतन में भेद के ऊहापोह में उलझे थे।

मनोवैज्ञानिकों ने रूसो जैसे विश्वप्रसिद्ध दार्शनिकों के विचारों को आधार बनाकर चित्रकारों को ललकार रखा था। रूसो ने कहा था—'सभ्यता, विज्ञान और कला, ये सारे क्षत-विक्षत उद्वेगों को ढँकने के कृत्रिम प्रयास हैं।'

पिकासो की निजी जिंदगी को आधार बनाकर उनकी तमाम कलाकृतियों में निर्माण और विनाश दोनों ही देखनेवाली लेखिका एरियाना हफिंगटन युद्ध उन्माद दरशा रही पेंटिंग को देखकर खौफ खा गईं; क्योंकि पिकासो ने एक ही साथ खून के प्यासे आक्रमणकारियों और आक्रमण के शिकार लोगों के मन-मस्तिष्क का खाका खींच दिया। उसमें युद्ध के जुनून और उसके मानसिक सदमे से छटपटाते पीड़ितों का खौफ भी अंकित था। फ्रायड और आंद्रे ब्रेटन सोते-जागते सैनिकों की जिस मानसिक अस्त-व्यस्तता का इलाज ढूँढ़ रहे थे, उस अवस्था को पिकासो ने 'सरियलिस्ट पेंटिंग' में उतार दिया। फ्रायड और आंद्रे ब्रेटन की मदद तब ली गई, जब मस्तिष्क रोग की दवाएँ तथा बिजली के शॉक बेअसर साबित हो रहे थे।

लेकिन पिकासो ने जब दहशतगर्द सैनिकों और महिलाओं के खौफ की ही ज्वलंत तसवीर खींच दी तो सबको शॉक लग गया।

पिकासो ने विजेता देशों के सैनिकों द्वारा इनसान की खाल ओढ़कर भेड़िए वाली हैवानी दरिंदगी का चित्र खींचा। उसमें हिंसा और बलात्कार की शिकार महिलाओं तथा बच्चों की चीख है, छटपटाहट है। साथ में, उन्मादी पागलपन का भी विवरण है। पहले महायुद्ध के वर्षों बाद तक युद्ध की आशंकाएँ पिकासो के अवचेतन मन पर हावी रहीं। इसलिए अवचेतनवाद की झलक उनकी 'मीनोटॉर' पेंटिंग में है, जिसमें एक विचित्र कल्पना है। उस कलाकृति में माथा आदमी का और शरीर साँड़ का है। सनद रहे कि पिकासो साँड़ों की लड़ाई देखने के बेहद शौकीन थे।

पिकासो ने इस मायने में काफी सतर्कता बरती कि किसी अन्य अवचेतन सिद्धांत का प्रभाव उनके किसी काम पर न पड़े और सबको बिल्कुल नया प्रयोग नजर आए। इसलिए उन्होंने युद्ध के बाद का नारकीय दृश्य 1917 में इटली में रहकर खींचना शुरू किया।

'सरियलिज्म' (अवचेतनवाद) को पिकासो ने ज्यादा महत्त्व नहीं दिया,

लेकिन उसे बिल्कुल छोड़ा भी नहीं; क्योंकि पिकासो को 'क्यूबिज्म' की तरह पेंटिंग का भी अलग 'सरियलिज्म' चलाना था। इसका जीवंत और मुखरित स्वरूप दूसरे विश्वयुद्ध से पहले तथा उसके बाद की अवधि में उजागर हुआ। पिकासो ने अन्य विधाओं—थिएटर, सरकस, नाटक, बैले, संगीत के जरिए अवचेतनवाद आंदोलन चलाया। दूसरे विश्वयुद्ध के समय तथा उसके बाद के कुछ वर्षों तक साल्वाडोर डाली और पिकासो अमूमन साथ-साथ चले। मगर रास्ते अलग-अलग और विवादों से पटे थे।

फर्क सिर्फ इतना था कि साल्वाडोर डाली आइंस्टाइन और फ्रायड को अपना पिता तथा पिकासो को अपना गॉडफादर मानकर चल रहे थे। 1937 की पेंटिंग 'दि पर्सिस्टेंस ऑफ मेमोरी' (स्मृति का अड़ियलपन) साल्वाडोर की सर्वोत्कृष्ट कलाकृति मानी जाती है। इसमें साल्वाडोर के स्मृतिपटल पर फ्रायड और आइंस्टाइन से ज्यादा पिकासो हावी हैं।

1937 आते-आते महाशक्तियों में अपना-अपना वर्चस्व और अपनी-अपनी दादागीरी कायम करने की होड़ में यूरोप की स्थिति इतनी तनावपूर्ण हो गई थी कि दूसरा महायुद्ध अवश्यंभावी लग रहा था। फासीवादी, मार्क्स-लेनिनवादी ताकतों और इन दोनों को टकराने के मुहाने पर लानेवाले पश्चिम यूरोप में इंग्लैंड, अमेरिकी शासकों की मन:स्थिति का सारे कलाकार जायजा ले रहे थे। उस समय अवचेतनवाद आंदोलन अपने चरम पर था। साहित्य और इतिहास के कथानक—मोरचाबंदी, बचाव, हड़पने, वर्चस्व का जवाबी वर्चस्व और उसके लिए एक इनसान को अपने कलेजे पर पत्थर रखकर दूसरे का कलेजा रौंदने के लिए मजबूर किए जाने के इंतजामवाले घटनाक्रम पर केंद्रित थे। वह सारा कुछ आँखों के सामने घटित हो रहा था।

लेकिन चित्रकार और मूर्तिकार उससे अलग हटकर, उसी तनाव को चित्रित कर रहे थे। युद्ध जैसी परिस्थिति पैदा करनेवाले घटनाक्रमों के लिए जिम्मेदार दिमाग में पहले से ही कुंडली मारकर बैठी जहरीली स्मृति और उसी से बार-बार निकलती विध्वंसकारी मनोवृत्ति अवचेतनवाद के मूल में है। ऐसी प्रतिक्रियावादी स्मृतियाँ पीछा नहीं छोड़तीं, क्योंकि उनका अस्तित्व कभी समाप्त नहीं होता। उससे उत्पन्न मानसिक तनाव मनुष्य के दिमाग में सार्थक सोच को जगह नहीं लेने देता।

विश्व समाज के स्वयंभू ठेकेदारों की चक्की में घुन की तरह पिस रही मानवता की कुंठा को भी अवचेतनवाद आंदोलन के चित्रकारों ने अपनी निजी कुंठा

में शामिल किया। पिकासो इसमें राजनीति का समावेश बिल्कुल नहीं चाहते थे। इसलिए पेरिस में रहते हुए साल्वाडोर डाली, जब अवचेतनवाद आंदोलन चला रहे थे, उस समय तक पिकासो ने अवचेतन कला की दिशा बदल दी थी।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद सोवियत संघ ने 'सर्वहारा की तानाशाही' जैसे भ्रामक कम्युनिस्ट नारे देकर पूर्वी यूरोप को हड़पने का सिलसिला चलाया। लेनिनवाद-स्टालिनवाद को 'वैज्ञानिक समाजवाद' बताकर दुष्प्रचार अभियान चलाया। इस नए वाद ने अवचेतनवाद को भी हड़प लिया और चित्रकला प्रदूषित हो गई। कई चित्रकार या तो कम्युनिस्ट हो गए, अथवा कुछ छुटभैए कम्युनिस्ट सोचवाले चित्रकारों को घुसपैठ कराकर कम्युनिस्ट तानाशाहों ने अवचेतनवाद का अपहरण कर लिया। साल्वाडोर डाली भी उसमें शामिल हो गए, जिन्होंने कला में विज्ञान और खासकर मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को जोड़ा।

साल्वाडोर डाली के अवचेतन में तो पिकासो थे; क्योंकि साल्वाडोर जिस समय अपनी पहचान बनाने के लिए दौड़-धूप कर रहे थे, उस समय तक पिकासो की सारी कलाओं का विश्व साम्राज्य स्थापित हो चुका था।

साल्वाडोर डाली को पिकासो तक पहुँचाने का श्रेय जाता है मैड्रिड के एक स्थानीय चित्रकार रेमन पिर्चाट को, जो हमेशा पेरिस आते-जाते रहते थे। 1924 में जब सारे यूरोप के कलाप्रेमी पिकासो की पेंटिंग के दीवाने थे, उस समय साल्वाडोर डाली ने क्यूबिक पेंटिंग से आधुनिक कला में अपनी उल्लेखनीय उपस्थिति दर्ज की।

पेरिस के वे सारे अखबार, पत्रिकाएँ रेमन पिर्चाट ने लाकर पिकासो को दीं, जिनमें पिकासो पेंटिंग की समीक्षा और खबरें सुर्खियों में छपी थीं। क्यूबिक पेंटिंग की सूची भी दी, जिसमें पिकासो टॉप पर थे; क्योंकि उन्होंने क्यूबिक पेंटिंग की धूम मचा रखी थी। पिर्चाट साल्वाडोर के चित्रकार पिता के मित्र थे। साल्वाडोर के पिता ईसाई थे और डाली के आर्ट स्कूल के पोंगापंथी शिक्षक भी आधुनिक कला के नए परिवर्तनों को मजहबी नजरिए से देख रहे थे। इसलिए ठीक पिकासो की तरह साल्वाडोर डाली का भी पहला विरोध घर से शुरू हुआ और वो स्कूल में भी चला। पिकासो की ही भाँति साल्वाडोर ने भी कला की बुनियादी ट्रेनिंग देनेवाले अपने शिक्षकों को आधुनिक कला की बारीकियाँ समझाने में असमर्थ बता दिया। साथ में साबित भी कर दिया कि शिक्षक स्वयं इतने योग्य नहीं हैं कि कला की बदलती दुनिया समझ सकें, तो फिर छात्र की योग्यता का क्या मूल्यांकन कर पाएँगे?

पिकासो की तरह साल्वाडोर डाली को भी पेंटिंग के शुरुआती दौर, अर्थात्

किशोर उम्र में ही कविताई की संगत मिली। दो कवियों से साल्वाडोर की नजदीकी बढ़ी। उनमें से एक फेडरीको गार्सिया लोर्का की कविताओं में सेक्स की प्रधानता के कारण साल्वाडोर ने उनसे दूरी बनाई।

लेकिन अपनी क्यूबिक पेंटिंग में युवावस्था की ओर बढ़ती उम्र में मानसिक यौन कुटेवों को चित्रित करके साल्वाडोर ने पिता से सीधा पंगा लिया। कैथोलिक ईसाई समुदाय ने हंगामा खड़ा कर दिया और अपने पिता के दबाव के बावजूद साल्वाडोर अपनी आन पर अड़े रहे, लेकिन उसी साल्वाडोर ने पिकासो से जुड़ी अपनी अति महत्त्वाकांक्षा के चलते बार-बार कला की मौलिकता से समझौता करके इसे आघात पहुँचाया। साल्वाडोर डाली की पंक्ति है—'महत्त्वाकांक्षा के बिना बुद्धिमत्ता ऐसी ही है, जैसे पंखों के बिना चिड़िया।' पिकासो जैसा तेज-तर्रार दिमाग तो साल्वाडोर डाली ने भी पाया था। विलक्षण प्रतिभा से उपजे विद्रोही स्वर साल्वाडोर डाली की पेंटिंग, ड्राइंग में उनके वयस्क होने के पहले से ही फूटने लगे थे। हर युग की सभ्यता का इतिहास है कि उस उम्र में युवा मन-पंछी उन्मुक्त गगन में कुलाँचे मारना चाहता है। हर सीमा को तोड़कर पंख और कलरव ब्रह्मांड समेटने को बेचैन रहते हैं।

सभ्यता को सबसे ज्यादा धर्म और आस्था संचालित परंपराएँ प्रभावित करती रही हैं। ऐसी परंपराएँ सदियों तक रेंगती-घिसटती रहती हैं; क्योंकि समाज पर इसे थोपनेवाले मठाधीश प्राय: आस्था की आड़ लेकर अपनी ऐसी प्रभुसत्ता जमा लेते हैं, ताकि उनकी गद्दी हिल न सके। अगर कोई चुनौती देने की जुर्रत करे भी तो समाज उसे इजाजत न दे। साहित्य, कला, संगीत, दर्शन, विज्ञान जैसी संस्कृति और सभ्यता की रचना करनेवाली धाराओं का बहाव रोकने का वे भरसक प्रयास करते हैं; क्योंकि कोई भी नई चीज, नई सोच घिसी-पिटी परिपाटी के खिलाफ तो होगी ही। कुंद मानसिकतावाले ऐसे विकास के मार्ग में रोड़े अटकाने के लिए पहले परिवार को ही अपने मायाजाल में फाँसते हैं।

सभ्यता का इतिहास साक्षी है कि धर्म को ढाल बनाकर मानव तकदीर के तथाकथित स्वयंभू ठेकेदारों ने परिवार, समाज और फिर राजनीतिक सत्ता पर हमले किए। पश्चिम में सत्ता की बदौलत फैले ईसाई धर्म ने लगभग पूरे विश्व को अपना उपनिवेश बना लिया। और जैसा कि आमतौर पर होता है, मठाधीश पादरियों को अपने घर, पश्चिम से ही चुनौती का सामना करना पड़ा।

धर्म, पंथ और वंशानुगत संस्कार का फंदा आदमी को ऐसा जकड़ता है

कि स्वतंत्र सोच दिमाग में ही फड़फड़ाती रह जाती है। उस फंदे की गाँठ इतनी मजबूत होती है कि विद्रोह करनेवाले के लिए खोलना आसान नहीं होता। धर्म से जुड़ा अध्यात्म और रहस्यवाद दिमाग पर ज्यादा असर डालता है; क्योंकि इससे उत्पन्न अदृश्य भय स्थायी रूप से मन-मस्तिष्क के अंदर कुंडली मारकर ऐसा बैठ जाता है कि अबोध मन को भय से उम्र भर छुटकारा नहीं मिल पाता। बड़े होने पर सिर्फ उसके प्रकार बदल जाते हैं। व्यक्तिगत, सामाजिक जीवन के साथ-साथ जीविकोपार्जन और समाज में विशिष्ट नजर आने के लिए संघर्ष की शुरुआत उसी भय से होती है। अवचेतन मन को यही भय सबसे ज्यादा परेशान करता है और इससे उत्पन्न नकारात्मक शक्तियाँ उस पर हावी हो जाती हैं।

अतिरेक में गए बिना अति विशिष्ट कहलाना संभव नहीं है। इसके लिए सबसे पहले सुप्त अवचेतन पर परंपरा और संस्कार की परत-दर-परत जमी काई की सफाई जाग्रत् चेतना के विद्रोह से होती है। यह एक प्रकार से पेंट-ब्रश और पत्थर के टुकड़े की घिसाई के लिए इस्तेमाल होनेवाले औजार की तरह है, जिससे चिकनापन आता है।

अपने मन मुताबिक समाज बनाने के लिए सनकी, जिद्दी और अड़ियल टाइप बनना पड़ता है। समाज के विरोध और निंदा के बावजूद अगर धुन का पक्का आदमी अडिग रहा तो उसका काम रिकॉर्ड में आ जाता है। फिर आलोचना, टीका-टिप्पणी के बावजूद पहचान मिलती है और विशिष्टता की मुहर लग जाती है। इतने ताम-झाम के बिना मान्यता नहीं मिल सकती। अब यह व्यक्ति-विशेष पर निर्भर है कि वह दिमागी तौर पर ऐसी प्रबल इच्छाशक्तिवाले बेकाबू मन को किस हद तक छितराने देता है और सँभाल पाता है!

साल्वाडोर डाली ने अपने दिमाग में उपजे विद्रोह को परिवार और समाज के भय से दबने नहीं दिया—ठीक पाब्लो पिकासो की तरह। युवावस्था की दहलीज पर कदम रखने के समय यौन इच्छा के प्रति तीव्र आकर्षण अवचेतन मन की स्वाभाविक प्रक्रिया है। कोई भी ईमानदार लेखक, कलाकार, चाहे वो महिला हो या पुरुष, अपने को इससे अलग नहीं रख सकता। खासकर पेंटिंग और मूर्तिकला का तो इसके बिना कोई अस्तित्व ही नहीं है। दिमागी उलझनों में सबसे अंदर तक यौन भावना समाई रहती है। धर्म और संस्कार इसमें बाधक बनते हैं। अंधविश्वास से ग्रसित ईश्वर का भय दिखाकर कपोलकल्पित आदर्श सांस्कृतिक क्रांति को कुचलते हैं, जबकि ऐसे बंधनों को काटकर अंधकूप से बाहर छलाँग लगाने के लिए उबलता

मन दिमाग को झकझोरता रहता है। वैसी तनाव की स्थिति में दिमागी उलझन विचित्र ऊल-जलूल हकरतों की ओर ले जाती है।

अवचेतनवाद (सरियलिज्म) के प्रतिपादकों ने 'पुनर्जागरण युग' में अपनी इस सुप्त चेतना को जगाया। वह युग राजनीतिक से ज्यादा सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना के जागरण का माना जाता है। पुनर्जागरण काल में उपजे कलाकारों ने उस समय की सामाजिक स्थिति में बदलाव लाने के लिए अपने दिमाग को उत्पीड़न से मुक्त करके एक नई परंपरा की नींव डाली। यह पहले की रूढ़िवादी आडंबरपूर्ण व्यवस्था से इतनी भिन्न थी कि प्राचीन यूनानी कला सिर्फ ऐतिहासिक संदर्भ तक सीमित रह गई। आधुनिक कला के सभी 'वादों' पर सबसे ज्यादा यूनानी कला ने प्रभाव डाला है।

पिकासो और साल्वाडोर डाली दोनों ही 'पुनर्जागरण युग' से बेहद प्रभावित थे। दोनों ने ही उस समय के गुरुओं से सीखा।

रंगों और रेखाओं के उलझनों से भरे प्रतीकों के माध्यम से मानसिक उथल-पुथल की पेंटिंग नया स्टाइल, नई रीत बनी। कालक्रम में ये सारे अंतर्विरोध पहले नए प्रयोग और फिर कला के नए इतिहास की रचना में सहायक हुए। इसका असर प्रेम और वैवाहिक संबंध पर भी पड़ा—'प्रीत न जाने रीत!' आधुनिक कला का सबसे चर्चित और सबसे ज्यादा समय तक प्रासंगिक रहनेवाला अध्याय है—अवचेतनवाद। पेंटर जोआन मीरो, अवचेतनवादी कवि पॉल एलुअर्ड ने इस अध्यात्म दर्शन की तुलना सनक से की है।

राफेल, ब्रोंजीनो, फ्रांसिस्को डी जुर्बारान, बर्मीर और वीलाजक्वेज जैसे क्लासिकल (शास्त्रीय) कलाकारों से सीखे गुर को आधुनिक क्यूबिक स्टाइल में ढालनेवालों में पिकासो अग्रणी रहे। साल्वाडोर डाली अपने ही देश के दिएगो वीलाजक्वेज के अनुयायी बने।

17वीं सदी के चितेरे स्पेनिश कलाकार दिएगो वीलाजक्वेज पेंटिंग और शिल्प के साथ-साथ पेंटिंग की वक्र रेखाओं की तरह उमेठी हुई घुमावदार मूँछों के लिए भी प्रसिद्ध थे।

साल्वाडोर डाली को मूँछें निकल रही थीं और बेहतरीन कला-कौशल नए स्टाइल के लिए मचल रहा था। उधर युवापन का तकाजा भी हिलोरें ले रहा था। सारी ऊहापोहों की जड़ में थे, उस समय के अवतारी सृजनकर्ता पिकासो। पेंटिंग की तरह उनका प्रयोगवादी विवाह पूर्व और विवाहेत्तर संबंध भी चर्चित था।

साल्वाडोर डाली अपनी मातृभूमि से निर्गत कला और कलाकार के हर रंग का प्रतिनिधित्व करना चाहते थे। मूँछों का कलात्मक डिजाइन वीलाजक्वेज से लिया, जो उम्रभर साल्वाडोर डाली की विशिष्टता का ट्रेडमार्क रहा। पिकासो वाला स्टाइल अपनाकर साल्वाडोर डाली ने फ्रांस के मशहूर अवचेतनवादी फिल्म निर्देशक लुई बुनुएल के साथ मिलकर उसकी पटकथा लिखी। फिर पहला प्रेम एक रूसी महिला एलेना इबानोवा दियाकोनोवा से विकसित किया। हलचल मचानेवाले प्रयोग में पिकासो को पीछे छोड़ने की कोशिश में साल्वाडोर डाली ने अपने से बड़ी उम्र की लड़की से इश्क लड़ाया। 'गाला' के नाम से पुकारी जानेवाली वह महिला शादीशुदा थी और साल्वाडोर डाली के गुरुतुल्य अवचेतनवादी कवि पॉल एडुअर्ड की पत्नी थी।

पाठकों ने पीछे पढ़ा है कि पिकासो की प्रेमिका ओल्गा खोकलोवा उनसे 10 साल छोटी थी और उनके थिएटर तथा बैले आर्ट की फैन थी। उस वक्त पिकासो रूस में थे और सारी पारिवारिक, सामाजिक बाधाओं से मुक्त थे। रूस की बोल्शेविक क्रांति से पहले या उसके बाद की किसी राजनीति से जुड़कर पिकासो को अपनी महत्त्वाकांक्षा पूरी नहीं करनी थी। पिकासो की नई लड़की की तलाश सिर्फ वहीं तक सीमित थी। ईसाई धर्म उनके रास्ते में कभी अड़चन नहीं बना।

लेकिन साल्वाडोर की जाग्रत् चेतना उन्हें एक साथ कई औरतों और रास्तों की ओर ले गई। पेरिस में अवचेतनवाद और रूस में नृत्य, संगीत, बैले, थिएटर का बोलबाला था। उसमें भी पेंटर और शिल्पी ही मुख्य भूमिका निभा रहे थे। पिकासो वहाँ भी छाए हुए थे। कला विधाओं के प्लेटफॉर्म की तरह औरत बदलना उनका शौक था।

साल्वाडोर डाली को गाला के ही जरिए पेरिस में अवचेतनवादियों से नजदीकी स्थापित करनी थी; क्योंकि गाला के पति एक प्रभावशाली हैसियत रखते थे। गाला पॉल एडुअर्ड की वजह से रूस छोड़कर फ्रांस में रहने आई थी। गाला को प्रभावित करने के लिए साल्वाडोर ने अपनी सरियलिस्ट पेंटिंग और शिल्प की प्रदर्शनी लगाई। उम्मीद के मुताबिक गाला को साल्वाडोर ने पाला बदलने को राजी कर लिया और दोनों के अवचेतन मन में हनीमून के लड्डू फूटने लगे। गाला की अवचेतनवादी ग्रुप में बड़ी धाक थी।

गाला से शादी करके साल्वाडोर रूस जा सकते थे और उसके पति बनकर रह सकते थे। उसके लिए धर्म से विद्रोह जरूरी था। साल्वाडोर डाली को धर्म को

अफीम माननेवाले मार्क्सवादी सोवियत रूस से करीबी चाहिए थी; क्योंकि उस समय यह समाजवाद/साम्यवाद पूरे यूरोप पर प्रभाव जमाने में जुटा था।

साल्वाडोर के पिता ने जब पुत्र के रोमांस के बारे में जाना, तो चेतावनी दी कि गाला से और अवचेतनवादियों से संबंध बढ़ाना अनैतिक है। ईसाई समुदाय पहले से ही इसे नैतिक मूल्यों का पतन मानकर अवचेतन मन की यौन इच्छाओं को सार्वजनिक चर्चा का विषय बनाने के खिलाफ था। उस पर ईसा मसीह की उत्तेजक ड्राइंग प्रदर्शित करके साल्वाडोर डाली ने पिता से सीधा बिगाड़ मोल ले लिया; क्योंकि उस ड्राइंग के नीचे लिख दिया—'कभी-कभी मैं मनोविनोद के लिए माँ के चित्र पर थूकता हूँ।' इसका सीधा इशारा पिता की ओर था। साल्वाडोर की माँ की मृत्यु के बाद पिता का मौसी से शादी करना साल्वाडोर को अच्छा नहीं लगा और उसके लिए उन्होंने अपने पिता को ताउम्र माफ नहीं किया।

बड़े साल्वाडोर (पिता) को छोटे साल्वाडोर (पुत्र) की ऐसी 'अश्लील' हरकतवाली पेंटिंग प्रदर्शनी की खबर बार्सिलोना के अखबारों से मिली और वे गुस्सा गए। पिकासो के विद्रोही तेवर के असर पर प्रकाश डालने से पूर्व पाठकों की सहूलियत के लिए यह बताते चलें कि स्पेनी परंपरा का कला के साथ-साथ पारिवारिक पदवी (सरनेम) में भी पालन हो रहा था। 'साल्वाडोर' खानदानी पदवी थी, जो बरकरार रही और माँ का रखा नाम 'डाली' साथ जुड़ गया। पिकासो की भाँति डाली भी अपनी माँ से बेहद प्रभावित थे। पीछे आपने पढ़ा है कि पिकासो ने माँ के प्रभाव में पिता के खानदानी नाम से जुड़ा 'रूइज' हटाकर माँ के नाम से जुड़ा 'पिकासो' रख लिया।

तो जो चर्चा हम लोग कर रहे थे, उसमें हुआ यों कि बड़े साल्वाडोर ने छोटे साल्वाडोर को सार्वजनिक रूप से कैथोलिक ईसाई समुदाय से माफी माँगने को कहा। जब डाली ने उससे इनकार कर दिया, तो पिता ने उसे पैतृक संपत्ति के वारिसी हक से वंचित करने की धमकी दी और यह भी कह दिया कि उसे घर से निकाल बाहर कर दिया जाएगा।

साल्वाडोर डाली के आगे कुआँ, पीछे खाई थी। आगे बढ़ने में भी खतरा था और पीछे हटने में भी। एक तरफ स्टार बनानेवाला कॅरियर हाथ से निकलने की आशंका और दूसरी तरफ बेघर होकर सड़क पर आ जाने का भय डाली को सता रहा था। अगर साल्वाडोर डाली माफी माँगते, तो 'सरियलिस्ट ग्रुप' उन्हें अपनी बिरादरी से निकाल देता; क्योंकि सरियलिस्ट आंदोलन की बुनियाद ही अवचेतन

मन को ईश्वर और धर्म से चिपकी घुटन से मुक्त करने के सिद्धांतों पर टिकी थी। इसी सिद्धांत को अपनाने के कारण डाली चर्चित हुए थे। गाला और पॉल एडुअर्ड को डाली छोड़ना नहीं चाहते थे। उनके जरिए डाली वामपंथियों से जुड़कर चर्चित से बहुचर्चित होने के सपने देख रहे थे। फ्रायड के भक्त तो डाली पहले से ही थे। फ्रायड के नींद में भी यौन इच्छा के जाग्रत् रहनेवाले स्वप्न सिद्धांत के डाली ऐसे दीवाने थे कि उन्हें दिन में और जाग्रत् अवस्था में भी सपनों की परी गाला अपने पास नजर आती थी।

सबसे बड़ी बात यह थी कि डाली को पिकासो की तरह हर क्षेत्र में विद्रोही और ऐसे विचित्र व्यक्तित्व का परिचय देना था, ताकि स्क्रू ढीला जैसा लगे। चर्चा में बने रहनेवाला रास्ता बनाने के लिए ऐसा करना जरूरी था। धार्मिक भावना को आहत करनेवाली पेंटिंग से डाली विवादास्पद तो हो ही गए थे, उससे डाली की पेंटिंग बिकी और अच्छी कमाई भी हो गई थी।

डाली पिकासो की तरह अक्खड़ और किसी की परवाह न करनेवाले मस्तमौला तो नहीं बन पाए, लेकिन डाली ने समझौते से पहले विद्रोही बनना बेहतर समझा, ताकि बीच का रास्ता अपनाने में आसानी हो।

और साल्वाडोर डाली ने पिता की धमकी की परवाह न करके घर छोड़ दिया। डाली ने अलग मकान लेकर गाला के साथ रहना शुरू कर दिया और पाँच साल बाद 1934 में गुपचुप शादी की। अंततः पिता ने बेटा-बहू को अपना लिया और 1958 में डाली + गाला की जोड़ी ने कैथोलिक चर्च में जाकर फिर से शादी भी की।

आज सामान्य परिवारों में लोग बावला टाइप बच्चे के विषय में जो कुछ बातें करते हैं, वो उस समय भी डाली पर लागू होती थीं। बेटा जब बड़ा हो जाता है, तो अपनी पत्नी, बच्चे और नौकरी के आगे माँ-बाप की परवाह नहीं करता। कई परिवारों में माँ-बाप को ही, चाहे पुत्र प्रेम के चलते, राजी-खुशी से अथवा तिरस्कार/अपमान का घूँट पीकर समझौता करना पड़ता है। और पुत्र अपनी नौकरी और कॅरियर के चलते बार-बार समझौता करके बीच का रास्ता (मध्यम मार्ग) अपनाता है।

ठीक वही बात साल्वाडोर डाली पर लागू होती है। असामान्य और चुनौतीपूर्ण स्थिति का सामना करने के लिए साल्वाडोर ने बार-बार समझौता किया। पंख फड़फड़ाकर समेटने पड़े।

पिकासो कला के विशाल कैनवास के साथ-साथ हर बवाल पर डटे रहने की अडिगता साल्वाडोर डाली को जीवन भर बेचैन किए रही। पिकासो इस मायने में असाधारण अपवाद हैं।

सन् 1934-35 में फासीवाद और उसका काट तैयार कर रहा सोवियत संघ के नेतृत्ववाला मार्क्सवाद-लेनिनवाद दोनों ही समानांतर रूप से उफान पर थे। साल्वाडोर डाली ने सरियलिस्टों से करीबी रखते हुए कम्युनिस्टों के साथ-साथ फासिस्टों से भी संपर्क बढ़ाए। वादों के उस फैशन में साल्वाडोर डाली ने एक नया समझौता/मेल-जोल वाद चलाने के प्रयास किए, मगर उन्हें कामयाबी नहीं मिल पाई।

चित्रकारी और मूर्तिकला पर तो पिकासो का पूरी तरह नियंत्रण था। उन्होंने इसे रहस्यवाद और यथार्थवाद से जोड़कर अपने इस अभेद्य दुर्ग में अवचेतनवादियों (सरियलिस्टों) को सेंधमारी नहीं करने दी।

पिकासो अपने 'स्टाइलवाद' की मौलिकता के प्रति हमेशा सजग रहते थे। उन्होंने अपनी मूर्तियों और चित्रों को फैशन शो नहीं बनने दिया। सरकस, बैले, संगीत, कविता, नाटक सभी विधाओं में नए प्रयोग किए और किसी भी 'इज्म' (वाद) के विविध आयामों की छाप अपनी कला पर नहीं पड़ने दी; क्योंकि सब पर हावी था—अति स्वाभिमानी पिकासो का 'इगोइज्म' (अहंवाद), जहाँ किसी की भी उनसे हाथ मिलाने की हैसियत नहीं थी।

इसलिए पिकासो की हर कला, हर प्रोडक्शन अतिरंजित है और अतिरेक से भरा है। यहाँ तक कि पिकासो की प्रेमकला भी अतिरेक से लबरेज है। धर्म या ईश्वर में पिकासो की कोई आस्था नहीं थी, न ही वे इसके विरोधी थे। 'सरियलिज्म' (अवचेतनवाद) में ज्यादा दिलचस्पी नहीं होने का भी यही मुख्य कारण था। सरियलिस्ट लेखक, कवि, कलाकार धर्म विरोधी मुहिम चला रहे थे। मार्क्सवाद-लेनिनवाद या यों कहें कि स्टालिनवाद मुख्य रूप से धर्म विरोधी था और चर्चों का प्रभुत्व समाप्त करने का अभियान चला रहा था। अवचेतनवाद और मार्क्स-लेनिनवाद में यही समानता थी, इसलिए अवचेतनपंथी कलाकारों का झुकाव वामपंथ की ओर हो रहा था।

लेकिन 'पिकासोवाद' के सिद्धांत पर टिका उनका अपना पिकासो कला साम्राज्य किसी भी वाद से प्रभावित नहीं हुआ। पिकासो ताउम्र किसी-न-किसी वाद से घिरे रहे और हर घेराबंदी को तोड़कर स्वच्छंद विचरण करते रहे। किसी चर्चित

वाद या व्यक्ति से जुड़कर चर्चा में आना पिकासो को गवारा नहीं हुआ। विशाल पीपल/बरगद की तरह पिकासो की जड़ें गहरी थीं। किसी आँधी-तूफान में पिकासो स्वयं नहीं हिलते थे, अपने तने और पत्तों से उलटे हवा को ही हिलाते रहते थे।

कला, रंगमंच, लेखन समेत जीवन के हर पल नई-ताजी हवा तलाशते रहनेवाले पिकासो ताजी हवा को पकड़ते थे और उससे दिल में उठी लहर का रंग अपने पेंटब्रश में तुरंत डाल देते थे, इसलिए पिकासो के चित्रों का रंग कभी फीका नहीं पड़ता था।

यहाँ आकर साल्वाडोर डाली पिकासो जैसे छितराए पेड़ की एक डाली साबित होते हैं। साल्वाडोर ने अपने कॅरियर की बुनियाद पिकासो ब्रांड नए क्रांतिकारी तेवर से रखी, लेकिन उसकी जड़ें मजबूत होने देने के लिए धैर्य और इत्मीनान नहीं रख पाए। एक साथ कई नावों में पैर डालकर साल्वाडोर डाली बहते रहे और लहरों के अनुकूल चप्पू चलाते रहे। इसलिए डाली की पहचान लहरों के बहाव से निकलती है। एक बार ऐसा ढुल-मुल बिल्ला लग जाने के बाद जब-जब साल्वाडोर ने लहरों के विपरीत दिशा में चलने की कोशिश की, वे पिछड़ते चले गए। पिकासो के 'इगोइज्म' की ऊँचाई तक पहुँचने के क्रम में साल्वाडोर 'इगोटिज्म' में सिमटे रह गए, जिसे स्वार्थ और मतलब पर टिका 'अहंवाद' कहा जाता है।

पिकासो ने आधुनिक कला और संस्कृति को नई पहचान दी। पिकासो ने परंपरागत कला की स्निग्ध, तरल और बहुरंगी परिभाषा तय की। पिकासो अपनी कला के माध्यम से जाने गए, लेकिन साल्वाडोर डाली ने इतने सारे ताम-झाम का सहारा लिया कि उनकी पेंटिंग, शिल्पकला का बाद में और ताम-झाम का जिक्र पहले होता है। पिकासो ने आकाश में जाज्वल्यमान नक्षत्र की तरह जगमगाने के बावजूद अपनी जमीन (पेंटिंग) नहीं छोड़ी। वास्तव में, पिकासो मूल रूप से चित्रकार ही थे और पेंटिंग की रेखाएँ, रंग उनके दिलो-दिमाग में भीतर तक समाए हुए थे। इसलिए अंदर और बाहर की हलचल बतानेवाली वह विशुद्ध कला है।

साल्वाडोर डाली ने छपास और चर्चा की हवस के चलते पेंटिंग को फैशन शो बना दिया। डाली ने विलासी, एय्याश जिंदगी जीने के लिए कला को भी विलासिता का एक साधन बना दिया। जो भी विषय और सिद्धांत डाली ने कलाकार के बैनर तले अपनाए, उसे साल्वाडोर प्रतिपादित 'फैशनवाद' माना गया। इससे चित्रकार के रूप में डाली की छवि धूमिल पड़ जाती है।

'क्यूबिज्म' से ही साल्वाडोर डाली भी चर्चा में आए थे, लेकिन इसे छोड़ दिया। जब इसमें फैशन शो की गुंजाइश कम लगी तो इसे 'सरियलिज्म' से जोड़ने में जुट गए; क्योंकि 1934-35 में फासीवाद, मार्क्सवाद की तरह नास्तिकवाद का भी फैशन चला हुआ था। सबके मूल में किसी-न-किसी रूप में धर्म समाया हुआ था। इन वादों में फर्क यह था कि फासीवाद और मार्क्सवाद सत्ता से जुड़ा था। अवचेतनवाद आंदोलन का लबादा ओढ़कर सत्ता से जुड़ने के लिए सरियलिस्ट पतली गली से निकलने का रास्ता खोज रहे थे; क्योंकि इसी की गंध पाकर मार्क्सवाद और फासीवाद कला, साहित्य को अपने गिरफ्त में लेने के लिए सेंध लगा रहा था। उन तथाकथित बुद्धिजीवियों की सोच में न कोई क्रांति थी, न कोई सिद्धांत। वे उसूलों की बात इसलिए करते थे, ताकि उन्हें हल्के ढंग से न लिया जाए।

अवचेतनवाद में फ्रायड और आंद्रे ब्रेटन जैसे मनोवैज्ञानिकों की वजह से सेक्स की प्रधानता आ गई थी। इसका फैशन पहले से ही चला हुआ था, इसलिए अवचेतनवादियों को नास्तिकता का झंडा उठाकर प्रगतिशील बुद्धिजीवी बनने में आसानी हुई। फैशन में एक ही साथ पेंटिंग, धर्म विरोध और सेक्स जोड़ देने से साल्वाडोर डाली का फैशनवाद चल निकला, लेकिन साल्वाडोर डाली सरियलिस्ट होने का सबसे ज्यादा दावा करते थे और बार-बार इसके लिए उन्हें सफाई देनी पड़ती थी।

साल्वाडोर के साथी कार्लोस लोजेनो ने अपनी किताब 'सेक्स, सरियलिज्म, डाली एंड मी' में उनके विषय में उन्हीं की पंक्ति उद्धृत की है—'अवचेतनवादियों और मेरे में एकमात्र फर्क यही है, मैं अवचेतनवादी हूँ।'

पहली बार साल्वाडोर डाली को ऐसा कहने की जरूरत तब पड़ी, जब गाला से शादी करने के बाद उन्होंने सरियलिज्म और कैथोलिज्म दोनों को फैशन का विषय बनाया। फिर फ्रायड की सेक्स व्याख्याओं को विभिन्न प्रतीकों में व्यक्त करके प्रतीकवाद चलाया। विज्ञान को जोड़कर एक दूसरा ही वाद चलाया, लेकिन जब फासीवाद और मार्क्सवाद के बीच चुनौतीपूर्ण जोखिम भरा माद्दा दिखाने का मौका आया, तो मैदान छोड़कर भाग निकले; क्योंकि वहाँ फैशन शो करके बाजारवाद चलाने के बजाय देश और समाज के प्रति एक नागरिक के रूप में अपने कर्तव्य का निर्वाह करना था।

इतने सारे वादों और विवादों में उलझे साल्वाडोर डाली ने पलायनवादी होने

का परिचय भी उसी समय दिया, जब अवचेतनवादी के रूप में उनकी छवि उत्कर्ष पर थी। 1930 के दशक में बुद्धिजीवियों के 'पेरिस चैप्टर' की मानसिक स्थिति भी राजनीतिक हालातों की तरह ही बिगड़ी हुई थी। जो कलाकार और लेखक शुरू से मनचले नहीं थे, उन्हें भी राजनीतिक-सामाजिक स्थितियों ने बिगड़ैल बना दिया। अवचेतन और चेतन मन:स्थिति में उथल-पुथल पहले से मची थी। उसमें वादों की राजनीति तथा राजनीति के वादों की उठा-पटक ने और भी दिग्भ्रमित स्थिति पैदा कर दी थी।

कला, साहित्य, विज्ञान, धर्म, सेक्स और मनोरंजन के लिए विकसित की जा रही मिक्सचर का ऐसा घोलमट्ठा कर दिया गया कि किसी भी क्षेत्र में नया प्रयोग स्वतंत्र रूप से अपना अस्तित्व कायम नहीं कर पा रहा था।

आपा-धापी की धूम में क्रांतियों से जाग्रत् विश्व समाज के लिए समझना कठिन था कि कोई भी प्रयोगवादी वास्तव में कहना क्या चाहता है और उसकी उपलब्धियों के बारे में कोई निश्चित धारणा किस आधार पर बनाई जाए? राजनीति में शामिल लोग तो अपना काम कर रहे थे और बंदूक को सामाजिक हथियार बनाने के लिए कलाकारों का इस्तेमाल कर रहे थे। कंधा कलाकारों का, बंदूक दूसरे की और ट्रिगर पर उँगलियाँ किसी तीसरे की!

चित्रकारों और कलाकारों की निजी कुंठा, उलझन तथा महत्त्वाकांक्षा से उत्पन्न तनाव ने उन्हें राजनीतिक घटनाक्रम से फैलते असामान्य वातावरण की ओर खींचा। इस चक्कर में मानववाद कुंठित हो गया और अवचेतनवादियों ने तो एकदम से इसका लोप ही कर दिया, जबकि समाज ने चित्रकारों को अपना आईना समझकर अपनाया था और चित्रकारों ने मिलकर अपने ही समाज को मनोरंजन और नौटंकी का मोहरा बना दिया। इससे मनोरंजन की जगह मन का स्वाद बिगाड़नेवाला व्यंजन परोसा जा रहा था। समाजवाद सिर्फ एक छलावावाला नारा था, क्योंकि उसमें सामाजिक भावना की जगह राजनीतिक सत्ता की राजनीति थी। फिर तो मानववाद को घिसटना ही था। उसी में सिमटकर कला के सारे वादों को पुछल्लावाद लील गया। गिने-चुने लोग ही इससे बच पाए।

पाब्लो पिकासो अपवाद हैं। वह कदाचित् एकमात्र ऐसे चित्रकार हैं, जिनकी चर्चा किसी भी पुछल्ले को पकड़ने से ज्यादा उससे पल्ला झाड़ने या बिल्कुल मुक्त रहने के लिए होती है।

आइंस्टाइन ने मस्तिष्क के अंदर चेतन और अवचेतन मन की गुत्थम-गुत्थी को वैज्ञानिक तथा पेंटिंग प्रयोगों में ढालने पर बड़ी अच्छी बात कही। दोनों ही प्रयोगों का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए महान् वैज्ञानिक ने कहा कि चेतन खोपड़ी अवचेतन में पहले से ही समाए ज्ञान, अनुभूतियों को लगातार विस्तृत करती रहती है। विज्ञान इसे सिर्फ शब्दों में और गणित के समीकरणों के जरिए व्यक्त करता है। यह सिर्फ वर्तमान को दरशाता है, लेकिन कलात्मक अभिव्यक्ति में इतनी अक्षय ऊर्जा है कि उससे अवचेतन भविष्य के ज्ञान भी अंकित होकर सामने आ जाते हैं।

चित्रकारी को प्रभावित करनेवाले इस सिद्धांत से उपजे 'इम्प्रेशनलिज्म' (संप्रेरणवाद) की सभी वर्ग के बुद्धिजीवियों ने सराहना की। पिकासो भी इससे सहमत थे। मैक्स प्लैंक के 'क्वांटम सिद्धांत' को आइंस्टाइन के समीकरण ($E=MC^2$) से जोड़कर मनोवैज्ञानिकों ने इसे विकसित किया। इसके मुताबिक, पदार्थ वास्तव में जमी हुई ठोस ऊर्जा है। अगर इसका सही दिशा में इस्तेमाल न हो तो निर्माण की जगह विध्वंसकारी मनोवृत्ति जड़ पकड़ लेती है।

प्रथम विश्वयुद्ध की दहशतजदा मानवता के कल्याण के लिए प्रयासरत आइंस्टाइन, फ्रायड, मैक्स प्लैंक, ये सभी इस बात से सहमत थे कि मन की शांति के लिए ईश्वर के प्रति थोड़ी आस्था जरूरी है, चाहे वो किसी भी रूप में क्यों न हो! आंद्रे ब्रेटन की तरह उनका भी मानना था कि कला हमेशा मानववाद के भविष्य का खाका खींचती है। इसलिए पेंटिंग और शिल्पकला में कल्पना के फरिश्ते या देवदूत को प्रतीक बनाकर वैसी छवि रेखाओं में उकेरी जानी चाहिए, जो माथे की रेखाओं को प्रतिबिंबित करती लगे।

1938 में पेरिस में और 1939 में अमेरिका में अवचेतनवादी आंद्रे ब्रेटन और पाउल एलुअर्ड ने ऐसी ही पेंटिंग की प्रदर्शनी आयोजित की। उसका मकसद युद्ध के लिए उतावले यूरोप की मानसिकता बदलना था—युद्ध उन्माद का तनाव कम करना था। ब्रेटन ने उसके लिए पिकासो को भी आमंत्रित किया था, लेकिन पिकासो स्पेन में जमे थे। उन्हें अपने देश के बरबाद होने की चिंता पहले, दुनिया के तहस-नहस होने की फिक्र बाद में थी। आंद्रे ब्रेटन ईसाई थे और 'पोप' कहलाते थे।

उसी समय साल्वाडोर डाली फ्रायड और आंद्रे ब्रेटन दोनों से ही मिले। 1938 में 82 साल के फ्रायड ने साल्वाडोर डाली को देखकर कहा, 'यह लड़का तो

मतवाला टाइप लगता है!' फ्रायड को पता था कि उनके सिद्धांत को कामोत्तेजक प्रतीकों के रूप में साल्वाडोर अपनी पेंटिंग में इस्तेमाल करके बेच रहा है। साल्वाडोर आनंदित थे कि उनके गॉडफादर फ्रायड ने ऐसी प्रतिक्रिया दी।

लेकिन आंद्रे ब्रेटन साल्वाडोर डाली के काम से खुश नहीं थे। भावी पिकासो (साल्वाडोर डाली) का कला को सिर्फ डॉलर कमाई का जरिया बनाने से पिकासो फैन आंद्रे ब्रेटन का नाराज होना अस्वाभाविक नहीं था।

विशेष रूप से आध्यात्मिक भावना को प्रतिबिंबित करनेवाली पेंटिंग प्रदर्शनी में सिर्फ डॉलर कमाने के लिए मजे लेने लायक पेंटिंग सजाने से सारे आयोजक डाली से चिढ़ गए। साल्वाडोर डाली ने फ्रायड को आधार बनाकर 'ड्रीम ऑफ वीनस' (वीनस के सपने) नाम देकर अश्लील पेंटिंग और मूर्तियाँ लगाई थीं। सिर्फ डॉलर के लिए चित्रकला के उस तरह से व्यवसायीकरण से पेरिस के भी सारे अवचेतनवादी नाराज हो गए। साल्वाडोर डाली को अपने ग्रुप से निकालकर अवचेतनवादियों ने मान लिया, मानो डाली इस दुनिया में हो ही नहीं!

उस समय के सारे कलाकार विश्व के माहौल के हिसाब से चल रहे थे, जिनमें पिकासो अग्रणी थे, लेकिन साल्वाडोर डाली उन सभी मोरचों पर भगोड़े सैनिक साबित हुए, जहाँ समाज-हित के लिए उन्हें हथियार उठाए रखना था, लेकिन पिकासो डटे रहे। ब्रेटन ने साल्वाडोर को यही बात समझाई थी कि तनाव के समय ईश्वर की अनुभूति मन-मस्तिष्क को ज्यादा सुकून देती है। इसलिए हमें देश, दुनिया, समाज की परिस्थिति के अनुकूल अपनी कला को ले चलना चाहिए, ताकि मरने-मारने पर उतारू शासक और सैनिक दोनों को थोड़ी मानसिक राहत मिले। कला का धर्म है मानव धर्म, और सिद्धांत है—मानववाद।

पिकासो का आविष्कार ज्यामितिक रेखाओंवाले 'क्यूबिज्म' का कैनवास विश्वविख्यात और प्राचीन है। पिकासो ने उसमें सिर्फ नए प्रतीक जोड़े हैं। चेतन और अवचेतन दिमाग तथा अंतर्मन से भी इसका ताल्लुक है। इतना ही नहीं, इसका सूत्र गणित के साथ-साथ कई विज्ञानों और शास्त्रों में मिलता है।

प्रस्तुत है, इसी लेखक द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट—'रहस्यमय नाज्का रेखाएँ' (दैनिक भास्कर, 12 मार्च, 2000)

रहस्यमय नाज़्का रेखाएं

बिना, पेरू के रेगिस्तानी इलाके में एक जगह है। यह जगह जमीन के बेहद सूखे रेगिस्तानों में से एक मानी जाती है। पत्थर तथा बालू से भरी हुई इस मरुभूमि में मीलों तक अजीबोगरीब रेखाएं, आकृतियां और डिजाइन बने हैं जो पिछले पचास से भी अधिक वर्षों से संसार के लिए रहस्य बने हुए हैं। दुनिया के हजारों पुरातत्वविद्, खगोलशास्त्री, भूगर्भशास्त्री और गणितज्ञ इस रहस्य को जानने की खोज में लगे हुए हैं। इनमें कुछ कोणात्मक डिजाइन हैं तो कुछ आकृतियों में पशु-पक्षियों के आकार भी हैं। कई रेखाएं सांप की तरह लगती हैं। इस तरह की रेखाओं को नाज्का रेखाएं कहा जाता है। इन रेखाओं की गुत्थी अभी तक सुलझ नहीं पाई। नाज्का रेखाओं में ऐसे जीव-जन्तुओं के आकार-प्रकार और मनुष्यों की आकृतियां हैं, जिन्हें देखकर लगता है कि यहां सदियों पहले किसी उन्नत सभ्यता का अस्तित्व रहा होगा।

अब तक के अध्ययनकर्ताओं में पहला नाम आता है, 81 साल की जर्मन गणितज्ञ मारिया रीच का। उन्होंने नाज्का रेखाओं के रहस्य को प्रकट करने में किसी अन्य शोधकर्ता से कई गुना ज्यादा सफलता पाई है। मारिया रीच का दावा है कि नाज्का की रेखाएं और आकृतियां भारतीय पूर्वजों ने बनाई हैं। नाज्का रेखाएं पैसिफिक सागर में एंडीज पहाड़ी के बीच छः मील चौड़े रेगिस्तान में हैं, जो दक्षिणी पेरू और उत्तरी चीले के बीच पड़ता है। पत्थरों पर खुदी ये रेखाएं और आकृतियां एक साथ काष्ठकला, कुम्हार कला और पाषाण-कला के नमूने पेश करती हैं, जो 'इंका' सभ्यता से भी पूर्व की मानी गई हैं। पेरू के इसी इलाके में 1000 ईसा पूर्व के आसपास 'इंका' नामक एक विशाल साम्राज्य का उदय हुआ था।

कुल तीस आकृतियां हैं, जो बड़ी सावधानी और काफी सोच-समझकर एक निश्चित योजना से उकेरी गई हैं। कुछ आकृतियां बंदर के आकार की हैं, दो विशाल मकड़े जैसी हैं। एक उल्लू सरीखे दैत्याकार आदिमानव की है। जानवरों, हाथों, फूलों आदि का बोध कराने वाली आकृतियां भी हैं। अधिकांश जानवरों की आकृतियां 100 से 400 फुट लंबी हैं। एक गिद्ध जैसा पक्षी 800 फुट लंबा पाया गया है। सौ से भी ज्यादा रेखाएं तीन मील दूरी तक फैली हुई हैं। रेखाएं पेड़ों की डालियों जैसी हैं। इनकी गहराई 3 से 4 इंच है और चौड़ाई 4 से 18 इंच के बीच। इनकी सतह भूरे पत्थरों से बनी है, नीचे पीली धूल है। पेरू के पुरातत्वविदों को सबसे पहले 1926 में नाज्का रेखाओं का पता चला। पहली बार नाज्का रेखाओं के बारे में संसार को अमेरिकी पुरातत्वशास्त्री पॉल कोसोक ने बताया। वे उन दिनों वाशिंगटन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर थे। इन्होंने हवा की दिशा तय करने वाली कुछ नाज्का जैसी रेखाएं कागज पर उतारीं और तत्काल पाया कि सब मिलकर एक हो गई हैं। उनका आकार एक भयंकर राक्षसनुमा पक्षी में बदल गया है।

देखते ही पॉल कोसोक का माथा चकराया, पर मारिया रीच ने अनुमान लगाया है कि कुछ अदृश्य शक्तियों का प्रभाव है, जिससे नाज्का के प्राचीन निवासी परिचित थे, मगर वे दृश्य शक्तियां क्या हैं, कैसी हैं इस संबंध में फिलहाल कुमारी रीच भी चुप हैं। मारिया रीच का कहना है कि भारत के पूर्वज नापने के लिए 38 सेंटीमीटर लंबे एक रॉड का इस्तेमाल करते थे और उससे चाहे जिस किसी भी कोण से रेखा खींची जाती थी, उसका गुणनफल 15 के कोण के बराबर ही होता था।

रीच ने इन रेखाओं व आकृतियों को खगोलशास्त्रीय कैलेंडर भी माना है। खगोलविद् और पुजारी सूर्य, चंद्रमा और नक्षत्रों की गतिविधियों को जानकारी के लिए इन रेखाओं का इस्तेमाल करते थे। नक्षत्रों की गतिविधियों के आधार पर वर्षा, भूकंप, अच्छी और बुरी फसलों तथा पर्व-त्योहार के विषय में भविष्यवाणी की जाती थी।

कुछ सीधी रेखाएं बताती हैं कि 21 जून और 21 दिसंबर को सूर्योदय तथा सूर्यास्त कब और कहां होगा, ये दोनों तिथियां वर्ष में शुभ दिन मानी जाती थीं। मारिया रीच का अनुमान है कि ये रेखाएं इन्हीं दो तिथियों को खींची गई होंगी, जिनकी दिशा उत्तर-दक्षिण की ओर है। ऊर्ध्वमुखी रेखाओं का आरंभिक बिंदु चंद्रमा की ओर है जो बीच से और पीछे से काफी मुड़ी है।

ब्रिटेन के खगोलशास्त्री जेराल्ड एस. हॉकिंस ने 1968 में स्मिथसोनियन अध्ययन दल के साथ 186 रेखाओं पर कंप्यूटर का प्रयोग किया और पाया कि मात्र 30 रेखाएं ऐसी हैं, जिनका मुंह पिछले चार हजार वर्षों से सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रों की ओर है।

□ शशिधर

रिपोर्ट के अंतिम पैरे में जिस स्मिथसोनियन टीम का जिक्र है, उसी ने सबसे पहले पिकासो के 'क्यूबिज्म' को 'मिस्टीसिज्म' (रहस्यवाद) बताया था। आपने पीछे देखा है कि पिकासो किस प्रकार सुदूर अफ्रीका में जाकर आदिमानव जैसी दिखनेवाली जनजातियों की कल्पना ले आते थे। कितनी पेंटिंग और शिल्प में मनुष्य और जानवर की आकृतियाँ इस तरह मिली हैं कि कला समीक्षकों के लिए कुछ अनुमान लगाना कठिन है।

अमेरिकी पुरातत्त्वविद् पॉल कोसोक से बातचीत के आधार पर 'न्यूयॉर्क टाइम्स-इंटरनेशनल हैराल्ड ट्रिब्यून' ने 1939 में इस संबंध में एक रिपोर्ट छापी। उसका हवाला देकर 'बर्लिन टाइम्स' ने दावा किया है कि जर्मन गणितज्ञ मारिया रीच और पॉल कोसोक दोनों की पिकासो से न्यूयॉर्क प्रदर्शनी के दौरान भेंट हुई थी। 1926 में यह रहस्योद्घाटन हुआ, उस वक्त पिकासो न्यूयॉर्क में ही थे। हमने पीछे पढ़ा है कि स्पेन पर कब्जा और स्पेन-विजय की सारी गतिविधियों से पिकासो ने खुद को जोड़े रखा।

स्मिथसोनियन टीम ने 1969 में पिकासो से मिलने का प्रयास किया था, लेकिन अस्वस्थता के कारण पिकासो बातचीत करने की स्थिति में नहीं थे। 'बर्लिन टाइम्स' द्वारा उपलब्ध कराई गई इस जानकारी से पिकासो पेंटिंग को 'दिमागी फितूर' बतानेवालों को क्यूबिक आर्ट की गंभीरता और गहराई पर नए सिरे से सोचने को विवश कर दिया।

पिकासो कभी भारत आए हों या अपने समकालीन किसी भारतीय चित्रकार से उनकी मुलाकात हुई हो, इसका कोई विवरण नहीं मिलता, लेकिन प्राचीन भारतीय शास्त्रों का प्रभाव कितना विस्तृत था, उसका प्रमाण तो मिल रहा है। पेंटिंग और शिल्पकला की जहाँ तक बात है, भारतीय कला में प्रेम तथा सौंदर्य है। भारत की अन्य काष्ठ और पाषाण कलाओं के विस्तार में यहाँ जाने की जरूरत नहीं है। इसलिए खजुराहो की मैथुनरत मूर्तियों को ही ले लीजिए, वे विशुद्ध कला की तरह मनमोहक और मनभावन हैं। देखकर दिमाग में विकार पैदा नहीं होते। ठीक उसके विपरीत पिकासो की पेंटिंग और शिल्पों में दमित वासनाएँ हैं, जिसका विकृत रूप उन्होंने उकेर दिया। अपने मूड के हिसाब से कला को चलानेवाले पिकासो की कलाकृतियों के कामुक और उत्तेजक भाव एक नजर में मूड खराब कर देते हैं। भोगवादी यूरोप के कला समीक्षकों ने ही यह निष्कर्ष निकाला है।

पिकासो रोमन और यूनानी आर्ट से काफी प्रभावित थे। यूनानी इतिहासकार अरायन ने भारतीय प्राचीन कला को रोम और यूनान से ज्यादा उत्कृष्ट बताया है। खासकर अध्यात्म और प्रेम की जहाँ तक बात है, उन्होंने भारत को 'विश्वगुरु' माना है।

मन और मस्तिष्क के जिस कोलाहल का पूरी पिकासो कला में जिक्र है, उसे भारतीय अध्यात्म में प्रेम के त्रिकोण से जोड़कर देखा गया है।

चेतना से ही शुरू करें। हृदय आपको सभी तरह की कल्पनाएँ, भ्रम, छल, मधुर सपने देगा, लेकिन सत्य नहीं दे सकता। सत्य दोनों के पार है—यह आपकी चेतना में है, जो न तो मन है, न हृदय। चूँकि चेतना दोनों से अलग है, इसलिए यह दोनों का लयबद्ध उपयोग कर सकती है। कुछ क्षेत्रों में मन खतरनाक है; क्योंकि इसकी आँखें हैं, लेकिन पैर नहीं। हृदय कुछ आयामों में कार्य कर सकता है। इसके पास आँखें नहीं हैं, मगर पैर हैं। यह अंधा है, लेकिन त्वरा से चलता है—बहुत उद्वेग के साथ, जाने बिना कि कहाँ जा रहा है!

प्रेम को अंधा कहा जाता है। यह अंधा प्रेम नहीं, हृदय है, जिसके पास आँखें नहीं हैं।

जैस-जैसे आपका ध्यान गहरा होता है, आपका हृदय और मन से तारतम्य टूटता है, त्रिकोण बनने की अनुभूति होने लगती है।

पिकासो और उनके युग के चित्रकारों की दिमागी हालत का अंदाजा पेंसिलवेनिया के न्यूरोसाइंटिस्ट ग्रेग डून के हाल के अध्ययनों से भी लगता है।

वैज्ञानिक से चित्रकार बने ग्रेग डून ने अपनी पेंटिंग में दिमाग की जटिलताएँ उकेर दी हैं।

मनुष्य के दिमाग को इस ब्रह्मांड की सबसे जटिल संरचनाओं में से एक माना गया है। ग्रेग डून ने इसमें सुंदरता खोजी है। उन्होंने अल्युमीनियम प्लेट्स, पेंट-ब्रश और सोने से इनसानी दिमाग की संरचनाओं को रेखाचित्रों में दिखाने के प्रयास किए हैं। ग्रेग डून ने दिमाग के अंदर मौजूद न्यूट्रोन को ज्यामितिक कोणों में दिखाया है।

उनके मुताबिक, इसे प्रदर्शित करने का पेंटिंग से अच्छा माध्यम दूसरा कुछ नहीं हो सकता। ग्रेग डून ने दुनिया को जो बताया, उसकी सुई पिकासो आर्ट की ओर जाती है। ग्रेग डून ने कहा कि माइक्रोस्कोप की दुनिया बिल्कुल आर्ट जैसी है। उन्होंने पेंटिंग के जरिए यह जानकारी दी कि फॉरेस्ट लैंडस्केप और ब्रेन लैंडस्केप में कोई अंतर नहीं है।

पाठकों को पिकासो की शुरुआती दौर की पेंटिंग याद दिला दें, जिसमें कोणीय लैंडस्केप की छवियों ने ही कलाप्रेमियों और आर्ट डीलरों को आकर्षित किया था।

ऊपर जिस रिपोर्ट की कतरन आपने देखी, वह वर्ष 2000 की है। उस समय मारिया रीच 81 वर्ष की थीं। आज वे इस दुनिया में नहीं हैं, लेकिन उनकी खोज ज्यामितिक रेखाओं में छिपे रहस्य का तार कई सदियों को जोड़ता है। तभी तो रेखाचित्रों को 'अमर चित्रकथा' कहा जाता है।

सभ्यता के विकास का सबसे बड़ा प्रमाण और आधार कला है। नाज्का रेखाओं से पता चलता है कि पुनर्जागरण से 1000 ईसा पूर्व 'इंका सभ्यता' ने कला की अभिव्यक्ति का माध्यम रेखागणित (ज्योमेट्री) को बनाया। रेनेसाँ (पुनर्जागरण युग) में भी पेरू में क्यूबिक आर्ट विकसित हो रही थी; क्योंकि चित्रकारों ने इसे गूढ़ गंभीर अर्थ रिकॉर्ड करने की सबसे प्रभावी तकनीक माना, जिसके स्केल, प्रकार से भरे औजार दिमाग में डायग्राम बनाते थे।

पिकासो ने प्राचीन कला की बारीकियों का कितनी गहराई से मनन-चिंतन करने के बाद उसे आधुनिक कला का एक अविस्मरणीय अध्याय बनाया, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

'रेनेसाँ आर्ट' तो वास्तव में यूनानी और रोमन आर्ट की ही पुन: प्रस्तुति है। प्राचीन कला से ही चित्रकारों ने सीखा और जाना कि स्वाभाविक आकार बुनियादी तौर पर ज्यामितिक (ज्योमेट्रिक) है। हर बात, कल्पना, भावना वृत्त, (सर्किल), त्रिकोण (ट्रिंगल), वर्ग (स्क्वायर) और रेक्टेंगल में व्यक्त की जा सकती है। यह

कहना है, 'रेनेसाँ आर्ट' के आधारस्तंभ पॉल गागुइन और पॉल सीजेन का—जो पिकासो के प्रेरणास्रोत थे।

पॉल गागुइन ने अपने कला जीवन के शुरुआती वर्ष पेरू में गुजारे। बाद में वान गोग भी वहाँ पहुँच गए। वे फ्रांसीसी क्रांति के बाद विकसित नई यूरोपीय सभ्यता कला पर थोपने के खिलाफ थे। 1891 में फ्रांसीसी सभ्यता से पलायन करके क्यूबिज्म प्रणेताओं ने कई वर्ष पेरू के पहाड़ों और रेगिस्तानी मैदानों में प्रकृति को समेटने में बिताए।

पिकासो अपने गुरु सीजेन की इस राय से सहमत थे कि ज्यामितिक रेखाचित्रों की अपनी अलग गरिमा है और कलाकारों को इसकी पवित्रता कायम रखनी चाहिए। उनके कहने का तात्पर्य था कि इसमें ऐसा कुछ मिश्रित न किया जाए, ताकि किसी अन्य वाद या सिद्धांत का प्रचार और प्रवक्ता जैसा लगे। सीजेन और पिकासो दोनों ने ही इस बात पर बल दिया कि चित्रकला का सर्वोत्तम परिचय यही है कि इसमें से साहित्य व संगीत की रँगारंग ध्वनि निकले।

पिकासो की मान्यता थी कि कला को साहित्य की तरह विवरणात्मक नहीं होना चाहिए; बल्कि रेखाओं और स्केचों की अभिव्यक्ति ऐसी हो कि दर्शक उस तरह से पढ़ें, जैसे पाठक साहित्य का अध्ययन करते हैं। कलाकार का साहित्यिक ज्ञान शब्दों के बजाय रेखाओं से बाहर आता है। पॉल सीजेन और पॉल गाउगिन दोनों ने ही वाक्यों की तरह रेखाओं का विन्यास किया। यही दोनों पिकासो के असली मार्गदर्शक थे। गाउगिन के बारे में कहा जाता है कि वे खगोलशास्त्र में भी पारंगत थे और उन्होंने ही सबसे पहले अनंत ब्रह्मांड की अपनी कल्पना को पेंटिंग का आकार दिया।

पिकासो अध्ययनकर्ताओं के मुताबिक सिर्फ बीसवीं सदी में ही नहीं, लगभग सभी युगों, कालों में पिकासो जैसे रहस्यमय और जटिल कलाकार दूसरे नहीं मिलते। एकमात्र पिकासो ही हैं, जिनकी पेंटिंग की दुनिया सामाजिक-राजनीतिक स्थिति, नृत्य-संगीत, साहित्य और अध्यात्म की विचित्र कल्पनाओं की रेखाकृति के साथ-साथ कामुकता से भी सराबोर है।

वे पहले कलाकार थे, जिन्होंने विश्व को सिखाया कि कला को किसी धर्म के पुछल्ले से नहीं चलना चाहिए—व्यक्ति और समाज ही कला का धर्म है।

बाद के वर्षों में पेंटिंग को अमूमन अलविदा करके जब पिकासो कविताएँ लिखने लगे, तब भी वे बुनियादी तौर पर पेंटर ही बने रहे। उनके मित्र मरियानो

मिगुएल मोन्टेनेस ने अपने संस्मरण 'पाब्लो पिकासो : दि लास्ट ईयर्स' में पिकासो की आदतों और जीवनशैली का जिक्र किया है।

दक्षिण फ्रांस के मूगिन्स में जब पिकासो रहने लगे, तो एक दिन उन्होंने अपने मित्र मिगुएल से निजी सचिव के रूप में साथ रहने का आग्रह किया। मूगिन्स ने उनका प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार किया। पिकासो के साथ अंतिम समय तक सिर्फ उनकी पाँचवीं पत्नी जैकलीन और मिगुएल ही रहे। मिगुएल ने पिकासो की किसी कलात्मक अभिव्यक्ति से पहले की बेचैनी को करीब से परखा था।

जिन विवादास्पद वादों की हम चर्चा कर चुके हैं, उनमें सबसे ज्यादा विवादित अवचेतनवाद (सरियलिज्म) और क्यूबिज्म हैं। दोनों ही वादों के अवचेतन में धर्म और खासकर ईसाई धर्म समाया हुआ है। पिकासो जिस उलझन से निकलते थे, फिर उसी में चले जाते थे।

उनकी एक कविता यहाँ प्रस्तुत है। मिगुएल के कथनानुसार दिमागी प्रसव की इस पीड़ा से बेचैन पिकासो अपने विशाल मकान में कहीं भी पाँच मिनट बैठ नहीं पाए थे। ड्राइंग रूम से बेडरूम, बेडरूम से बरामदा, बरामदे से लॉन, लॉन से पिछवाड़े का गार्डन, वहाँ से स्टूडियो और फिर अपनी कुरसी में थोड़ी देर धँसे रहे। सड़क पर चहलकदमी करके लौटे, किचन जाकर कॉफी बनाई और घंटों हाथ में हाथ की उँगलियाँ फँसाकर रखे रहे थे। जली सिगरेट बुझ जाती थी और कॉफी ठंडी हो जाती थी। अगर कहीं जैकलिन उस अवस्था में देख लेती थी तो कॉफी बनाकर पति का हाथ पकड़े स्टूडियो में बैठा देती थी। उसके बाद पिकासो के पेंट-ब्रश से जो रंग निकलता था, वो कलाप्रेमियों को रंगीन दुनिया में ले जाता था।

शुष्क रेगिस्तान प्रतीत होते दिमाग में उभरी वक्र चिंतन रेखाओं को पिकासो ने कलम से कैसे व्यक्त किया, यह कौतूहल का विषय है। वैसे पिकासो का दिमाग मरुस्थल जैसा था नहीं, वह तो दार्शनिक बर्टेंड रसेल की तरह इतना उर्वर था कि अभी तक फसल समेटना संभव नहीं हो पा रहा है। दोनों ही गणित के छात्र रहे थे। सिर्फ दर्शन की भावाभिव्यक्ति में फर्क है। कविता में भी संबोधन क्राइस्ट के नाम है।

पिकासो कविता—

'मरुस्थल नंबर 40 में क्राइस्ट'

रेडियो के साथ बलात्कारी
खेल रहा है

गीत, वाद्य, औरत को लेकर
चाहता है जानना
उसका विस्तार
उसकी सीमा।

नाज्का रेखाओं वाले डिस्पैच के अंतिम पैरे में आपने पढ़ा है कि कई ऊर्ध्वमुखी आकृतियों का आरंभिक बिंदु सूर्य और चंद्रमा की तरह है। पिकासो की रहस्यपूर्ण काव्यकृति में यह भाव किस प्रकार व्यक्त हुआ, जरा अवलोकन करें! इस कल्पना में तत्कालीन देश, दुनिया, सामाजिक वातावरण का भी यथार्थ चित्रण है। यह कविता पिकासो कला के यथार्थवाद में शामिल है। इसमें रचनाकार के अंदर मचे कोलाहल का कारण व्यक्तिगत कुंठा से ज्यादा सामाजिक तनाव है।

कविता—

'मरुस्थल नंबर 45 में क्राइस्ट'

एक याद
हाँ, याद
मगर इस हाँ के बाद
परमाणु चमड़े में सिमटा लिंग
गुलाबी और तरोताजा
हाँ, मगर ना
न सपनों की कला
न संगीत, साहित्य
न कोई चिड़चिड़ापन, उलझन
न कोई धार्मिक कला तथ्य
जो बना है लैंपशेड की चमड़ी से
नीचे है
एक मिलियन किलोवाट चंद्रमा
आगे-पीछे की कोई ज्योमेट्री नहीं
एक साबुन की खुशबू
सवाल खड़े करती है?
नहीं करती है।

आदमी की कामोत्तेतना
बिना मांसलता की
धमनियों में नहीं है
खून की गरमी भी
कान के परदे से निकला
आगबबूला हथौड़ा
सिर पर मार रहा है
बार-बार हबक रहा है
अंग-प्रत्यंग में
काटे जा रहा है नसों को
बिना दाँत, बिना नाखून के
नहीं, नहीं चाहिए हिरोशिमा
बार-बार
चीख रहे हैं
बिलख रहे हैं
एक बूँद दूध के लिए
सूखे खून में सने भ्रूण
खौफजदा काले कब्रिस्तान के
जल रहा है दूध का गिलास
पट्टियाँ बँधी हैं
उसके जले नमक छिड़के जख्मों पर
मार दो, उन सबों को मार दो
कह रही है
चर्च घंटाघर की ध्वनि।

उतना ही नहीं, दिमाग को ब्रह्मांड के समान बतानेवाले न्यूरो साइंटिस्ट ग्रेग डून जिस लैंडस्केप न्यूट्रोन की बात करते हैं, वह भी पिकासो की कविता में आ चुका है। शब्द कम, बातें ज्यादा और गुमसुम रहकर हल्लाबोल पिकासो सिद्धांत की कसौटी पर ये पंक्तियाँ खरी उतरी हैं। इसे 'पिकासो स्टाइल अध्यात्मवाद' कहा जाता है—कविता में पिकासो के ब्रेन लैंडस्केप और फॉरेस्ट लैंडस्केप दोनों मौजूद हैं—

बिना खिड़की का लैंडस्केप

उँगलियाँ
झरने की
आपस में गुँथी
एक-दूसरे को जकड़ी
फिर ढीली होकर उठ गईं
स्वर्ग की ओर
बिना जाने-समझे
स्वर्ग है क्या
बीच (बालूतट) जैसे
छल हैं होंठ
उस पर है
एक मोती सीलन भरी
घुटता है
दम वहाँ
झरने से गिर रहे हैं
काले-नीले आँसू
स्मृति मर रही है
आहिस्ता-आहिस्ता
हर चेहरे के आगे
एक प्लेट है अटका
कहता है, मैं हूँ कौन?
चंद्रमा
जंगल की धूल भरे पत्तों के
नए ताजे नंगे पैर
टिके हैं चंद्रमा की ओर
सब समाए हैं
उसी चंद्रमा में।

'पिकासो-युग' में नए-नए वैज्ञानिक सिद्धांतों के प्रभाव से सामाजिक विज्ञानों में भी नए प्रतिमान स्थापित हो रहे थे। राजनीति को तो विज्ञान ने हड़प ही लिया

था, लेकिन इस सबका कला, संस्कृति और साहित्य पर ऐसा असर नहीं पड़ा कि कोई वाद स्थायी रूप से आधुनिकतावाद का हिस्सा बन जाए, अर्थात् कालजयी हो।

ऐसी अद्वितीय कालजयी क्षमतावाले कलाकार माने जाते हैं—पाब्लो पिकासो। पिकासो क्यूबिक कला विज्ञान को मौन अभिव्यक्ति से कुछ बोलने को विवश करने में महारत हासिल थी।

बर्टेंड रसेल जैसे विश्वविख्यात दार्शनिक को भी 'एन एबीसी (ABC) टु रिलेटिविटी' लिखना पड़ गया। इंग्लैंड के ही लेखक एच.जी. वेल्स तो 'साइंस फिक्शन' के ही उन्नायक कहलाते हैं। उनकी किताब 'वार ऑफ दि वर्ड्स' विज्ञान से पूरी तरह प्रभावित है।

वैसे समय में 'पिकासो क्यूबिक आर्ट' के नए सिद्धांत की गहराई सागर जैसी थी। अभी अगर पूरी किताब सिर्फ इसी पर लिखी जाए, तब भी इसकी गहराई मापना संभव नहीं है। कई किताबें लिखी जा चुकी हैं। कला समीक्षक, समालोचक, साहित्यकार, लेखक लिखते-लिखते थक गए। आए दिन नए-नए इंटरप्रेटेशन का सिलसिला जारी है।

प्रसिद्ध फ्रेंच लेखक और आर्ट थियोरिस्ट आंद्रे मालरो ने 1920 में पिकासो पर जो टिप्पणी की थी, वही आज तक 'ब्रह्म-वाक्य' की तरह स्थापित है। मालरो राजनेता होने के साथ-साथ कला के कितने बड़े पारखी थे, उसका प्रमाण है, उनके ये शब्द—'दि ओरिजिन्स ऑफ क्यूबिस्ट पोएट्री'। उन्होंने समय रहते एक जौहरी की तरह हीरे को वैसे ही तराशा, जैसे पिकासो वाल पेपर और पत्थर, मिट्टी को तराशते थे।

आंद्रे मालरो मुख्य रूप से उपन्यासकार थे, लेकिन उनका साहित्य कलात्मक और मानववाद पर केंद्रित है। उनका प्रसिद्ध उपन्यास है—'ला कंडीशन ह्यूमेन' (मैन्स फेट—'मनुष्य का भाग्य')। मालरो ने जो अपना पहला लंबा लेख क्यूबिक कविता पर लिखा, उसका शीर्षक था—'दि ओरिजिंस ऑफ क्यूबिस्ट पोएट्री'।

जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट है, आंद्रे मालरो ने क्यूबिस्ट कविता का मूल तत्त्व खोजा है। कला और साहित्य के क्षेत्र में 'मैन इन एक्शन' सरीखे व्यक्तियों की उपलब्धियों पर आधारित पेरिस की पत्रिका 'एक्शन इन 1920' में आंद्रे मालरो के लेख धारावाहिक किस्तों में छपे। मालरो का दूसरा और तीसरा लेख सरियलिज्म के किस्से-कहानियाँ बयाँ करता है। ये लेख 'पेपर मून' (कागज पर चंद्रमा) शीर्षक से छपे हैं।

शायद यह बताने की जरूरत नहीं कि मालरो के सभी लेख पिकासो से शुरू हुए और पिकासो पर ही खत्म हुए। ऊपर जो कविताएँ दी गई हैं, उनमें अंतिम कविता की अंतिम पंक्ति गौरतलब है।

पेरिस में ही 1901 में जनमे आंद्रे मालरो स्कूली कक्षा की पढ़ाई के समय से ही हमेशा आर्ट म्यूजियम का चक्कर लगाया करते थे। वे राजनीति में भी सक्रिय रहे। विश्वयुद्ध के दौरान और उसके बाद के राजनीतिक उतार-चढ़ावों में पिकासो के साथ आगे इनका भी जिक्र आएगा। स्पेन के गृहयुद्ध के समय पिकासो के साथ वहाँ मालरो मौजूद थे।

लेकिन सबसे बड़ी बात थी कि आंद्रे मालरो ने पिकासो कला के मर्म को समझा। मालरो ने ही पिकासो की पेंटिंग को 'चुप्पी की आवाज' कहा। 1945 में फ्रांस के राष्ट्रपति चार्ल्स डी गॉल ने आंद्रे मालरो को सांस्कृतिक मामलों का मंत्री बनाया तो मालरो ने पेरिस में 'पिकासो म्यूजियम' बनाया।

म्यूजियम में आंद्रे मालरो की यह पंक्ति धरोहर के रूप में सँजोई गई है— 'आर्ट म्यूजियम ऐसी जगह है, जहाँ मनुष्य के प्रति उच्च विचार मिलते हैं।' क्यूबिक कला को उन्होंने 'आर्ट ऑफ मैनकाइंड' कहा।

आंद्रे मालरो को भी बचपन में ही दु:ख और दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियाँ विरासत में मिलीं। इसलिए वे दु:खी और बेचैन आत्मा की पीड़ा बखूबी समझते थे। पिकासो और आंद्रे मालरो के दु:ख में फर्क था, लेकिन दु:ख तो दु:ख होता है। निजी जीवन के 'डिप्रेशन' के हू-ब-हू स्वाभाविक स्केच से पिकासो का एक ईमानदार पेंटर के रूप में 'इंप्रेशन' बना, लेकिन आंद्रे मालरो पुश्तैनी 'डिप्रेशन' के शिकार थे। दोनों के बचपन की कुछ घटनाएँ मिलती-जुलती हैं। मालरो का भी पालन-पोषण महिलाओं के द्वारा हुआ। अपनी माँ, दादी और नानी की देखरेख में आंद्रे मालरो की परवरिश हुई।

परिस्थितियाँ भी समान रूप से दु:खद और तकलीफ देनेवाली थीं। आंद्रे मालरो जब मात्र चार साल के थे, तभी उनके पापा-मम्मी का तलाक हो गया। छोटे-मोटे स्टॉक ब्रोकर आंद्रे के पिता का कारोबार 1930 में यूरोप के खस्ता आर्थिक हालत (ग्रेट डिप्रेशन) में चौपट हो गया और उन्होंने आत्महत्या कर ली।

युवा आंद्रे मालरो के मन-मस्तिष्क पर इन घटनाओं का इतना प्रतिकूल असर पड़ा कि वे दिमागी संतुलन खो बैठने की स्थिति में पहुँच गए। आंद्रे मालरो का पढ़ाई से तो क्या, स्कूली कक्षा से ही जी उचट गया था। सदमे पर सदमे के बाद वे

पढ़कर कुछ समझने के बजाय समझकर पढ़ाई करने लगे। स्कूल में अपनी ड्राइंग से शाबाशी पानेवाले आंद्रे मालरो विक्षिप्त मानसिक स्थिति का निदान खोजने के लिए म्यूजियमों में पूरा दिन और पहाड़ की काली चट्टान पर शाम गुजारते थे।

पेरिस म्यूजियम में सबसे ज्यादा पिकासो की पेंटिंग थीं। यहाँ दुहराने की आवश्यकता नहीं कि उन चित्रों में ऐसी ही दिमागी हालत का नक्शा खींचा गया था।

पिकासो की पेंटिंग में खो जाने के बाद आंद्रे मालरो को लगा कि खोने के कगार पर खड़ा उनका मानसिक संतुलन सामान्य अवस्था की ओर लौट रहा है। आंद्रे मालरो ने अपनी किताब 'कला का मनोविज्ञान' में लिखा है—'पिकासो को मनुष्य के भाग्य की बारीक परख थी और उनकी पेंटिंग की रेखाएँ वास्तव में किस्मत की रेखाएँ हैं। ये ऐसी काली चट्टान हैं, जिन पर कोई और रंग नहीं चढ़ सकता। क्यूबिक रेखाएँ आत्मा का नियति चक्र है।'

आंद्रे मालरो का मास्टरपीस उपन्यास है—'मनुष्य का भाग्य', जो 1933 में छपा। मालरो ने स्वयं स्वीकारा है कि एक नए कला युग निर्माता पिकासो से उन्होंने कला का मानवीय स्वरूप समझा। मालरो की हर किताब में पिकासो बोलते हैं। मालरो को कला विवेचना के नए सिद्धांतों का प्रतिपादक (थ्योरिस्ट) माना जाता है, जिसका श्रेय वे पिकासो को देते हैं।

आंद्रे मालरो ने 'दीवारों के बिना म्यूजियम' नाम से कई किस्तों में बुकलेट निकाले। 'खामोशी की आवाज' समेत ये सारी किताबें पिकासो पर केंद्रित हैं। मालरो ऐसी ही चट्टानी 'कला विकास केंद्र' के संस्थापक थे। स्पेन के गृहयुद्ध और दूसरे विश्वयुद्ध की चर्चा में हम देखेंगे कि कैसे दोनों महान् कलाकारों ने साथ-साथ काम किया! पिकासो और कवि मैक्स जैकब की टीम में आंद्रे मालरो भी शामिल थे। लड़ाई के दौरान पिकासो की तरह आंद्रे मालरो के घर को भी पेरिस में जर्मन खुफिया पुलिस 'गेस्टापो' घेरे रहती थी। उनकी अंतिम किताब 'फरिश्ते के साथ संघर्ष' की पांडुलिपि नाजी पुलिस ने नष्ट कर दी। 1944 में नाजियों ने आंद्रे मालरो को जब जेल में डाल रखा था, उस दौरान वे यही उपन्यास लिख रहे थे।

पाठकों को याद दिला दें कि पहले महायुद्ध से विश्व की सामाजिक और आर्थिक हालत के साथ-साथ सैनिकों की दिमागी हालत भी तहस-नहस हो चुकी थी। सोते-जागते खौफनाक सपनों से भयाक्रांत घायल सैनिकों का मनोवैज्ञानिक इलाज करने के लिए फ्रायड और आंद्रे ब्रेटन ने पिकासो की मदद ली थी। उसी समय से आंद्रे मालरो ने कला के मनोविज्ञान पर काम करना शुरू कर दिया था, जो

पिकासो की पेंटिंग में दर्ज थी। पिकासो शिल्प की विचित्र आदिमानव परिकल्पना की तलाश के लिए आंद्रे मालरो ने भी सुदूर जंगलों की खाक छानी। उससे मिलती-जुलती मूर्तियाँ तलाशने के लिए मालरो ने कंबोडिया के जंगलों में प्राचीन खमेर मंदिरों के अवशेष ढूँढ़े। उसका उद्देश्य था—आधुनिक कला के मसीहा पिकासो से मेल खाती दुनिया की उत्कृष्ट कलाकृतियाँ 'पेरिस म्यूजियम' के लिए इकट्ठा करना। आंद्रे मालरो की ही पहल से पेरिस में एक अलग 'पिकासो म्यूजियम' बना। 1923 में कंबोडिया से लौटते ही मालरो को मूर्तियों के साथ फ्रांस की औपनिवेशिक सरकार ने गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया।

वर्षों बाद मालरो ने 'फरिश्ते के साथ संघर्ष' में लिखा कि 'पिकासो पेंटिंग में दुनिया की सभी प्राचीन कलाओं की झाँकी मिल जाती है। इसका कारण है, वो फरिश्ता, जो अदृश्य रूप में कलाकार के अंदर रहता है और अंतरात्मा की मूक अनुभूति को उसकी कृतियों में ओजस्वी स्वर देता है। इसे सिर्फ पारखी द्रष्टा ही देख और सुन पाते हैं।

आंद्रे मालरो स्वयं जीवनभर एक के बाद एक मानसिक आघात झेलते रहे। पहली पत्नी से 1938 में संबंध खराब हो गया, लेकिन उन्होंने बेटी की शादी तक तलाक नहीं लिया। दूसरी पत्नी और उससे हुए दोनों पुत्र दुर्घटना में मारे गए। उसी समय नाजी पुलिस मालरो को खोजती फिर रही थी। आंद्रे मालरो भी एक लेखक-सह-पत्रकार जोसेट क्लोरिस के साथ रह रहे थे। दोनों पेरिस क्लब में एक ही टेबल पर बैठकर कवि मैक्स जैकब के साथ बैठकर पिकासो पर चर्चा किया करते थे। जोसेट क्लोरिस ने पेरिस के अखबार 'ली मोंद' में लिखा—'बेजुबान पेंटिंग और शिल्पकला की अभिव्यक्ति की सबसे प्रामाणिक व्याख्या करनेवाले आर्ट थियोरिस्ट मालरो अंदर की खामोशी की बदौलत सभी आघातों से उबरते रहे। उन्होंने मन को विचलित और बेचैन करनेवाले वैसे भावों को शब्द नहीं बनने दिया, जिन्हें पिकासो ने ज्यों-का-त्यों रेखाओं में उकेर दिया।'

कला पर देवी-देवताओं का चमत्कारिक प्रभाव और उसके प्रति आकर्षण यूरोप की आधुनिक कला में भी मिलता है। फ्रेंच लेखक आंद्रे ब्रिनकोर्ट जोसेट क्लोरिस की इस टिप्पणी से सहमत हैं कि जिस प्रकार पिकासो के बिना आधुनिक कला का इतिहास नहीं लिखा जा सकता, ठीक वैसे ही मालरो को पढ़े बगैर 'मॉडर्न आर्ट थ्योरी' का मर्म समझा नहीं जा सकता।

मालरो ने पिकासो के अंदर कुलबुलाते दानव की खरोंचें और उससे पीड़ित

देवता की टीस महसूस की थी, इसलिए पिकासो के अंतिम क्षणों में मिगुएल मोन्टेनेस और जैकलीन को ढाढ़स बँधाने पिकासो के विला 'कैलिफोर्नी केनेस' आवास पर आंद्रे मालरो पहुँचे हुए थे।

मिगुएल मोन्टेनेस युद्ध के दौरान और उसके बाद भी मालरो के सहयोगी बने रहे। मालरो ने न तो कविता लिखी और न पेंटिंग बनाई, लेकिन वे कवि भी थे और कलाकार भी। तभी तो आंद्रे मालरो ने पिकासो के अंदर के पेंटर के साथ-साथ कवि को भी पहचाना। पिकासो की कविताएँ छपने से पहले ही मालरो 'वायसेज ऑफ साइलेंस' (खामोशी की आवाजें) धारावाहिक में लिख चुके थे—सिर्फ इतना भर कह देना मानववाद नहीं है कि 'जो मैंने किया, वो कोई जानवर नहीं कर सकता था', बल्कि यह घोषित करने में है कि 'हमारे अंदर का जानवर, जो जंगली हरकतें करने पर तुला था, उसे हमने मनुष्य बनाए रखा और दानवता पर काबू पाने में सफल रहा।'

आर्ट थियोरिस्ट आंद्रे मालरो के विषय में कहा जाता है कि उन्होंने पिकासो और उनके समय में विकसित कला सभ्यता की क्रांतिकारी परिभाषा अपनी आर्ट थ्योरी में प्रस्तुत की। पिकासो और उनके समकालीन उस समय जिन चुनौतियों का सामना कर रहे थे, उसका मालरो जैसा विशद विवेचन उनसे पहले किसी ने नहीं किया। कला का अध्यात्म और सिर्फ मजे लेने के लिए बाजारवाद का संसाधन बनी कला मंडी की तसवीर आंद्रे मालरो ने पिकासो को सामने रखकर खींची है।

उन्होंने ही पिकासो की चुप्पी से निकलकर उनकी मूर्तियों में आई खरोंचों को फ्रांस के क्रांतिकारी कवि ज्याँ निकोलस आर्थर रिमबाउड की इस पंक्ति से जोड़ा—

प्यार और खामोशी का
शब्दों में मैंने कायाकल्प किया
जो बोल नहीं सकते
उसे लिख डाला।
पूरी दुनिया को एक बिंदु पर
मैंने खड़ा कर दिया।

'चीजों के प्रति ज्यादा भावनात्मक या सेंसेटिव होने से जिंदगी बरबाद होने के अलावा कुछ नहीं मिलता।'

ज्याँ निकोलस आर्थर बहुत कम दिन जीए, लेकिन छोटी उम्र में ही प्रसिद्ध कवि बन गए। उनकी मृत्यु के बाद पिकासो की जिंदगी शुरू हुई और पिकासो की

सभी कलाकृतियों पर निकोलस आर्थर का प्रभाव है। पिकासो कभी सेंसेटिव तो हुए ही नहीं। उनके स्वभाव की तरह कलाकृतियों को भी संवेदनहीन तथा भावनाशून्य करार दिया गया था। उसी की बदौलत पिकासो युगद्रष्टा कलाकार के रूप में विश्वविख्यात हुए। क्यूबिक कविताओं के अनुशीलन में आंद्रे मालरो ने पिकासो की फंतासी में उद्विग्न मन की झनझनाहट सुनी है।

कला सिद्धांतवेत्ता (आर्ट थ्योरिस्ट) आंद्रे मालरो ने पिकासो आर्ट के अक्सों का वही स्पंदन खोजा, जिनमें अध्यात्म की झलक है। मालरो 'सरियलिज्म' जैसे विकृत अध्यात्मवाद के खिलाफ थे। मालरो ने जिस एंगिल से पिकासो आर्ट की ध्वनि रिकॉर्ड की है, वो थोड़ी-थोड़ी महान् फ्रेंच विद्वान् और मनीषी दार्शनिक रोमाँ रोलाँ के दर्शन से मेल खाती है।

पिकासो युग में पेरिस यूरोप के साहित्य और कला का अड्डा बना हुआ था, जिसमें विज्ञान, राजनीति तथा सेक्स पर आधारित अध्यात्म अंदर तक समाया हुआ था।

उस समय पश्चिम जगत् में स्वामी विवेकानंद की अंतर्ज्योति जगानेवाली शुद्ध निष्काम अध्यात्म की धूम मची थी।

भारत के लिए गर्व की बात है कि उसी फ्रांस के रोमाँ रोलाँ स्वामी रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद के परम भक्त थे। रामकृष्ण और विवेकानंद पर रोमाँ रोलाँ की पुस्तक सिर्फ विदेशों में ही नहीं, भारत में भी प्रामाणिक मानी जाती है। फ्रांस में स्वामीजी की कई शिष्य-शिष्याएँ थीं।

सेक्स से इतर अध्यात्म और मन को सुकून देनेवाले भारतीय दर्शन का प्रभाव तो फ्रांस में अवश्य था, जो आंद्रे मालरो के दिल से पिकासो संदर्भ में निकला है। स्वामी विवेकानंद ने यूरोप दौरे के क्रम में कहा था—'मानव मन के अंदर आसुरी और दैवी शक्तियों के बीच निरंतर संघर्ष होता रहता है। जिसके दिमाग पर दैवी प्रभाव ज्यादा होता है, वो नकारात्मक और दानवी सोच को सकारात्मक पथ की ओर मोड़ने में सफल हो जाता है।

मन स्वस्थ रखनेवाले विचारों का यूरोप में प्रचार-प्रसार स्वामी विवेकानंद ने सितंबर 1893 में अमेरिका (शिकागो) में आयोजित 'विश्व धर्म संसद्' के संबोधन से शुरू किया। फिर पेरिस और लंदन में बोले। पाठकों ने पीछे पढ़ा है कि वह वक्त था, जब पिकासो की बेचैन सेक्स उगलती पेंटिंग बटोरने के लिए अमेरिकी आर्ट डीलर पिकासो को खोजने पेरिस से बार्सिलोना तक का चक्कर लगाते रहते थे।

पश्चिम की भोगवादी संस्कृति से उपजे तथाकथित अध्यात्मवादियों को देर से ही सही, भारतीय आध्यामिक दर्शन का तत्त्वबोध हुआ तो! मालरो ने स्वीकारा है।

भारत पर भी इन कलाकारों ने उतना ही असर डाला है। यहाँ पिकासो से ज्यादा साल्वाडोर डाली के दीवाने हैं। भारत के अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त चित्रकार जैनुएल आबेदीन ने नवंबर 2014 में पटना में आयोजित प्रदर्शनी के दौरान बताया कि इसका असली कारण अब किसी से छिपा नहीं है कि साल्वाडोर डाली ने सुपरस्टार बनने के लिए अपनी पेंटिंग की जमकर पब्लिसिटी कराई और उसके लिए सारे हथकंडे अपनाए। वैसे डाली की शुरुआती दिनों की कुछ पेंटिंग बड़ी जबरदस्त हैं। 'ब्वाइल्ड बींस ऑन टोस्ट' (टोस्ट पर उबले मटर) साल्वाडोर की वैसी ही हिट पेंटिंग है। जाने-माने रंगकर्मी बॉलीवुड अभिनेता और नाटककार गिरीश कर्नाड का इस पेंटिंग पर आधारित इसी नाम का नाटक दर्शकों ने काफी पसंद किया।

जैनुएल आबेदीन ने भी पिकासो की बोलती मुद्रावाली पेंटिंग स्टाइल अपनाई, जो एक नजर में मूक लगती है।

इसी कुलबुलाहट से पिकासो आजीवन जूझते रहे। इसी आंतरिक संघर्ष पर आधारित है मालरो का उपन्यास, 'फरिश्ते के साथ संघर्ष'। इसकी परिकथा ईसाई धर्म से ली हुई है। मालरो कंबोडिया के प्राचीन मंदिर से देवी-देवताओं की मूर्तियाँ लाए थे और उन्हें इस आरोप में जेल में डाल दिया गया कि मूर्तियाँ चुराकर लाई गई हैं।

यूनान की वीनस की तरह मोनालिसा भी इटली की देवी मानी जाती थीं। दोनों ही देवियाँ यूनानी और रोमन कला में समाई हुई हैं। उनमें मोनालिसा को लेकर विवाद है कि यह वास्तव में किसकी कलाकृति है?

इंजीनियर से चित्रकार बने लिओनार्दो दा विंची के बारे में कहा जाता है कि सबसे पहले उन्होंने ही मोनालिसा को अपनी इष्टदेवी (प्रेमिका) के रूप में चित्रित किया। उनकी यह पेंटिंग 16वीं सदी के पूर्वार्ध की मानी जाती है।

इटली पुनर्जागरण युग के महानतम चित्रकार लिओनार्दो दा विंची ने मोनालिसा की पेंटिंग जब बनाई, उस समय उनकी उम्र 20-21 के आसपास थी। कहा जाता है कि उदात्त प्रेम से लबरेज 18-19 वर्ष की मोनालिसा ने लिओनार्दो की कल्पना में आकर अमरत्व प्राप्त कर लिया। दुनिया भर में सबसे ज्यादा पसंद की जानेवाली हर समय और युग में मशहूर रही है मोनालिसा पेंटिंग। 16वीं सदी की सर्वोत्तम कलाकृति मोनालिसा की यह पेंटिंग देखने से तो तैलचित्र लगती है, लेकिन कला

विशेषज्ञों ने बारीक अध्ययन करके बताया है कि लिओनार्दो ने बेहद पतली ग्लेज की परतें चढ़ाकर पेंटिंग पर स्मोकी इफेक्ट पैदा किया था। 'सुमैरो' नामक यह इफेक्ट लिओनार्दो दा विंची की खासियत थी। विभिन्न रंगों में मिश्रित ग्लेज परत मोनालिसा के मुँह के पास हल्का धुँधलापन और परछाईं पैदा करती है।

इस पेंटिंग की खोज 1913 में एक ब्रिटिश कला संग्रहकर्ता ने की और दावा किया कि युगों-युगों तक दुनिया के सपनों पर राज करनेवाली यूनानी देवी मोनालिसा यही है, लेकिन यह स्पष्ट नहीं हुआ कि मूल रूप से लिओनार्दो दा विंची की है या नहीं? आज तक मोनालिसा पेंटिंग और उससे लिओनार्दो के संबंध को लेकर विवाद बरकरार है।

इस विवाद की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी पाब्लो पिकासो भी साबित हुए। स्टाइलवादी पिकासो ने मोनालिसा की ऐसी मौलिक और उत्कृष्ट पेंटिंग बनाई कि लिओनार्दो की जगह उन्हीं का नाम जुड़ गया। अभी भी मोनालिसा पेंटिंग को काफी लोग पिकासो की कृति मानते हैं। पिकासो के तैलचित्र में भी वैसी ही चमक है, जो लिओनार्दो की पेंटिंग में थी।

पिकासो की पेंटिंग पर रोमन कला की गहरी छाप तो है ही, इसलिए यह संभव है कि पिकासो ने लिओनार्दो से मिलती-जुलती परिकल्पना चित्रित की हो, लेकिन यहाँ इस चर्चा का रोचक पहलू है कि पिकासो के साथ रह रहे उनके मित्र ने मोनालिसा पेंटिंग चुरा ली। 1911 की यह घटना है, जिसका जिक्र जर्मन कला इतिहासकार और संग्रहकर्ता डैनियल-हेनरी कॉन्वेलर ने किया है। कवि और मनोवैज्ञानिक आंद्रे ब्रेटन, कवि-गुइलाम ऐपोलीनायर, लेखक आल्फ्रेड जेरी, जेट्रूड स्टेन, सबके साथ पिकासो की अपनी एक मंडली बनी हुई थी। एपोलीनायर पिकासो के फ्लैट में कुछ दिन साथ रहे भी थे। उसी दौरान ऐपोलीनायर ने मोनालिसा की पेंटिंग चोरी की। हुआ यों कि पिकासो ने मोनालिसा की लबरेज तसवीर बनाई और उसे निहारते-निहारते छाती पर रखे सो गए।

चाहे ईर्ष्यावश या जिस कारण से, एपोलीनायर ने मोनालिसा पेंटिंग चुरा ली। पिकासो ने पुलिस को इत्तला दी और एपोलीनायर को संदेह में गिरफ्तार कर लिया गया। जब दोनों को पूछताछ के लिए पुलिस स्टेशन बुलाया गया, तो एपोलीनायर ने अपना जुर्म कबूल करके माफी माँग ली। फिर दोनों को छोड़ दिया गया।

मोनालिसा के बहाने यहाँ एक और बिंदु पिकासो-चर्चा में मायने रखता है और वह है, कलाकृतियों पर देवी-देवताओं का प्रभाव। आस्तिकवाद/नास्तिकवाद

अपनी जगह पर था, लेकिन इष्टदेवी को प्रेमिका के रूप में चित्रित करने का दौर भी जारी था। इसका तात्पर्य है कि पुनर्जागरण में नई-नई क्रांति आती रहीं, लेकिन प्राचीन रोमन और यूनानी आर्ट की मूल भावना देवियाँ किसी-न-किसी रूप में कलाकारों की कल्पना में मौजूद रहीं।

पश्चिम के कला इतिहासकारों और लेखकों के बीच इसके लिए 'म्यूज' शब्द के इस्तेमाल का फैशन है। 'म्यूज' वास्तव में देवी को कहा जाता है और यह प्राचीन यूनान से नि:सृत है, लेकिन पिकासो और साल्वाडोर डाली दोनों चित्रकारों पर टिप्पणी करनेवालों ने उनकी प्रेमिकाओं/रखैलों को 'म्यूज' कहकर संबोधित किया है।

फ्रांसीसी शिष्या जोसेफिन मैक्लियोड के नाम स्वामी विवेकानंद के पत्र का अंतिम वाक्य यहाँ पाठकों के अवलोकनार्थ प्रस्तुत है—'मुझे आशा है कि लंदन और पेरिस में तुम सबके लिए बड़ी-बड़ी बातें होंगी।'

यह पत्र स्वामीजी ने 18 अप्रैल, 1900 को कैलिफोर्निया से लिखा था। पत्र की शुरुआत में है—'अभी मुझे तुम्हारा और श्रीमती बुल का आनंददायक पत्र मिला। मैं इसे लंदन भेज रहा हूँ। यह जानकर अच्छा लगा कि श्रीमती लेगेट का स्वास्थ्य ठीक हो रहा है।' पत्र का मजमून तो स्वामीजी के ज्ञान, भक्ति और कर्म योग पर आधारित है, जिसमें लीन स्वामीजी ने संसार में रहते हुए संन्यासी का जीवन जीया। विलासिता में रत भोगवादी पश्चिमी संस्कृति का अध्यात्मवाद तो स्वामीजी के आगे 'तथाकथित' साबित होता है।

निर्वाण से कुछ ही दिन पहले स्वामीजी ने यूरोप को जो ज्ञान का संदेश दिया, उसके प्रति आकर्षण उस समय भी था। आंद्रे मालरो का इशारा उसी तरफ है। पेंटिंग और साहित्य के वासनामय कथानक से निकली तथाकथित 'अंतर्ज्योति' जगानेवाली कृतियों के बाजार का नेटवर्क पेरिस, न्यूयॉर्क और लंदन तक फैला था।

रोमाँ रोलाँ से ही स्वामीजी की इन शिष्याओं के बारे में जानकारी मिलती है, जो पेरिस और लंदन में योग-ध्यानवाला विशुद्ध वासनामुक्त आध्यात्मिक केंद्र (आश्रम) चलाती थीं। शिकागो और न्यूयॉर्क में तो काफी दिन स्वामीजी स्वयं रहे। वहाँ उनके शिष्य भी बहुत थे।

पेरिस में जनमी मैक्लियोड चित्रकला में दक्ष थीं, जो बाद में बोस्टन (अमेरिका) जाकर श्रीमती बुल के साथ रहने लगीं। अमेरिका में रहते हुए भी पेरिस का ही लिबास पहनती थीं।

कमाल की बात यह है कि उस समय की पेंटिंग, संगीत, साहित्य और विज्ञान में यूनानी दर्शन की छाप पर ग्रंथों की झड़ी लगानेवाले लेखकों/विश्लेषकों को वेदांत की फुलझड़ी दिखाई नहीं पड़ी। जबकि इस फुलझड़ी की खुशबू चहुँओर व्याप्त थी। इस सिद्धांत के विचारबिंदु पिकासो और उनके समकालीन चित्रकारों के बिंदुओं की तरह मन बेचैन नहीं करते। स्वामी विवेकानंद ने स्कूल-कॉलेज की पढ़ाई के दौरान भी जो ड्राइंग, पेंटिंग बनाईं, वे भी मन-मस्तिस्क को तनावमुक्त करनेवाली हैं।

यहाँ विवेकानंद के यूरोप से ही यूरोपीय शिष्यों/मित्रों के नाम लिखे गए पत्रों की कुछ-कुछ पंक्तियाँ दी जा रही हैं। इन पत्रों में प्रेम, स्वप्न, आत्मा, वासना और ईश्वर की 'यूटोपियन' (UTOPIAN) यूरोपीय कल्पना का सत्य है। इसकी समझ के अभाव में सारे पेंटर और लेखक भटक रहे थे। बेचैन आत्मा की ध्वनि उकेरनेवाले चित्रकार चेतन और अवचेतन के स्वप्नलोक में भी सबसे ज्यादा कुंठा देखते थे—चाहे तो सेक्स की हो या महत्त्वाकांक्षाओं की।

चर्च पादरियों से लेकर इनके प्रभुत्व से विद्रोह करनेवाले पिकासो और अन्य सरियलिस्ट (अवचेतन अध्यात्मवादी) की उकताहट का असली कारण यही था।

न्यूयॉर्क से कुमारी मेरी हेल को लिखे गए स्वामी विवेकानंद के पत्र (1 फरवरी, 1895) की यह पंक्ति देखिए—'प्रेसबिटेरियन पादरी से पिछली झपट और फिर श्रीमती बुल से लंबे झगड़े के बाद जो मनु ने संन्यासियों के लिए कहा है, 'अकेले रहो और अकेले चलो, वह स्पष्ट हो गया'।'

'स्वप्न मत देखो। आह, मेरी आत्मा। स्वप्न न देखो। संक्षेप में मुझे एक संदेश देना है। मुझे संसार के प्रति मधुर बनाने का समय नहीं है और मधुर बनाने का प्रत्येक यत्न मुझे कपटी बनाता है।'

'यह संसार-यह स्वप्न-यह अति भयानक दुस्स्वप्न-इसके देवालय और छल-कपट इसके ग्रंथ और लुच्चापन, इसके सुंदर चेहरे और झूठे हृदय, इसके धर्म का बाहरी ढोंग और भीतर का अत्यंत खोखलापन और सबसे अधिक इसकी धर्म के नाम पर दुकानदारी की-सी वृत्ति से मुझे सख्त नफरत है। संसार के हाथ बिके हुए दासों की कही-सुनी बातों से मेरी आत्मा का तोल होगा क्या?'

इसी क्रम में स्विट्जरलैंड से लिखे हुए स्वामीजी के एक और पत्र का यह पैरा देखिए! यह पत्र स्वामी विवेकानंद ने जे.जे. गुडविन को 8 अगस्त, 1896 को लिखा था—'एक विशिष्ट काल में वैवाहिक जीवन का सिद्धांत कम है, दूसरे में वेश्यावृत्ति

अधिक। एक में शारीरिक कष्ट अधिक है, तो दूसरे में उससे सहस्त्र गुनी अधिक मानसिक पीड़ाएँ। इसी प्रकार ज्ञान की भी स्थिति है। क्या प्रकृति में गुरुत्वाकर्षण का निरीक्षण और नाम रखने से पहले उसका अस्तित्व ही न था?'

उस समय की चित्रकारी जिन दिग्भ्रमित भ्रांतियों की रखैल बनी हुई थी, उसका सही चित्र स्वामी विवेकानंद ने खींचा है। उन्होंने पेरिस को इससे उबारने का भरपूर प्रयास किया। चित्रकला में विज्ञान घुसा देने से दोनों ही प्रयोगों को लेकर लोग भ्रम में पड़ जाते थे।

इस शताब्दी के आइकोन चित्रकार पाब्लो पिकासो वेश्यालय गए बिना पेंटिंग नहीं कर पाते थे और साथ-साथ आए दिन शादियाँ भी करते थे। गणित और विज्ञान को आधार बनाकर की गई क्यूबिक पेंटिंग की व्याख्याओं का सिलसिला इतने दशक गुजर जाने के बावजूद जारी है। आर्ट थ्योरिस्ट आंद्रे मालरो के निष्कर्षों से भी कोई निश्चित धारणा नहीं बनाई जा सकती।

क्यूबिक आर्ट आंदोलन और उसमें मिश्रित अवचेतनवादी आध्यात्मिक आंदोलन के केंद्र में पिकासो हैं। जिस मानसिक और दैहिक पीड़ा का उनकी अधिकांश कलाकृतियों में चित्रण है, उससे किसी तनाव पीड़ित को राहत नहीं मिलती। पिकासो युग की अगली कड़ी साल्वाडोर डाली तो उसमें और चार चाँद लगा गए।

डाली ने न्यूटन के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए 1985 में उनकी मूर्ति बनाई और लिखा कि 'यह खुले दिल, दिमाग और आत्मा की आवाज है।' उसी साल्वाडोर डाली ने फ्रायड के स्वप्न सिद्धांत को 'हृदयंगम' करके अवचेतन आँखों में नींद के समय तैरनेवाले यौन इच्छाओं के मौन चित्र बना दिए।

उसके अलावा ज्यामितिक (क्यूबिक) पेंटिंग की अपनी कृतियों के बारे में साल्वाडोर डाली ने दावा किया कि यह 'प्राकृतिक विज्ञान' और 'गणित' से निकली आधुनिक कला की नई उपलब्धि है। 1950 के दशक में डाली ने ऐसी पेंटिंग गैंडे के सींग के आकार की बनाई और कहा कि यह 'नैसर्गिक ईश्वरीय प्रतीकों' वाली ज्यामिति है।

आंद्रे मालरो ने पिकासो और उनके कृतित्व का विवेचन करते हुए उसी संदर्भ में 'ईश्वर का कायाकल्प/रूपांतरण' शीर्षक से भी कई लेख लिखे। कला और ईश्वर के विषय में मालरो ने कई टिप्पणियाँ 'आत्मा की आवाज' अथवा 'अंतर्ज्योति' जगानेवाली परंपरा में पिकासो के योगदान की भी चर्चा की है। पाठकों

को याद दिला दें कि आंद्रे मालरो ने 'कला को ईश्वर की अनुभूति' बताया।

पिकासो के चित्रों को लेकर विवाद और उनके समय के तमाम वादों में हम देख चुके हैं कि आज भी इस सबका तार किसी-न-किसी रूप में इटली, स्विट्जरलैंड से जुड़ा है। कला और साहित्य की राजधानी के मामले में आज न्यूयॉर्क ने भी वो हैसियत बना ली है, जो पिकासो काल से पेरिस की रही है, लेकिन घूम-फिरकर लोग इटली ही आ जाते हैं।

विशेषकर देवी या चित्रकारों की कल्पना परियों के कथाचित्रों में तो इटली और फ्रांस का उल्लेख थोड़े-थोड़े अंतराल पर होता ही रहता है। आए दिन कोई-न-कोई शोधार्थी एक खोज का दावा करके या तो पहले से ज्ञात तथ्यों को असंगत बताते हैं, अथवा उसमें एक नई जानकारी जोड़ देते हैं। फिर वह एक नए रहस्योद्घाटन की सूची में शामिल हो जाता है।

मोनालिसा सदियों तक चित्रकारों और शिल्पकारों की आँखों में परी की तरह समाई रही हैं। इटली के माइकल एंजेलो ने ठीक कहा था—'मैंने पत्थर में परी को देखा और तब तक तराशता रहा, जब तक कि वो पत्थर से बाहर नहीं निकल आई।'

मोनालिसा कुछ वैसी ही कल्पना परी प्रतीत होती है। इस प्राचीन परीकथा में एक नया पहलू इटली के ही इतिहासकार एंजेलो प्रेटिको ने जोड़ा है। प्रेटिको ने दावा किया है कि मोनालिसा लिओनार्दो दा विंची की माँ थी, जो संभवत: चीनी दासी रही होंगी। माइकल एंजेलो और लिओनार्दो दा विंची दोनों ही रेनेसाँ (पुनर्जागरण) काल की उपज हैं। एंजेलो के साथ तो मोनालिसा का नाम नहीं जुड़ा है, लेकिन पिकासो की मोनालिसा पेंटिंग तो ऐसी है, मानो वो मूल रूप से उन्हीं की हो! पिकासो की कलाकृतियों पर रेनेसाँ युग की चित्रकारी और साहित्य-संस्कृति का भरपूर प्रभाव है।

मोनालिसा को लिओनार्दो की माँ बतानेवाले एंजेलो प्रेटिको ने जो ऐतिहासिक वृत्तांत जुटाए हैं, वो 'स्विस (स्विट्जरलैंड) फेडरल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी' के वैज्ञानिक तथ्यों से मेल नहीं खाते।

दोनों ही रहस्योद्घाटन दिसंबर 2014 में हुए। सिंगापुर के अखबार 'स्ट्रेट्स टाइम्स' के मुताबिक 'स्विस फेडरल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी' ने कार्बन-डेटिंग जाँच के बाद इस बात की पुष्टि की कि मोनालिसा पेंटिंग लिओनार्दो दा विंची की ही है। सिंगापुर सरकार ने 'शुरुआती दिनों की मोनालिसा' नाम से एक कला-यात्रा का आयोजन किया और पहली बार सार्वजनिक रूप से इस पेंटिंग को देखने लायक

बनाया। उसमें इटली के रेनेसाँ काल की मास्टरपीस पेंटिंग को सिंगापुर की पुरानी संसद् बिल्डिंग में स्थित 'आर्ट हाउस' में रखा गया और 16 दिसंबर (2014) से 11 फरवरी, 2015 तक यह प्रदर्शनी सबके लिए खुली रखी गई।

'स्ट्रेट्स टाइम्स' के अनुसार, उस 'कला-यात्रा' प्रदर्शनी में रेनेसाँ युग के महान् पुरोधा लिओनार्दो दा विंची और माइकल एंजेलो के अलावा उनके योग्यतम स्वनामधन्य उत्तराधिकारी पाब्लो पिकासो भी एक रहगुजर के रूप में दिखाए गए।

लिओनार्दो और पिकासो दोनों की ही अद्भुत चमकवाली मोनालिसा ऑयल पेंटिंग वैज्ञानिक परीक्षण में एक जैसी पाई गई हैं।

यह तो हुई सुंदर और आकर्षक बनानेवाले कैमिकल के इस्तेमाल से निकली मोनालिसा के चित्र की बात! लेकिन एंजेलो प्रेटिको ने कुछ और दावे किए हैं, जिसका ताल्लुक पिकासो के देश स्पेन से भी है। एंजेलो के दावे के मुताबिक, नवजागरण (पुनर्जागरण) काल में इटली और स्पेन जैसे देश सुदूर पूर्व के दास-दासियों से भरे पड़े थे। विंची का जीवन और उनके काम के कई पहलू दिखाते हैं कि उन पर पूर्वी देशों का काफी प्रभाव था। जैसे कि वो बाएँ से दाएँ लिखते थे, वे पूर्ण शाकाहारी थे, जो उस माहौल के लिए असामान्य था। मोनालिसा संभवत: विंची की माँ की तसवीर है।

कुछ कला इतिहासकारों का कहना है कि विंची की पेंटिंग में चित्रित महिला फ्लोरेंस निवासी सिल्क कारोबारी फ्रांसिस्को डेल जियोकोंडो की दूसरी पत्नी लींजा जेरादिनी है, जो अपने पति की मौत के बाद नन बन गई थी।

एक और रोचक तथ्य के मुताबिक ईसा मसीह के अंतिम भोज पर बनाए गए मशहूर चित्र 'दि लास्ट सपर' में लिओनार्दो दा विंची ने दो धर्म प्रचारकों के चेहरे को अपनी ही शक्ल दी है। इस 500 साल पुरानी पेंटिंग में थॉमस नाम के व्यक्ति को दो उँगलियाँ विजयी होने के चिह्न के रूप में उठाए दिखाया गया है, जिसे उनके समकालीनों द्वारा लिओनार्दो दा विंची की पसंदीदा मुद्रा कहा जाता था।

जनवरी 2015 में अमेरिकी फोटो जर्नलिस्ट स्टीफन एल्वारेज दक्षिण फ्रांस की एक गुफा के अंदर छह घंटे गुजारकर भाँति-भाँति के रेखाचित्र अपने कैमरे में कैद करके ले आए। उनके द्वारा लाई गई जानकारी के मुताबिक यह चित्रकारी 35 हजार साल पुरानी है। यह गुफा दिसंबर 1944 में खोजी गई और इसके अंदर प्राप्त चित्रकारी कला-युग के शुरुआती दौर की मानी जाती है।

मशहूर शायर बशीर बद्र ने बिल्कुल सही बयाँ किया है—

अगर फुरसत मिले पानी की तहरीरों को पढ़ लेना,
हर एक दरिया हजारों साल का अफसाना लिखता है।

पिकासो को फुरसत मिली और उन तहरीरों को पढ़ा। दरिया के बहाव क्षेत्र को सूखने नहीं दिया और उसका अफसाना लिखा। स्टीफन एल्वारेज के फोटो को देखकर गुफा की चित्रकारी नाज्का और पिकासो की ज्यामितिक (क्यूबिक) पेंटिंग से मिलती-जुलती लगती हैं। अमेरिका की नेशनल जियोग्राफिक की पत्रिका 'दि ओरिजिन्स ऑफ आर्ट' में ये तसवीरें छपने के बाद न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी के भूगर्भ विज्ञान (जियोलॉजी) विभाग के प्रो. रिचर्ड सैमुएल ने यह बात कही है, जो इस विषय पर शोध कर रहे हैं।

पिकासो जीवनीकारों के हवाले से हमने जाना है कि इस युग प्रवर्तक कला मसीहा ने प्राचीन रोमन और यूनानी कला के नवजागरण काल से प्रेरणा ली, चित्रकारी सीखी।

फ्रांसीसी क्रांति के बाद पुनर्जागरण (दूसरा रेनेसाँ) का दौर आया। नवजन्म या नवजागरण तो वास्तव में 14वीं शताब्दी का ही माना जाता है, जो इटली से शुरू हुआ। रेनेसाँ काल की पहचान है, ऐसे कृतिकारों द्वारा प्रतिनिधित्व, जो बहुमुखी और बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। वे एक ही साथ शिल्प, चित्रकारी, साहित्य, संगीत, आर्किटेक्चर इत्यादि सभी कलाओं में निष्णात थे।

पिकासो युग आते-आते इस पुनर्जागरण को ऐसी सभ्यता और संस्कृति लील गई, जिसमें कला तथा साहित्य की विवेकशील संचेतना लुप्त होने लगी। सांस्कृतिक अराजकता के माहौल में सारे चित्रकारों और कलाकारों की निपुणता का पैमाना बदल गया। इसका केंद्रबिंदु इटली की जगह फ्रांस हो गया।

18वीं और 19वीं सदी पेरिस में सांस्कृतिक पुनर्जागरण की कैसी फसल लहलहा रही थी, उसकी भी झाँकी स्वामी विवेकानंद के 'यूरोप यात्रा संस्मरण' में है। ऐसी प्रामाणिक और सटीक जानकारी विवेकानंद साहित्य को छोड़ दुनिया के किसी भी अन्य साहित्य में नहीं मिलती है।

यूरोप के लेखक और साहित्यकार जिसे महिमामंडित करके 'अतिसभ्य' संस्कृति बताते हैं, उसकी वास्तविक तसवीर स्वामीजी ने खींची है। इसे जाने बगैर पिकासो और उनके समय के कला, साहित्य का सही विश्लेषण भारतीय संदर्भ में एकपक्षीय होगा; क्योंकि हम भारतीय प्रायः यूरोप के बारे में कोई धारणा यूरोपीय विश्लेषकों के ही हिसाब से बनाते हैं। जबकि यूरोप में भारतीय विचारक या

दार्शनिक के बारे में कोई टिप्पणी भारतीय नजरिए का खयाल करके नहीं की जाती। इसका पैमाना यूरोपीय विश्लेषक स्वयं तय करते हैं।

पिकासो-युग में रोम और इटली में किस परंपरा की लीपा-पोती हो रही थी, उसका पहला प्रमाण तो है देवियों को 'मिस्ट्रेस' और वासनायुक्त प्रेम से देखना। पेरिस को यूरोपीय समुदाय आज भी बड़े शान और गर्व के साथ 'प्रेमनगर' (सिटी ऑफ लव) कहता है। यह रेनेसाँ युग की ही देन है। पिकासो काल में सेक्स से सराबोर यह 'लव' अपने चरम पर था।

रेनेसाँ काल और उसके प्रभाव से उपजे बुद्धिजीवियों का जाग्रत्/सुप्त विवेक अपनी सभ्यता व संस्कृति की अनेक दुविधाओं में फँसा था। उसका आँखों देखा, कानों सुना पेरिस में रहकर प्रत्यक्ष अनुभव किया हुआ विवरण स्वामी विवेकानंद के ही शब्दों में प्रस्तुत है—(स्वामीजी ने इसमें भारत का भी जिक्र किया है। 'पश्चिमी कला दार्शनिकों और इतिहासकारों ने भारतीय रेनेसाँ को उल्लेख करने लायक नहीं समझा। हम भारतवासियों ने अपनी मौलिकता को भी यूरोप के हाथों गिरवी रखा हुआ है। तभी तो कालिदास को 'भारत का शेक्सपियर' कहते हैं। मकबूल फिदा हुसैन को भारत का पिकासो कहते हैं।')

बहरहाल, अभी हम पिकासो-चर्चा में संलग्न हैं और उनके साहित्य, कला, संगीत सबका संदर्भ कला इतिहासकारों ने रेनेसाँ से जोड़ा हुआ है। उस रेनेसाँ की परिभाषा इस शताब्दी के अतुलनीय संत दार्शनिक स्वामी विवेकानंद की कलम से जानिए—'अरबों की तलवार से पारसी सभ्यता धीरे-धीरे फैली। वह पारसी सभ्यता प्राचीन यूनान और भारत से ही ली हुई थी। पूर्व और पश्चिम, दोनों ओर से बड़े वेग के साथ मुसलमान-तरंग ने यूरोप के ऊपर आघात किया, साथ-ही-साथ अंधकारपूर्ण यूरोप में ज्ञानरूपी प्रकाश फैलने लगा। प्राचीन यूनानियों की विद्या, बुद्धि, शिल्प आदि ने बर्बर आक्रांत इटली में प्रवेश किया। धरा-राजधानी रोम के मृत शरीर में प्राण-स्पंदन होने लगा। उस स्पंदन ने फ्लोरेंस नगरी में प्रबल रूप धारण किया।

प्राचीन रोम ने नवजीवन धारण करना आरंभ किया—इसी को 'रेनेसाँ' (नवजागरण) कहते हैं। किंतु वह नवजागरण इटली का था। यूरोप के अन्य हिस्सों में 'प्रथम जागरण' और 'पुनर्जागरण' कहा गया। ईसा की 16वीं शताब्दी में जब भारत में अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ आदि मुगल सम्राट् बड़े-बड़े साम्राज्यों की सृष्टि कर रहे थे, उसी समय यूरोप का पहला नवजागरण हुआ। इटलीवाले प्राचीन

जाति के थे, एक बार जंभाई लेकर फिर करवट लेकर सो गए। उस समय कई कारणों से भारतवर्ष भी कुछ-कुछ जाग रहा था। अकबर से लेकर तीन पीढ़ी तक मुगल राज में विद्या, बुद्धि, शिल्पकला आदि का यथेष्ट आदर हुआ था।

इटली के पुनर्जन्म ने यूरोप में शक्तिशाली अभिनव फ्रांक जाति ने व्याप्त कर लिया। चारों ओर से सभ्यता की सब धाराओं ने आकर फ्लोरेंस नगरी में एकत्र हो नवीन रूप धारण किया। वहाँ एक धारा सैकड़ों धाराओं में विभक्त होकर बढ़ने लगी। यूरोप की अन्यान्य जातियाँ लोलुप हो मेंड़ काटकर उस जल को अपने देश में ले गईं। उसमें अपनी जीवन-शक्ति सम्मिलित कर उसके वेग और विस्तार को और भी अधिक बढ़ा दिया। वह तरंग फिर भारत में आकर टकराई। वह तरंगलहरी जापान के किनारों पर जा पहुँची और जापान उस जल को पीकर मत्त हो गया। एशिया में जापान ही नवीन जाति है।'

यहाँ इस बात को साथ लिये चलना आवश्यक है कि जापान हम भारतवासियों के मन को संतोष देने के लिए सिर्फ भौगोलिक दृष्टि से हमारा करीबी है। इसे यूरोपवासी अपनी ही बिरादरी का मानते हैं। कला और संस्कृति पर भी यह सोच लागू होती है।

पिकासो जीवनीकार जॉन रिचर्डसन और कार्ल टोलीसन दोनों का ही कहना है कि पिकासो की पेंटिंग तथा शिल्प यूनानी, रोमन और जापानी प्राचीन कला से प्रेरित है। बाद में, पिकासो ने अफ्रीकी कला को अपनाया। उन्होंने आधुनिक का स्टाइल देने में प्राचीन परंपरा को छोड़ा नहीं। पिकासो की एक ही पेंटिंग में इतने एक्रीलिक स्टाइल हैं कि दर्शक उधेड़-बुन में पड़ जाता है। कला का नया इतिहास रचकर उसे विश्वव्यापी बनाने के क्रम में पिकासो पेरिस की भोगवादी संस्कृति का भी एक नया अध्याय बन गए।

ज्यामितिक (क्यूबिक) पेंटिंग रेखाओं की परत-दर-परत दर्शक को ध्यान में रखने को विवश करती है कि एक चित्रकार अपने काम में लीन है। पिकासो ने ही पेंटिंग को सतत बहती रहनेवाली धारा बताया, जिसकी अभिव्यक्ति के लिए माध्यम चुनना अन्य कलाओं की अपेक्षा ज्यादा सुगम है। उनकी जो कैनवास पेंटिंग प्रकृति से ग्रहित रंग और प्लॉट पर आधारित हैं, उसकी मुद्रा बिल्कुल निरपेक्ष है। मगर जब उसमें रहस्यवाद, यथार्थवाद और फिर अध्यात्मवाद भी जुड़ गया, तो पेरिस नगर सुर्खियों में आ गया। यह विकास फ्रांस के प्रभाव में हुआ। उस समय पेरिस शहर की सभ्यता और संस्कृति की सारी विधाओं के नए-नए प्रयोग प्रेम, वासना की

दुनिया से निकलकर अन्य यूरोपीय देशों में भेजे जाते थे। उस प्रेम में बौखलाहट, बेचैनी है, जिसकी परिणति है नफरत और वहशीपन। पश्चिमी लेखकों की कलम में पेरिस यूरोपीय कला और साहित्य की राजधानी के साथ-साथ वासनामय 'लव सिटी' भी उसी समय से कहलाती आ रही है।

इसका भी चित्रण स्वामी विवेकानंद की कलम में है। उनकी पारखी निगाहों ने उस अत्याधुनिकता का गहराई से अवलोकन किया। यह पेरिस नगरी यूरोपीय सभ्यता की गंगोत्री है। यह मृत्युलोक की अमरावती-सदानंद विराट् नगरी है। पेरिस का भोग-विलास और आनंद न लंदन में है, न बर्लिन में और न यूरोप के किसी दूसरे शहर में। लंदन, न्यूयॉर्क में धन है, बर्लिन में विद्या, बुद्धि, यथेष्ट है, किंतु न तो वहाँ फ्रांस की मिट्टी है और न ही फ्रांस के वे निवासी हैं। धन हो, विद्या-बुद्धि हो, प्राकृतिक सौंदर्य भी हो, किंतु वे मनुष्य कहाँ हैं?

प्राचीन यूनानियों की मृत्यु के बाद इस फ्रांसीसी चरित्र का जन्म हुआ है। सदा आनंद और उत्साह से भरे हुए, पर बड़े हल्के और फिर भी बहुत गंभीर, हर कार्य में उत्तेजित, मगर बाधा पड़ते ही निरुत्साहित, लेकिन वह नैराश्य पेरिसवासियों के चेहरे पर बहुत देर नहीं ठहरता, फिर नया उत्साह और विश्वास से चमक उठता है।

दुनिया की जितनी वैज्ञानिक संस्थाएँ हैं, वे सब पेरिस की वैज्ञानिक संस्थाओं की नकल हैं। पेरिस ने ही विश्व को औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापना की शिक्षा दी। सभी भाषाओं में अभी उसी फ्रेंच भाषा के युद्ध संबंधी शब्दों का इस्तेमाल होता है। फ्रांसीसियों की रचनाओं की नकल सभी यूरोपीय भाषाओं में हुई है। यह पेरिस नगर ही दर्शन, विज्ञान और शिल्प की खान है। हर जगह इसकी नकल हुई है।

पेरिस के रहनेवाले मानो सभ्य नागरिक हैं और उनकी तुलना में अन्य दूसरी जातियाँ ढोर-गँवार। ये लोग जो करते हैं, उसी की पच्चीस-पचास वर्ष बाद जर्मन और अंग्रेज नकल करते हैं, चाहे वह विद्या संबंधी हो, चाहे शिल्प संबंधी हो अथवा सामाजिक नीति संबंधी ही क्यों न हो। यह फ्रांसीसी सभ्यता स्कॉटलैंड पहुँची। वहाँ के राजा इंग्लैंड के भी शासक हुए, तब इस फ्रांसीसी सभ्यता ने इंग्लैंड को जगाकर छोड़ा। स्कॉटलैंड के स्टुअर्ट खानदान के शासन के समय से ही इंग्लैंड में 'रॉयल सोसाइटी' आदि संस्थाएँ स्थापित हुईं।

स्वाधीनता का उद्गम स्थान है पेरिस। इस पेरिस महानगरी से ही प्रजा-शक्ति ने बड़े वेग से उठकर यूरोप की जड़ हिला दी। उसी दिन से यूरोप का नया आकार सामने आया। वह 'Liberte, Egalite, Fraternite' (स्वाधीनता,

समानता, बंधुत्व) की ध्वनि अब फ्रांस में नहीं सुनाई पड़ती। फ्रांस अब दूसरे भावों, दूसरे उद्देश्यों का अनुसरण कर रहा है, किंतु यूरोप की अन्यान्य जातियाँ अभी भी उसी फ्रांसीसी विप्लव का अभ्यास कर रही हैं।

स्कॉटलैंड के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने उस दिन मुझसे कहा था कि पेरिस पृथ्वी का केंद्र है। जो देश जिस अंश में पेरिस के साथ अपना संबंध स्थापित कर सकेगा, वह उसी परिमाण में उन्नत होगा। अवश्य ही इस बात में कुछ अतिरंजित सत्य है, किंतु यह बात भी सत्य है कि यदि किसी को किसी नवीन भाव का संसार में प्रचार करना हो, तो उसके लिए पेरिस ही उपयुक्त स्थान है। इस पेरिस नगरी से उठी हुई ध्वनि को यूरोप अवश्य ही प्रतिध्वनित करेगा। शिल्पकार, चित्रकार, गवैया, नर्तकी यदि पेरिस में प्रतिष्ठा पा जाएँ, तो उन्हें अन्य दूसरे देशों में प्रतिष्ठा पाने में देर न लगेगी।

हमारे देश में इस पेरिस नगरी की बदनामी ही सुनी जाती है। हम सुनते हैं—पेरिस नगरी महाभयंकर, वेश्यापूर्ण और नरककुंड है। अवश्य ही अंग्रेज ये सब बातें कहते हैं। दूसरे देश के धनी लोग, जिनकी दृष्टि में विषय-वासना-तृप्ति के सिवाय दूसरा कुछ सुख है ही नहीं, स्वभावत: पेरिस में व्यभिचार और विषय-वासना-तृप्ति का केंद्र देखते हैं। किंतु लंदन, बर्लिन, वियाना, न्यूयॉर्क आदि भी तो वार-वनिताओं और भोग-विलास से पूर्ण हैं। किंतु अंतर यह है कि दूसरे देशों की इंद्रिय-चर्चा पशुवत् है, पर सभ्य पेरिस की मिट्टी भी सोने के पत्तों से ढँकी है। अन्यान्य शहरों के पैशाचिक भोग के साथ पेरिस की विलासप्रियता की तुलना करना, मानो कीचड़ में लौटते हुए सूअर की उपमा नाचते हुए मोर से देना है।

कहो तो सही, भोग-विलास की इच्छा किस जाति में नहीं है? यदि ऐसा नहीं है, तो दुनिया में जिसके पास दो पैसे हैं, वह क्यों पेरिस की ही ओर दौड़ता है? राजा, बादशाह अपना नाम बदलकर उस विलासकुंड में स्नान कर पवित्र होने क्यों जाते हैं? इच्छा सभी देशों में है; उद्योग की त्रुटि भी किसी देश में कम नहीं देखी जाती। किंतु भेद केवल इतना ही है कि पेरिसवाले सिद्धहस्त हो गए हैं, भोग करना चाहते हैं, विलासप्रियता की सप्तम श्रेणी में पहुँच चुके हैं।

पिकासो और उनके समकालीनों का अध्यात्मवाद अवचेतनवाद में ही सिमटा है। स्वप्नलोक की यौन विकृतियों को वास्तविक जीवन का यथार्थ बताकर उसमें अध्यात्मवाद का बिल्ला लगा दिया। अवचेतन में चित्रकारों को यौन उत्तेजना या काम वासना ही दिखाई देती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह अध्यात्म और तांत्रिक दर्शन का स्वप्नलोक कहलाएगा।

स्वामी विवेकानंद ने भारत के संदर्भ में अप्रत्यक्ष रूप से उस पर भी टिप्पणी की है।

प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति जानता है कि जब कभी साम्राज्य-निर्माता तातार या ईरानी, यूनानी अथवा अरब लोग इस देश को बाह्य संसार के संपर्क में लाए, तभी व्यापक आध्यात्मिक प्रभाव की एक लहर यहाँ से समूचे संसार पर फैल गई। ठीक वही परिस्थितियाँ एक बार फिर आकर हमारे सम्मुख खड़ी हो गई हैं। धरती और सागर पर अंग्रेजों के यातायात-मार्ग और उस छोटे से द्वीप के निवासियों द्वारा प्रदर्शित अद्‌भुत शक्ति ने एक बार फिर भारत को शेष संसार के संपर्क में ला दिया है और वही काम फिर से प्रारंभ हो चुका है। मेरे शब्दों पर ध्यान दो—यह तो केवल अल्प प्रारंभ मात्र है; महान् सिद्धियाँ बाद में उपलब्ध होंगी; यह तो मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि भारत के बाहर हमारे वर्तमान कार्य का परिणाम क्या होगा, पर इतना तो मैं निश्चित रूप से जानता हूँ कि प्रत्येक सभ्य देश में लाखों—मैं जानबूझकर कहता हूँ—लाखों व्यक्ति उस संदेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं, जो उन्हें भौतिकता के उस घृणित गर्त में गिरने से बचा लेगा, जिसकी ओर आधुनिक अर्थोपासना उन्हें आँख मूँदकर ढकेल रही है।

जिस धार्मिक और उससे संबद्ध मनोवैज्ञानिक खलबली की चर्चा हम कर चुके हैं, उस पर भी स्वामीजी ने टिप्पणियाँ कीं। 1900 ई. में पिकासो ने बार्सिलोना छोड़कर पेरिस में अपना डेरा जमाया, जब अमेरिका के सारे आर्ट डीलर पेरिस का चक्कर लगाते रहते थे और हर क्षेत्र में विभिन्न वादों ने विवादों का रूप लेना शुरू कर दिया था, उसके कुछ ही वर्ष पहले स्वामी विवेकानंद न्यूयॉर्क और पेरिस में अद्वैत वेदांत का अलख जगा चुके थे। सुप्त अवचेतन को जगानेवाली वो विशुद्ध आध्यात्मिक क्रांति यूरोप के लिए सर्वथा नई और कौतूहल का विषय थी। उनकी दुविधा को भी स्वामीजी ने समझा था, क्योंकि शुरू में उसे स्वीकार न करनेवाले बाद में उनके अनुयायी बने। विवेकानंद ने कितने विद्वत्तापूर्ण ढंग से उन बुद्धिजीवियों का भ्रम दूर किया, देखिए—'जिस धार्मिक क्रांति को लेकर विचारवान् व्यक्तियों के अंदर और समाज में खलबली मची हुई है, उससे कई क्षुद्र मतवाद उत्पन्न हो रहे हैं। किंतु वे सब एक अद्वैत सत्ता की अनुभूति एवं अनुसंधान में ही सचेष्ट हैं। मौलिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्तरों पर यह भाव दिखाई दे रहा है कि विभिन्न मतवाद-समूह क्रमशः अधिकाधिक उदार होते हुए उसी शाश्वत एकत्व की ओर अग्रसर हो रहे हैं। इसलिए वर्तमान काल के सभी आंदोलन जाने या अनजाने

सर्वोत्तम आविष्कृत एकत्ववादी दर्शन के, अर्थात् अद्वैत वेदांत के प्रतिरूप हैं।'— न्यूयॉर्क से एक यूरोपीय मित्र को लिखे गए स्वामी विवेकानंद के पत्र (9 अगस्त, 1895) से गृहीत।

पीछे हमने पिकासो की कुछ कविताएँ देखी हैं, आगे भी कविता प्रसंग आएगा। ये सारी रचनाएँ चित्रकार के किस रंग और पेंट से रंगीन बनी हैं, उसका भी जायजा विवेकानंद की ही निम्नलिखित पंक्तियों से ले लेते हैं—

शीर्षक—

'प्याला'

यही तुम्हारा प्याला है
जो शुरू से तुम्हें मिला है
नहीं, मेरे वत्स
मुझे ज्ञात है
यह पेय घोर कालकूट
तुम्हारी मंथन सुरा निर्मित है
ये तुम्हारे अपराध
तुम्हारी वासनाओं से
युग-कल्पों-मन्वंतरों से
यही तुम्हारा पथ है
कष्टकर, बीहड़ और निर्जन
मैंने ही वो पत्थर लगाए
जिन्होंने तुम्हें कभी बैठने नहीं दिया
बड़े 'सुहावने' लगते हैं
तुम्हारे 'मीत' के पथ
किंतु मेरे वत्स
तुम्हें करनी ही है
मुझ तक यह यात्रा
यही है काम तुम्हारा
जिसमें न सुख है, न गौरव
मगर यह और किसी के लिए नहीं
सिर्फ तुम्हारे लिए है।

(यह कविता स्वामीजी ने अंग्रेजी में न्यूयॉर्क में 1899 में लिखी।)

इस प्रसंग का पटाक्षेप करके अब हम पहले और दूसरे विश्वयुद्ध की त्रासदीपूर्ण घटनाओं की पड़ताल की ओर बढ़ते हैं। दोनों ही महायुद्ध अहं, शक्ति का नशा और दुनिया की स्थापित संस्कृतियों तथा सभ्यताओं का संघर्ष था। वैचारिक स्तर की लड़ाई ही बाद में तोप और टैंकों तक उतर आई।

पिकासो ने कला और संस्कृति की सभ्यताओं पर कुठाराघात की आधारशिला रखी। एक नई शृंखला शुरू करके तीक्ष्ण कल्पनाशक्ति की बदौलत चित्रकारी को स्वप्नलोक से निकालकर खुली आँखों से दिखाई देनेवाले यथार्थ लोक में पिकासो लाए, लेकिन धर्म और राजनीति ने उन्हें विशुद्ध कलाकार नहीं रहने दिया। दोनों विश्वयुद्धों के दौरान और उसके बाद की पिकासो यात्रा के हर मोड़ पर कोई-न-कोई धर्म या सत्ता की 'क्यूबिक' रेखाओं में उलझी विचारधारा कलाधर्मिता को भटकाती रही।

पिकासो-युग के जिस अध्यात्मवाद का उल्लेख फ्रांसीसी और अन्य यूरोपीय दार्शनिक करते हैं, वह भी वास्तव में उनकी कुंठा तथा कॉम्प्लेक्स का एक रूप है। इसका उद्देश्य यह दिखाना था कि आप पश्चिम की संस्कृति को सिर्फ भोगवादी न समझें; क्योंकि अध्यात्मवाद भारत से ही यूरोप पहुँचा था। अगर फ्रांसीसी अध्यात्मवादी रोमाँ रोलाँ से ही प्रेरणा ली होती, तो पिकासो की रखैलों के लिए 'म्यूज' शब्द का इस्तेमाल नहीं करते। स्वामी रामकृष्ण परमहंस के विषय में रोमाँ रोलाँ ने ही अपनी किताब में लिखा है कि 'देवी महाकाली उनकी मातातुल्य प्रेयसी थी'।

यूनानी और रोमन मिथक के मुताबिक 'म्यूज' कविता, संगीत, कला की प्रेरणादायिनी नौ देवियों को कहा जाता है। रेनेसाँ और उसके बाद के यूनानी तथा रोमन चित्रकला की स्थापित मान्यताओं से पिकासो के विद्रोही प्रयोगों में इसे भी शुमार करना पड़ेगा। देवियों की कल्पना को भी अपने ध्यान में वासनायुक्त बनाकर साकार किया। ऐसा अध्यात्म पश्चिम के लिए ही 'एकाग्रचित्त' हो सकता है, जो मन को एक बिंदु पर केंद्रित करने की पहली सीढ़ी है। पिकासो के बैले, नाटक और कविता भी उसी लोक में विचरण करते हैं।

लेकिन पिकासो के अंदर एक भावनात्मक चित्रकार अवचेतन में सदैव जागता रहता था। इसलिए सुरा-सुंदरी के हावी होने के बावजूद समाज और देश-दुनिया के चित्र कलाकार की चेतन-अवचेतन आँखों से बच नहीं पाते थे।

वही संवेदनशीलता पिकासो को पूर्ववर्तियों और अपने समय के अन्य

चित्रकारों की तुलना में विशिष्ट बनाती है। सभ्यता और संस्कृति का मूल ढाँचा कभी नहीं बदलता, सिर्फ समय के साथ उसके आधार तथा धारणाएँ बदलती हैं। युद्ध, उन्माद और धर्म से मानव समाज को न कभी छुटकारा मिला है, न मिलेगा। सदियों से इतिहास इसे दुहराता आ रहा है और दुहराता रहेगा।

परिवर्तन सिर्फ घटनाक्रम, परिस्थिति और उससे निकली विचारधाराओं के टकराव के कारण होता है। पिकासो ने अपने चित्रों के अंतर्द्वंद्व को मानसिक और प्राकृतिक बिंबों से निकालकर समाज से जोड़ा।

1945 में दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त होने के बावजूद पिकासो ने युद्ध उन्मादियों को माफ नहीं किया। उसके लिए उन्होंने चित्रों, मूर्तियों के अतिरिक्त नाटक, कविता, बैले, नौटंकी जैसे माध्यम भी अपनाए और लोगों की सोच पर सीधा धावा बोला। पिकासो और उनके समकालीन सभी लेखक वर्तमान के आलोक में भविष्य पर मँडराते संकट के बादल का गर्जन सुनाते रहे।

सत्ता, राजनीति और विज्ञान की आड़ में उस समय जो धर्मांधता पनपी, उसकी त्रासदी विश्व समाज झेल रहा है। 20वीं और 21वीं सदी को इसी के उफान काल के रूप में याद किया जाएगा।

जनवरी 2015 में पेरिस की धरती पर जो कुछ हुआ, उसने एक बार फिर से 1789 की फ्रांसीसी क्रांति और पिकासो की याद दिला दी। पेरिस की कार्टून पत्रिका 'शार्ली एब्दो' में छपे व्यंग्य कार्टून अरब के इसलामी जेहाद और पश्चिम जगत् के परंपरागत धार्मिक वादों के खिलाफ दमित रोष है।

इस घटना ने पूरे पश्चिम यूरोप को हिला दिया, एक नया इतिहास रच डाला। यह मामला पैगंबर मुहम्मद पर छपे व्यंग्य कार्टूनों के विरोध में 'शार्ली एब्दो' पत्रिका पर आतंकी गुटों के हमले में 'अति सभ्य' देश के 17 लोगों के मारे जाने का नहीं है। खासकर उस पेरिस नगर में ऐसा हमला होना बहुत बड़ी घटना मानी गई, जो किसी जमाने में 'विकसित सभ्यता' का विश्वकेंद्र माना जाता था।

10 लाख लोगों ने मार्च पास्ट करके फ्रांसीसी क्रांति जैसा जोश और हौसला दिखाया। 'अति सभ्य' कहलानेवाले 50 देशों के राष्ट्राध्यक्ष/राजनयिक भाईचारा और एकजुटता दिखाने के लिए उस मार्च पास्ट में शामिल हुए; क्योंकि पेरिस से ही दबंगतावाली यह संस्कृति यूरोप में फैली है, जो स्वामी विवेकानंद ने चित्रित किया है।

अन्य यूरोपीय देश—अमेरिका, इंग्लैंड में भी ऐसे हमले हो चुके हैं। हमलावर

'असभ्य', 'गँवार' लोग जिनके उपनिवेश थे, लेकिन पेरिस में जब ऐसे 'बुर्जुआ एलीट' पर हमला हुआ तो तहलका मच गया।

इससे पेरिस का तथाकथित 'एलीट' मुखौटा बेनकाब हो गया है। इसका तारतम्य पिकासो से जुड़ता है, जब उन्होंने पेरिस में रहते हुए कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता ग्रहण की। हमेशा नया और अधुनातन अन्वेषी पिकासो का कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल होना वास्तव में यूरोप की बुर्जुआ विचारधारा को चुनौती देनेवाली यूरोप से ही उपजी क्रांतिकारी धारा को अपनाना था।

1944 में सोवियत संघ के नेतृत्व में उठी ऐसी ही तूफानी लहर ने पश्चिम यूरोप की चेतना जाग्रत् कर दी थी। कम्युनिस्ट पत्रिका 'ह्यूमेनिटी' में अक्तूबर 1944 में जब पिकासो के कम्युनिस्ट का सदस्य बनने की खबर छपी तो पेरिस ही नहीं, विश्व की दिशा तय करनेवाले पश्चिमी देशों की सभी प्रमुख राजधानियों में हंगामा मच गया।

जर्मनी के हिटलर को धराशायी करने में सबसे अहम भूमिका सोवियत संघ की थी। पीछे आपने पढ़ा है कि पेरिस पर हिटलर के हमले के दौरान भी पिकासो अन्य लेखकों और चित्रकारों की तरह भागे नहीं। पेरिस में हिटलर-कहर का चित्रण उसी शहर में रहकर करते रहे। चित्रों के जरिए और बोलकर भी पिकासो के खरी-खरी सुनाने से हिटलर बौखला गया था। चेतन और अवचेतन मन की भाषा समझने वाले पिकासो ने हिटलर की बौखलाहट भी चित्रित कर दी।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पिकासो का नाम सम्मान में सबसे टॉप पर था। फ्रांस की सरकार ने जब पिकासो की युद्ध उन्माद विरोधी पेंटिंग की प्रदर्शनी आयोजित की, तो उसे लेकर भी बवाल खड़ा हो गया। प्रदर्शनी की घोषणा होते ही प्रदर्शनी स्थल पर हजारों लोगों के जमा होने का कारण कुछ दूसरा था। वे लोग हिटलर के नाजीपंथ समर्थक थे और पिकासो के खिलाफ नारेबाजी करने के लिए इकट्ठे हुए थे। विरोधियों का एक खेमा वो था, जो पिकासो के फ्रांस का मूल बाशिंदा न होने के कारण उनके चित्रों का विरोध करने जुटा था।

तथाकथित 'सभ्य' लोगों की परंपरावाले नगर पेरिस में आधी शताब्दी बाद 'शार्ली एब्दो' से पूरा विश्व इसलिए शर्मसार था, क्योंकि 'सभ्यताओं के संघर्ष' का नया चेहरा उससे उजागर हुआ।

दरअसल इसे असभ्यताओं का संघर्ष कहा जाना चाहिए, जिसकी शुरुआत पश्चिम जगत् से हुई। व्यंग्य पत्रिका 'शार्ली एब्दो' हमले में मुसलिम ज्यादा मारे

गए और यूरोप की सबसे ज्यादा मुसलिम आबादीवाला देश फ्रांस है। एकता और भाईचारा मार्च में पेरिस में जुटे 50 यूरोपीय देशों के नेताओं ने इसे 'अभिव्यक्ति की आजादी' से जोड़ा, लेकिन जातीय हिंसा का नाम नहीं लिया। 'इसलामोफोबिया' कहकर आतंकी जेहादी हमले के रूप में इसका प्रचार किया गया, जिससे पश्चिम के अलावा पूरा विश्व परेशान है।

लेकिन फ्रांस के राष्ट्रपति फ्रेंकोइस हॉलैंड ने जो कुछ कहा और मातम के लिए आनेवाले राष्ट्राध्यक्षों के साथ जो भेदभावपूर्ण रवैया अपनाया, वो उनकी 'असभ्य' मानसिकता का परिचायक था। लोगों को हिटलरशाही और उसके पतन के बाद विजेता देशों की जवाबी 'असभ्यता' की याद दिलाई। संघर्ष के दूसरे स्वरूप की जो आधारशिला रखी गई, वो परंपरागत आधारशिलाओं को हिलानेवाली थी। उसी का विस्फोट था शार्ली एब्दो हमला।

फ्रांस के राष्ट्रपति को मातमपुर्सी के लिए इजराइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू और फिलिस्तीन के राष्ट्रपति महमूद अब्बास के पेरिस आने पर एतराज था। इसका तार दूसरे विश्वयुद्ध में हिटलर की हार और फ्रांस समेत सहयोगी देश अमेरिका, इंग्लैंड और सोवियत संघ की जीत से जुड़ा है।

जर्मन लेखक इंगो बाल्दार का कहना है कि हिटलर के खिलाफ हवा बनानेवाले उस समय के अधिकांश चित्रकार, लेखक और सामाजिक विज्ञानी यहूदी थे। इसलिए हिटलर ने यहूदियों को नेस्तनाबूद करने का अभियान चलाया। दरअसल वे लोग युद्ध उन्माद के खिलाफ जनमोरचा तैयार कर रहे थे, जिनमें पिकासो भी थे। यह मूक संदेश आवाम तक सीधा पहुँचाने के लिए पिकासो ने अपने शौक 'साँड़ों की लड़ाई' को चित्रों में मरने-मारने को आमादा और खून से लथपथ दिखाया। ऐसी पेंटिंग पर युद्ध समाप्त होने के बाद भी कई वर्षों तक फ्रांस और जर्मनी में प्रतिबंध लगा रहा। पिकासो की जन्मभूमि स्पेन भी उसमें शामिल थी।

कार्ल मार्क्स भी यहूदी थे और आइंस्टाइन भी। दोनों के ही सिद्धांतों का पूरी दुनिया पर असर पड़ा। संस्कृति और सभ्यता की चिरस्थायी संवाहक चित्र सर्जना भी प्रभावित हुई।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के पूर्वी यूरोप में छा जाने के बाद यूरोप दो खेमे में बँट गया। फ्रांस पश्चिम यूरोप का एकमात्र देश था, जहाँ कम्युनिस्टों ने पैर जमाए और एक नई सभ्यता का उदय हुआ। अरब और अफ्रीकी देश 'असभ्य' थे। कबीलाई शासनवाले देशों को अपना उपनिवेश बनाने में फ्रांस को कोई दिक्कत नहीं हुई।

बर्बर इसलाम सभ्यता का जवाब दूसरी दादागीरी से देने के क्रम में 1948 में यहूदी देश इजराइल का उदय हुआ। इसके पीछे मुख्य रूप से फ्रांस और अमेरिका की ताकत लगी, जिसमें कई अरब देशों का अस्तित्व मिट गया। उन देशों में पश्चिम एशिया की सीमा से सटे उत्तर अफ्रीकी देशों की मुसलिम बहुल आबादी थी।

सभ्यता के जिस संघर्ष का बर्बर रूप शार्ली एब्दो हमले में नजर आया, उसकी बुनियाद 1948 में ही रखी गई। इजराइल का सबसे बड़ा समर्थक फ्रांस और अमेरिका है। लगभग एक सदी तक मुसलिमों के साथ असभ्यों जैसा सुलूक करने का दुष्परिणाम था वह हमला।

अरब देशों और उत्तर अफ्रीकी देशों के बेघर हुए जिन मुसलमानों की दुहाई देकर फ्रांस के राष्ट्रपति फ्रेंकोइस हॉलैंड ने यूरोप की सबसे ज्यादा आबादीवाला देश फ्रांस को बताया, उन्हीं के आत्मसम्मान की लड़ाई है, मुसलिम आतंकवाद। उसी का खूँखार रूप है जेहादीवाद। अरब देशों के अमीरों के पेट्रोडॉलर से पश्चिमी देशों ने उनकी रक्षा का जिम्मा लेकर अपना भंडार भरा और हथियारों का बाजार बढ़ाया, वही अब पश्चिम के लिए खतरा बना हुआ है। आज यह पूरी दुनिया की लड़ाई है। इजराइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू फिलिस्तीन को अपना वाजिब हक देने को तैयार नहीं हैं। फिलिस्तीन की जमीन इजराइल के कब्जे में है। शांति और युद्ध के सारे प्रयोग विफल होने के आक्रोश में उपजा है, आतंकवाद। इसमें सारे मुसलिम देश साथ हैं।

पिकासो ने अपनी सर्जना पेंटिंग के जरिए इन्हीं अभिशप्त मानव सभ्यताओं की लड़ाई दिखाई और उसके खिलाफ चेतावनी भी दी। पिकासो की क्यूबिक पेंटिंग में सिर्फ दमित वासना का आक्रोश नहीं, मानवाधिकार हनन और मानव सभ्यता के दमन की परंपरा के खिलाफ विद्रोह है। ये सब उन्होंने प्रतीकों के माध्यम से उसकी विस्फोटक स्थिति को चित्रित करके बताया।

हमले के बाद चित्रकारों और कार्टूनिस्टों ने तभी तो विरोध में पेंसिल की नोक का इस्तेमाल बंदूक की नोक के जवाब में किया।

समाजशास्त्री फरहाद खोसरोखबार ने ठीक ही कहा कि यह वास्तव में 'असभ्यताओं का टकराव' है। उस घटना ने पश्चिम के डायोजेनेस से वोल्टेयर और नीत्शे से लेकर कार्ल क्राउस जैसे विचारकों की धज्जियाँ उड़ा दीं। जिस फ्रांस की क्रांति ने दुनिया को लोकतंत्र और एकीकृत समन्वय का सिद्धांत सिखाया, वही फ्रांस सिद्धांतहीन अराजकता का केंद्र बना। पूरे विश्व में इसकी तीखी प्रतिक्रिया

हुई और एक भूचाल-सा आ गया। फ्रांस ने अपने अरब और अफ्रीकी उपनिवेशों के खलीफा/कबीला सरदार शासित मुसलिमों को अपने यहाँ बसाया जरूर, लेकिन उनके साथ ईसाइयों या यहूदियों जैसा भाईचारा का संबंध नहीं बन पाया। पेरिस पश्चिम यूरोप का कदाचित् एकमात्र नगर रहा है, जहाँ जो रहा, बसा, वो वहीं का होकर रह गया। धर्म, साहित्य, कला, राजनीति, विज्ञान समेत संस्कृति की लगभग सभी विचारधाराओं का सबसे विशाल प्लेटफॉर्म पेरिस था। वहीं से अंतरराष्ट्रीय ख्याति का रास्ता शुरू होता था। सबको पेरिस ने अपना लिया, लेकिन मुसलिम सभ्यता और संस्कृति ने अपने को अलग-थलग महसूस किया। पश्चिम यूरोप के सत्ता पोषित एलीट चर्च सभ्यता के आगे इसलाम लगातार पिछड़ता चला गया।

पिकासो और उनकी कृतियों के सबसे सबल प्रेक्षक आंद्रे मालरो दोनों ने ही 19वीं सदी में जो भावी संभावनाएँ व्यक्त की थीं, उसी की चरम बौखलाहट था, शार्ली एब्दो हमला।

उसे लोकतंत्र की प्राचीन नगरी और अभिव्यक्ति की आजादी के परंपरागत उद्गम पर हमला बताकर असली बात छिपाई गई। वही बात पिकासो की याद दिलाती है। पिकासो चित्रकला के अपने धर्म और सिद्धांत के हमेशा हिमायती रहे। उन्होंने चित्रकारी और शिल्पकला को चर्च की गिरफ्त में जाने के खिलाफ आजीवन जेहादी झंडा उठाए रखा।

जनवरी 2015 के पहले सप्ताह में कट्टरपंथी मुसलिम समुदाय ने कार्टून चित्रों के माध्यम से समाज का सच उजागर करनेवालों को गोली मार दी। कार्टून पत्रिका 'शार्ली एब्दो' में मजहबी अंधविश्वास और कुरीतियों के खिलाफ व्यंग्यचित्र, लेख, स्केच, कार्टून छप रहे थे। उसमें इसलाम, कैथोलिक चर्च और यहूदीवाद के कठमुल्लापन के खिलाफ कलम तथा कूची चलाई गई। हिंसा भड़कने का असली कारण था—डेनमार्क के कार्टूनिस्ट का पैगंबर मुहम्मद पर विवादास्पद कार्टून।

एक विचारक ने कहा कि पश्चिम यूरोप में डेमोक्रेटिक सोसायटी (लोकतांत्रिक समाज) और सिविल सोसायटी (सभ्य समाज) रूपांतरण प्रक्रिया के दौर में है। वह फ्रांस के समाज की विद्रूप सोच की तसवीर थी, जो दूसरे विश्वयुद्ध के समय से ही कलाकार खींच रहे हैं। पेरिस के एलीटों की सामाजिक सोच की गड़बड़ी खोजने के बजाय पश्चिम यूरोप ने उसका तगड़ा काट सोचना शुरू कर दिया।

यूरोपीय संघ की 19 जनवरी को ब्रुसेल्स में आपात बैठक हुई, जिसमें इसलाम विरोधी गठजोड़ बनाने का फैसला किया गया। बैठक के बाद जर्मनी के विदेश

मंत्री फ्रैंक वाल्टर स्टेनमेयर ने स्वीकारा—'पेरिस हमले ने यूरोप और दुनिया को बदल दिया।' उनका कहना सही था। यूरोपीय संघ की बैठक में अरब लीग सेक्रेटरी जनरल नवील अल अरबी भी आमंत्रित थे। फिलिस्तीनियों के हक की लड़ाई लड़नेवाला सबसे खूँखार जेहादी इसलामी गुट 'हमास' को उग्रवादी सूची से हटा दिया गया।

बैठक में मौजूद बेल्जियम के प्रतिनिधि ने आपबीती सुनाई। 17 जनवरी, 2015 को बेल्जियम की जर्मन सीमा पर पुलिस ने दो आतंकियों को मार गिराया। संटवर्प के यहूदी स्कूल बंद थे। कुछ वर्ष पूर्व फ्रांस के औपनिवेशिक दासता से मुक्त हुए मुसलिम बहुल नाइजर में 45 चर्चों में आग लगा दी गई, फ्रांस का झंडा जला दिया गया।

जर्मनी की चांसलर एंजेला मर्केल को कहना पड़ा कि यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि जर्मनी के लोगों पर उस समय हमला होता है और उनको गालियाँ दी जाती हैं, जब अपने को यहूदी बताते हैं या इजराइल की तरफदारी करते हैं।

विश्व के बुद्धिजीवियों के सामने एक ही सवाल था कि ईसाई आतंकवाद और यहूदी आतंकवाद को 'आतंकवाद' क्यों नहीं कहा गया? वह पश्चिमी सभ्यता का नीतिगत फैसला कैसे और क्यों था? उसकी काट में उपजा इसलामी प्रतिरोध 'जेहादी' और 'आतंकवादी' कैसे हो गया?

पश्चिम के 'सभ्य समाज' की करतूतों को डॉलर बटोरो चित्रकारों और कलाकारों ने भी समाज के सामने रखना जरूरी नहीं समझा। पिकासो ने जब ऐसी सभ्यता और परंपरा के खिलाफ खुला विद्रोह किया तो सबके निशाने पर आ गए। पिकासो ने 'देखन में छोटन लगे घाव करे गंभीर' वाली नीति अपनाई। जो जख्म पिकासो दे गए, वो आज तक रिस रहा है।

यूरोप के जिन बुद्धिजीवियों/कला समीक्षकों ने पिकासो के चित्रों में सिर्फ कामुकता और दिमागी फितूर देखा था, उसका मूल संदेश पेरिस हमले की आड़ में याद किया। पिकासो की रेखाओं में चित्रित कुंठा और आक्रोश सिर्फ उनका निजी नहीं था। फ्रांस के गृहमंत्री बर्नार्ड केजीन्यूव ने माना कि इससे पेरिस जैसे विश्व-बंधुत्व नगर की स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे का सभ्यता सिद्धांत कलंकित हुआ है तथा राष्ट्रगान 'ला मार्सीलाइस' को धब्बा लगा है।

पिकासो साहित्य का स्पेनिश भाषा से फ्रेंच और अंग्रेजी में अनुवाद करनेवाले लेखक सह-चित्रकार जेरोम रोदेन्बर्ग ने 'डेनमार्क आर्ट जर्नल' में जनवरी 2015 के

दूसरे सप्ताह में लिखा—'अगर फ्रांस ने कड़वा सच को झुठलाने की सिलसिलेवार भूल न की होती, तो आज यह दिन नहीं देखना पड़ता। देर ही नहीं, बहुत देर के बाद फ्रांस की सरकार को अपनी गलती नजर आई।'

जर्मनी से आज पहले जैसी तनातनी नहीं है, लेकिन फ्रांस में वही नाजी टाइप संस्कृति विकसित हो रही है, जिस पर पिकासो ने बंदूक से नहीं, कूची और कलम से हमला किया था। पिकासो बार्सिलोना छोड़कर अपने लिए अंतरराष्ट्रीय ख्याति का प्लेटफॉर्म खोजने पेरिस गए। पेरिस ने उन्हें पहचान दी, लेकिन बाद में उसी पेरिस को पिकासो ने चित्रकारी का वो टावर बना दिया कि पेरिस को पिकासो का शहर कहा जाने लगा। फ्रांस की राष्ट्रीय धुन में पिकासो के कंपोज किए गए संगीत का भी पुट है। वो संगीत पिकासो ने इटली में एक बैले शो के लिए प्रयोग के तौर पर तैयार किया था, जो उदात्त प्रेम से परिपूर्ण थी। आंद्रे मालरो जब फ्रांस सरकार के मंत्री बने, तो उन्होंने वो प्रयोग आजमाया और लोगों ने इसे स्वीकार किया।

रोदेन्बर्ग का वह लेख फ्रांस सरकार के वक्तव्य के दूसरे ही दिन छपा, जिसे पेरिस के 'ली मोंद', 'पेरिस टाइम्स', पेरिस आर्ट रिव्यू' समेत कई अखबारों ने भी प्रकाशित किया। उसी दिन, अर्थात् 19 जनवरी को डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन में इसलाम विरोधी 'पेगिडा आंदोलन' के समर्थकों ने रैली निकाली। यह पेगिडा आंदोलन जर्मनी से उजपा है और रैली का आयोजन इसकी डेनमार्क शाखा ने किया था। उनके बैनरों पर लिखा था—'हिंसा नहीं, नस्लवाद नहीं', और शार्ली एब्दो हमले के कवर किए गए फोटो तथा खबरों के पोस्टर भी लगे थे।

प्रदर्शन में शामिल एक युवा महिला चित्रकार एलेना ने 'कोपेनहेगन मॉर्निंग पोस्ट' को बताया—'आज इतने दशकों बाद मुझे समझ में आ रहा है कि पिकासो विश्लेषणात्मक मोनोक्रोम न्यूट्रल कलरवाली क्यूबिक पेंटिंग (1909-1912) में अखबारी पेजों और वालपेपर का इस्तेमाल क्यों कर रहे थे! उनकी पेंटिंग में सनक और उन्माद की रेखाएँ वास्तव में मानव सभ्यता की किस परिणति की द्योतक थीं, वह अब 21वीं सदी में लोग महसूस कर रहे हैं।'

पाठकों को याद दिला दें कि इस स्टाइल और सोचवाली पेंटिंग का विजन पिकासो के अंदर तभी विकसित हो गया था, जब वे बार्सिलोना में फाइन आर्ट अकेडमी के छात्र थे। पेरिस में पैर जमा लेने के बाद पिकासो ने जॉर्जेस ब्रेक के साथ मिलकर इसे विश्वस्तर का सिंथेटिक क्यूबिक आर्ट बनाया। पिकासो के सृजन और चिंतन में कितनी दूरदर्शिता थी, उस पर फिर से मंथन शुरू हो गया है।

पिकासो पेंटिंग की गुत्थम-गुत्थी किन दुश्चिंताओं का प्रतीक थी, उस पर विचार और पुनर्विचार का सिलसिला कभी खत्म होनेवाला नहीं है। तभी तो कला समीक्षकों ने इसे रहस्य के अंदर रहस्य, यानी कि रहस्यवाद बताया।

शार्ली एब्दो हमले के आलोक में आधुनिक सभ्यता को प्रदूषित करनेवाली कई घटनाओं को याद किया गया। एक बार फिर से 'भारत के पिकासो' मकबूल फिदा हुसैन की सरस्वती देवी की नग्न पेंटिंग चर्चा में आई। वर्ष 2000 में अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिंटन और उनकी विदेश मंत्री मैडेलीन आलब्राइट ने भारत आकर कहा कि इसमें कुछ भी गलत नहीं है। मकबूल फिदा हुसैन मजे में लंदन में रहे और इसलामी देश में अंतिम साँस ली। अपने इसलाम पंथ की बुर्का जैसी कुछ कुरीतियों के खिलाफ लिखनेवाली बांग्लादेशी लेखिका तसलीमा नसरीन अपने मुल्क से निष्कासित हैं। इनकी किताबों का यूरोप की 23 भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। भारत ने भी बड़ी मुश्किल से तसलीमा को अपने यहाँ पनाह दे रखी है। इसलाम के ही खिलाफ लिखने के कारण मौत का फतवा झेल रहे भारतीय मूल के लेखक सलमान रुश्दी मजे में लंदन के नागरिक बने हुए हैं।

लेकिन उसी यूरोप को अपने यहाँ विकसित सभ्यता और संस्कृति क्यों नहीं बरदाश्त होती? जर्मनी से उपजी इसलाम विरोधी पेगिडा संस्कृति पर 'सभ्यों' को कोई एतराज नहीं है। उसी 'सभ्य' देश फ्रांस और इटली के कलाकारों ने जब अपनी इष्टदेवियों की नग्न पेंटिंग बनाई तो उस कलाकार का धर्म खोजा जाने लगा। पिकासो स्टाइल में बनी साल्वाडोर डाली की 'वर्जिन मेरी' हिट आध्यात्मिक पेंटिंग मानी जाती है, जिस पर पेरिस से लेकर न्यूयॉर्क और लंदन तक कैथोलिक आर्ट डीलर गुस्सा उठे।

'ब्रुसेल्स ट्रिब्यूनल' के अनुसार 2003 में इराक पर अमेरिकी कब्जे के दौरान 404 पत्रकारों के मारे जाने की रिपोर्ट है, जिनमें कम-से-कम 374 इराकी थे। आजादी प्रेमी और अभिव्यक्ति की आजादी के तथाकथित हिमायती उत्तरी अटलांटिक संगठन (नाटो) के चंगुल में फँसे इराक में लगभग 10,00,000 नागरिक मारे गए। इस आततायी अराजक मानव सभ्यता को किस मानवीय मूल्य के कोश में रखा जाएगा?

मई 2014 में ब्रुसेल्स स्थित यहूदी म्यूजियम पर अल्जीरियाई मूल के फ्रेंच जेहादियों ने हमला किया। वही लोग सीरिया में इजराइल और नाटो सैनिकों के खिलाफ लड़े।

समाजशास्त्री फरहाद खोसरोखवार लिखते हैं कि सभ्यता की शाश्वत संवाहक कला और संस्कृति को विभिन्न पंथिक फोबियाओं से पेरिस ने ही दूषित किया, जहाँ से यह दुनियाभर में फैली। उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (नाटो) के एक दबंग सदस्य के रूप में फ्रांस इसलामी देशों की जमीन पर उथल-पुथल, विध्वंस और अराजकता का सक्रिय भागीदार रहा है।

इराक युद्ध के दौरान नाटो सैनिकों के संरक्षण में बगदाद के ऐतिहासिक संग्रहालय से पेंटिंग और मूर्तियों की चोरी नकाबपोश लोगों ने की। बगदाद म्यूजियम दुनिया की मशहूर धरोहरों में गिना जाता था। उसमें बेबीलोन सभ्यता की कहानी बतानेवाली कलाकृतियों के अलावा रोमन और यूनानी कला के नमूने थे। साथ-साथ पश्चिमी देशों के युद्ध उन्माद और दंभ उजागर करनेवाले पिकासो की भी चोरी से लाकर बेची गई और अमेरिकी संरक्षण में सियासी मकसद से कमजोर देश की कलाकृतियाँ लुटेरों ने चुराईं। इस खबर को छापनेवाले अखबार (बगदाद टाइम्स, 1991) का दफ्तर बम से उड़ा दिया गया।

आज जिस आई.एस.आई.एस. (इसलामी स्टेट ऑफ इराक और सीरिया) से पूरा विश्व थर्राया हुआ है और पेरिस हमले के लिए जिसे जिम्मेदार माना गया, उससे त्रस्त इराक का एक अल्पसंख्यक समुदाय का दूर-दूर तक कोई रखवाला नहीं है। छोटी सी आबादीवाला खुर्दभाषी यह समुदाय 'येजिदी' कहलाता है। इनका धर्म हिंदू से मिलता-जुलता है और वे मंदिर जाते हैं। वे मेलेक, ताउनुस या मोर जैसे दिखनेवाले देवता की पूजा करते हैं। येजिदियों को हमले का शिकार बनाया गया है।

कला और संस्कृति के टिप्पणीकार रॉबर्ट हफ्स ने पिकासो तथा सल्वाडोर डाली दोनों के ही बैकग्राउंड में सत्ता की सनक की ये भोंड़ी तसवीर अपने लेख में 22 जनवरी, 2015 को खींची।

उन्होंने कई ऐसे तथ्य उजागर किए, जो चौंकानेवाले थे, लेकिन इसके अर्थ आज तक अपने-अपने मतलब से वैसे ही निकाले जा रहे हैं, जैसे पिकासो पेंटिंग की अपनी मानसिकता के हिसाब से व्याख्याओं का सिलसिला जारी है।

इसलामी आतंक की पृष्ठभूमि में यहूदी और ईसाईवाद में भी नाजीवाद जुड़ गया। सबसे बड़ी बात यह है कि इसमें शेक्सपियर जैसे रचनाकार का नाम घसीटा गया है। इसके मुताबिक शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का जालिम सूदखोर शाइलॉक यहूदी (ज्यू) था। वह नफरत और हिकारत से देखी

जानेवाली भावना का प्रतीक था। महारानी एलिजाबेथ के समय में इंग्लैंड में यहूदियों के प्रति यही नजरिया था।

नाटककार क्रिस्टोफर मार्लोव की कृति 'दि ज्यू ऑफ माल्टा' में यहूदियों को असभ्य, गँवार, लालची और सिर्फ सूद खानेवाली कौम बताया गया है। इसमें यह भी उल्लेख है कि नाजी जर्मनी में हिटलर ने 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' के पात्र शाइलॉक को अपने दुष्प्रचार अभियान में शामिल करके यहूदियों के खिलाफ नफरत का वातावरण बनाया। बर्लिन पर पूरी तरह कब्जा जमाने के बाद नाजी हुकूमत ने शेक्सपियर के इस नाटक के प्रमुख पात्र शाइलॉक के चरित्र का जमकर प्रसारण करवाया।

यहूदियों को इंग्लैंड के ईसाई अपने साथ उठने-बैठने लायक नहीं मानते थे। 1600 ई. तक वेनिस और अन्य स्थानों पर यहूदियों को लाल हैट पहनने का सख्त आदेश था, ताकि वे आसानी से पहचान लिये जाएँ। यहूदियों को ईसाइयों से घिरी एक घेराबंदी में रहना होता था। ईसाइयों ने अपनी सुरक्षा के लिए ऐसा इंतजाम लगाया था। यहूदी सूदखोरों को उनके गार्ड को पैसे देने होते थे। लाल हैट नहीं पहनने के कानून को तोड़ते पाए जाने पर मौत की सजा हो सकती थी।

समय ने पलटा खाया और उसी इंग्लैंड में रहकर कार्ल मार्क्स जैसा यहूदी क्रांतिकारी विचारक पैदा हुआ, जिसने इंग्लैंड की पूँजीवादी सभ्यता की दिशा बदल दी। दुनिया का सबसे ज्यादा असरदार यह सिद्धांत 'मार्क्सवाद' के नाम से ही जाना जाता है। इस वाद के चलते इंग्लैंड और अमेरिका जैसे पूँजीवादी ढाँचे में बुनियादी परिवर्तन आए। मार्क्सवाद को लेकर अगर द्वंद्व या दुविधा रहती तो कहीं क्रांति नहीं होती, न नई सभ्यता/संस्कृति विकसित होती।

ऐसा ही पिकासो कला के क्षेत्र में चाहते थे, लेकिन उन्हें इस बात का मलाल रहा कि पिकासोवाद को उनके जीवनकाल में ही द्वंद्व से परिभाषित किया गया है और उसकी व्यापकता को संकीर्ण बनाने की कोशिश में पिकासो के करीबी कलाकार भी शामिल थे।

'लिस डीमोइसेलेस डी एविग्नोन' पेंटिंग की पहली शृंखला ने पिकासो को रातोरात विश्वस्तर पर चर्चित बनाया, उसे जोक और वाहियात बतानेवाले मशहूर चित्रकार हेनरी मेरिसी पिकासो के मित्र ही थे, लेकिन पिकासो के हिट होने के बाद प्रतिद्वंद्वी हो गए। वास्तव में, उसका कारण यह था कि पिकासो ने परंपरागत आर्ट शैली में अपनी मौलिक स्टाइल देकर सर्वथा अभिनव प्रयोग किए।

वे इस मायने में भाग्यशाली रहे कि जिस स्पेन में पिकासो जनमे, उस देश में 15,000 ईसा पूर्व (बी.सी.) गुफा पेंटिंग की परंपरा से सीखा। उसके बाद जिस फ्रांस से पिकासो की किस्मत चमकी, उसकी पेंटिंग परंपरा 35,000 वर्ष पुरानी निकली। पीछे आपने पढ़ा है कि वे पेंटिंग क्यूबिक से मिलती-जुलती पाई गई है। पिकासो का विद्रोह रेनेसाँ युग की कला से नहीं था, क्योंकि बार्सिलोना में उनके शिक्षक तो वही सिखाते थे। वे शिक्षक वही बताते थे, जो सीखकर कोई कलाकार बने, न बने, कला प्रशिक्षक जरूर बन सकता था।

अपनी बुनियाद पर मजबूत पकड़ बनाए रखते हुए पिकासो ने जो नए-नए आविष्कार किए, उसकी परिपक्वता ने रंग तब जमाया, जब पिकासो पेंटिंग को अलविदा कहने का मन बना चुके थे। 1930 में पिकासो ने क्राइस्ट की लिओनार्दो दा विंची स्टाइलवाली 'दि लास्ट सपर' टाइप पेंटिंग बनाई।

'क्रूसिफिक्सन ड्राइंग' (क्रॉस पर क्राइस्ट) के नाम से जानी गई इस पेंटिंग में पिकासो ने भारतीय स्याही का इस्तेमाल किया। उसमें दोनों तरफ दो मैरी और बीच में क्राइस्ट को दिखाया गया है। उसके बाद क्राइस्ट की कुछेक मूर्तियाँ भी पिकासो ने बनाईं।

उन मूर्तियों की भाव-भंगिमा के बारे में जॉन रिचर्डसन का कहना है कि उनमें न धर्म है, न आस्था और न ही वैसी कोई आध्यात्मिक अभिव्यक्ति है, जो अवचेतनवादी चित्रकार आंदोलन के लिए भुना रहे थे। भावों में आत्मा अँधेरे में भटकती दिखाई गई है, जिसे पिकासो ने अपने में समेटा हुआ है।

पिकासो को क्राइस्ट ज्यादा दिन घेरकर नहीं रख सके। निजी/पारिवारिक जीवन में लगातार खींचतान और बिखराव के कारण पिकासो के अंदर तो पहले से ही खलबली मची थी। एक के बाद एक असफल प्रेम, विवाह, सेक्स और उससे प्रभावित चित्रकारी को लेकर पिकासो परेशान थे। अपनी पेंटिंग और मूर्तियों पर उठे विवाद की तो पिकासो ने कभी परवाह नहीं की, लेकिन व्यक्तिगत और पारिवारिक जिंदगी ने उनकी आत्मा को बेचैन कर रखा था। मुश्किल से दो-तीन वर्ष ऐसे गुजरे होंगे, जिस दरम्यान की पिकासो शिल्पकलाओं में क्राइस्ट उभरते हैं, लेकिन मूर्तियाँ पवित्र फैंटम के बजाय कॉन्सेप्टुअल ज्यादा हैं और दुनिया पर मँडराते युद्ध के बादलों से आग बरसने के कॉन्सेप्ट हैं।

अंदर निजी कारणों के तनाव, बाहर युद्ध की आशंका के तनाव—दोनों ने मिलकर पिकासो को विश्व समाज का नंगा सच उजागर करने को विवश कर दिया।

उस विवशता की पैदाइश है, पिकासो की 'गुएर्निका पेंटिंग', जो पिकासो युग का दूसरा ऐतिहासिक काल माना जाता है। इस काल की लगभग सभी पेंटिंग और शिल्पकलाओं में पिकासो की तथा समाज की विदीर्ण आत्मा बोलती है। इन चित्रकलाओं को कला समीक्षकों ने इस सदी की 'मास्टरपीस ट्रेजेडी' कहा है।

1935 के आसपास पिकासो ने कविताएँ और नाटक लिखना भी शुरू कर दिया था। पहले वे चित्रशब्द बनाते थे, फिर शब्दचित्र भी बनाने लगे। शब्द और रेखाओं की उँगली थामे चलनेवाली पिकासो की इस रचना-यात्रा में मानवता का दर्द है, आतंकित भयातुर समाज की पीड़ा है। जैसे पिकासो का हर चित्र एक ग्रंथ है, ठीक वैसे ही पिकासो की नेपकिन भी पेंटिंग की तरह कविता है। पिकासो की कविता और पेंटिंग दोनों ही लटकी हुई रियलिटी नहीं, संस्कृति के कैप्सूल हैं।

□

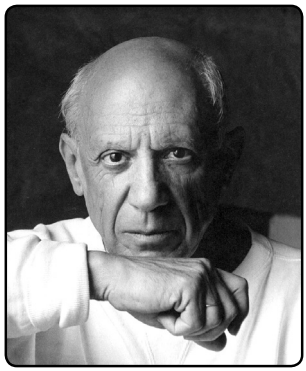

विश्वयुद्ध और पिकासो : कला/काव्य-शिल्प का अंतर्द्वंद्व

दूसरे विश्वयुद्ध (1939-1945) और उसके बाद की तसवीरें खींचने से पहले के कुछ वर्ष मूडियल पिकासो ने सरियलवादियों को लताड़ने में भी गुजारे। पिकासो के मन में धर्म, ईश्वर और नास्तिकता को लेकर विरोधाभास तो था ही, जो स्पेन से शुरू होकर मृत्युपर्यंत उनका पीछा करता रहा। पिकासो ने आधुनिकता का प्रतिधिनित्व करने का दावा करनेवाले सरियलों का सेक्स अवगुंठन बीच बाजार में चौराहे पर खड़ा कर दिया। यह ऐसा मसला था, जिस पर अवचेतनवादियों (सरियल) की कुंठा और हीन भावना उन्हें खुलकर सामने नहीं लाने दे रही थी।

अपने प्रेरक रेनेसाँ चित्रकार गाउगिन स्टाइल में पिकासो ने फूलों, गहनों से लदी औरत की मूर्ति बनाई, जो 'वुमेन विद ए वेस' के नाम से मशहूर है। उसके पहले वे 'ओवीटी' बना चुके थे, जिसमें प्रागैतिहासिक शिल्प का प्रयोग है। इनमें 'प्लास्टर ऑफ पेरिस' की बेहद प्रभावोत्पादक कशीदाकारी है। 'क्रूसीफिक्शन' मूर्तियों से पिकासो ने विवादों की राजनीति करनेवाले अपने विरोधियों और प्रशंसकों को इस स्थिति में नहीं रहने दिया था कि वे इस धाकड़ महारथी के बारे में कोई धारणा बना सकें। विश्वयुद्ध छिड़ने से पहले पिकासो ने धमाके पर धमाके करके कला जगत् में एक नए युद्ध का बिगुल बजा दिया था। रणभेरी बजने के बाद एक ओर अकेला निर्पंथ योद्धा पिकासो, दूसरी तरफ विभिन्न पंथियों की पूरी बटालियन! सृजन संचेतना को स्वयं शब्दों में आकार देना पिकासो ने अतीत को छोड़कर नहीं

शुरू किया। अभिव्यक्ति का माध्यम भी उन्होंने हलचल मचाकर बदला, ताकि कारवाँ गुजरे भी तो गुबार दूर तक दिखाई दे।

'गुएर्निका' पेंटिंग की नींव तो वैसे 1937 में पड़ी, जब युद्ध अवश्यंभावी हो गया। मगर उसका नक्शा पिकासो ने अपने मन में पहले ही तैयार कर लिया था। 1927 में मेरी-थेरेसी वाल्टर से बढ़ते पिकासो के मेल-जोल के बाद 1932 में 'हेड ऑफ ए वुमेन' और 'डेथ ऑफ ए टोरेटो' हिट हुई, लेकिन यह रंग लाया 1933 में।

अंदर का कोलाहल यह था कि ओल्गा कोकलोवा से उनके संबंध खराब हो गए थे। मेरी-थेरेसी वाल्टर बाजाप्ता पत्नी के रूप में पिकासो के साथ रह रही थी और तीसरी औरत डोरा मार से मिलना-जुलना शुरू हो गया था। यह मिलना-जुलना खुलेआम डंके की चोट पर होता था, आज के पतियों की तरह गुपचुप नहीं। पिकासो की पेंटिंग की तरह उनकी प्राइवेट लाइफ भी एक खुली किताब थी, जिसमें नई-नई किताबों के मसाले भरे थे। पाठक एक पृष्ठ जब तक पढ़ता था, तब तक तेज पिकासो हवा से पन्ने पलट जाते थे। पाठक/दर्शक पिछले पृष्ठ की कोई बात याद नहीं रख पाता था। डंके का विनाद उसे चौंका देता था। पिकासो के जीवन का हर पहलू एक साथ कई कहानियाँ लिये हुए है और उसका प्लॉट वे स्वयं तैयार करते थे।

1933 में मेरी-थेरेसी को प्रतीक बनाकर अपनी एक ऐसी धमाकेदार आकृति बनाई कि सारे कलाप्रेमी हतप्रभ रह गए। पिकासो ने स्वयं को मेरी के साथ बलात्कार की मुद्रा में दिखाया और उसके बाद पहली बार ऐलान किया—'हाँ, हाँ, मैं अवचेतनवादी (सरियलिस्ट) हूँ।' उस स्केच को कलाप्रेमियों ने पिकासो की सर्वोत्तम ड्राइंग की सूची में रखा। पिकासो के परम मित्र सरियलिस्ट कवि और मनोविज्ञानी आंद्रे ब्रेटन तक विचलित हो गए।

यह बात करना कितना रोचक लगता है कि 1935 में ओल्गा कोकलोवा फाइनली पिकासो से अलग हो गई। मेरी-थेरेसी ने पिकासो की दूसरी संतान माया को जन्म दिया। 1936 में डोरा मार से 'अंतरंग' संबंध स्थापित होते ही पिकासो कवि हो गए। स्वयं चुप्पी साधे रहकर दूसरों को हमेशा कुछ-न-कुछ बोलने के लिए कुरेदते रहनेवाले पिकासो ने डोरा मार से मिलन के बाद खामोशी तोड़ी—'मैं अब तराशने और स्केच बनाने का काम छोड़कर कविता गीत जाऊँगा।' डोरा मार भी फोटोग्राफर, कलाकार और संगीतकार थी।

पिकासो की इस रसासिक्त प्रेमपूर्ण घोषणा से उनके चाहनेवालों को मानो नया जीवन मिला। कम और यदा-कदा बोलनेवाले पिकासो जब मुँह खोलते थे तो अपने से संबंधित कई मिथक एक पंक्ति में तोड़ देते थे।

55 वर्षीय पिकासो के कलाकार जीवन का निर्णायक मोड़ माना जाता है, वर्ष 1936। उनके गृह राज्य स्पेन में गृहयुद्ध छिड़ चुका था और विश्वयुद्ध का टलना असंभव हो गया था। बार-बार झंझावातों में फँसने और उबरते रहनेवाला कलाकार कलम को हथियार के रूप में थामे युद्ध का सामना करने को तैयार था।

पेरिस में पिकासो के शुरुआती संघर्ष के दिनों के साथी मैक्स जैकब और विश्वख्यात होने के बाद के मित्र आंद्रे ब्रेटन, जेट्रूड स्टेन, पॉल एलुअर्ड सरीखे कवि, लेखक पिकासो की कविताई का भी लुत्फ उठाना चाहते थे। ये वही लोग थे, जिन्होंने पहले पिकासो की पेंटिंग और मूर्तियों को आर्ट डीलरों की तरह कला की श्रेणी में रखने से ही इनकार कर दिया था। बाद में उन्हीं लोगों को पिकासो ही हर पेंटिंग, शिल्प में गीत और कविता दिखाई देती थी। फिर उन्हीं कवियों, लेखकों को पिकासो की हर कविता शिल्पकला और कैनवास पेंटिंग की तरह रहस्यात्मक लगने लगी। जबकि पिकासो की कविताओं को भी वे कविता मानने को तैयार नहीं थे।

कवि, लेखक और नाटककार के रूप में पिकासो का सबसे अच्छा जीवन-चरित्र लिखनेवाले पेट्रिक ब्रियाँ के मुताबिक, कविता पिकासो की वैकल्पिक आउटलेट बनी, लेकिन मूलत: चित्रकार की मौलिकता उजागर होती रही। पेट्रिक ब्रियाँ खुद भी कवि थे। उन्हीं के शब्दों में, 'पिकासो की काव्य-पंक्तियाँ कहीं भी कोमा, फुलस्टॉप, हाइफन, कॉलन जैसे व्याकरण और शब्द या वाक्य-विन्यास नियमों से बँधी नहीं हैं, बिल्कुल रेखाचित्रों की तरह सपाटबयानी है। चित्रों की तरह पाठकों को पिकासो कहीं अटकने नहीं देते, तराशते प्रतीत होते हैं।'

ख्यातिप्राप्त कवियों और गीतकारों का भी मानना है कि गीत, कविता के शब्दों के साथ अनेक ऐसे भाव स्वत: जुड़ जाते हैं, जैसे चट्टानी पहाड़ों के नीचे कोई पत्थर तराशा दिखाई देता है। वास्तव में, वह वर्षों-सदियों से लुढ़ककर तराशा हुआ बनता है। पिकासो के शब्द भी उसी तरह से हैं। ऐसा कवि, जो सफलतम शिल्पकार हो, तो उसके शब्द तराशने की कला का क्या कहना! कई बातें पिकासो ने कविताओं में कह दीं, जो पेंटिंग के माध्यम से या तो बताने से चूक गए अथवा

उस वक्त उगलने के मूड में नहीं रहे होंगे। प्रतीक अभिव्यक्ति के मामले में कहानी से बेहतर माध्यम कविता माना जाता है।

यह सारा पिकासो की बेमिसाल फंतासी का कमाल है। यूनानी आर्ट की अन्य परंपराओं की तरह पिकासो ने फंतासी की भी परिभाषा बदल दी। फंतासी का उद्‌भव और विकास भी यूनान से हुआ है। इसका शाब्दिक अर्थ वही है, जो पिकासो और उनके समय के अमूमन सभी चित्रकारों में मिलता है। इसमें कलाकार और रचनाकार के बिंबों में विभाजन, संघटन, प्रतीकात्मकता तथा कार्यांतरण समेत स्वप्न तथा कल्पनालोक की सभी प्रक्रियाओं का प्रयोग करता है।

पिकासो ने ठीक साहित्य की तरह फंतासी का प्रयोग कला में किया और लेखन-सर्जना में भी इसका कौशल दिखाया। दोनों ही क्षेत्रों में फंतासी पहले शैली और फिर विद्या बनी, जो 'पिकासो स्टाइल' के नाम से पहचानी जाती है। अगर शब्दकोश से फंतासी को परिभाषित किया जाए, तो वेबस्टर डिक्शनरी के मुताबिक 'फंतासी दिवास्वप्नों की तरह ही एक के बाद एक उभरनेवाले मानसिक बिंबों की ऐसी शृंखला है, जिसकी जमीन में कोई अतृप्त वासना कार्यरत रहती है।'

अगर साहित्यकारों की मानें तो उनके अनुसार, 'फंतासी एक झीना परदा है, जिसमें जीवन तथ्य झाँक उठते हैं। फंतासी का ताना-बना कल्पना बिंबों और प्रतीकों में प्रकट होनेवाली विविध क्रिया-प्रतिक्रियाओं से ही बना हुआ होता है।

दोनों ही परिभाषा पिकासो पर लागू होती हैं और फिट बैठती हैं। पिकासो ने अपनी पेंटिंग, शिल्प, बैले और थिएटर में भी ऐसी ज्यादा फंतासी का प्रयोग किया कि इसकी परिभाषा ही बदल गई। कला की ही भाँति पिकासो ने फंतासी की पूर्व प्रचलित शैली को भी नई पहचान दी।

पिकासो ने कभी-भी तथ्यों को नेपथ्य में नहीं रखा। उनकी कृतियों के हर दृश्य के परदे से सबकुछ दिखाई देता है। पिकासो के बिंब और प्रतीक खुली आँखों में समा जाते हैं।

कल्पनाओं और बिंबों में युद्ध से लहूलुहान कराहती मानवता की चीख बेपर्द हुए बिना चित्र का आकार नहीं ले सकती थी।

शिल्पकार और चित्रकार के रूप में तो दुनिया ने पिकासो का लोहा माना, बल्कि यह कहना ज्यादा युक्तिसंगत होगा कि मानना पड़ा; क्योंकि पिकासो ने एक

अखबार या पत्रिका की तरह अपनी कलाकृतियों को आवाम की चीज बना दिया। लोहा-लक्कड़, झाड़-झंखाड़, मिट्टी, पत्थर, बालू, जिस किसी तुच्छ-से-तुच्छ वस्तु को छुआ, उसमें उमंग भर दी।

युद्धकला के अमानवीय रंगों और कविताई में उसके मानवीय चित्र उतारने की ओर कूच करने के समय पिकासो की ग्राफिक आर्ट में यही उफान आया हुआ था। अवचेतन और सरियलिस्टिक अध्यात्म की बहुमुखी, लेकिन दुरूह छटा बिखेरती पिकासो की कुछ कलाकृतियाँ स्वयं भाव बतानेवाली हैं। मूर्तिकार जुलियो गोन्जालिस की अनुकृति लोहे के रॉड, शीट मेटल और पीतल में ज्यामितिक कोणों से एक सर्जक की भावव्यंजना डाली। यह स्टाइल भी क्यूबिक जैसी है।

उसके बाद 1933 में 'थीम ऑफ दि स्कल्पटर्स स्टूडियो' (मूर्तिकार के स्टूडियो की थीम) बनाई। जरा देखिए कि वास्तव में वो थीम क्या थी? पिकासो जो कहना चाहते थे, वो उन्होंने अपने एक स्पेनी मित्र को बातचीत में बताया—'ईश्वर वास्तव में मेरे जैसा ही चित्रकार है, मैं ईश्वर हूँ, हाँ-हाँ, मैं ईश्वर हूँ'।

शायद कुछ पाठकों को यह गीत याद आ जाए—'हरी-हरी वसुंधरा पे नीला नीला ये गगन, ये कौन चित्रकार है, ये कौन चित्रकार।'

पिकासो वही चित्रकार थे भी। 'ब्लू पीरियड' और 'रोज पीरियड' वाली पिकासो की लैंडस्केप पेंटिंग क्लासिक मानी जाती है। उनमें प्रकृति के विविध रंग नीला गगन, सागर, हरी धरती जैसे साकार-निराकार ब्रह्म के रूपों के अतिरिक्त समाज का नंगा सच भी चित्रित है।

मगर पिकासो के वैसा कहने के पीछे अध्यात्म/अवचेतनवादियों पर चौतरफा हमला था, जो उन्हें लपकने और झटकने को लालायित थे। पिकासो ने उन्हें दोनों में से एक का भी अवसर नहीं दिया।

पिकासो अवचेतन को मानसिक अंतर्द्वंद्व की जगह समाज का दर्पण बनाना चाहते थे। सरियलिज्म को विलासिता के धर्मयुद्ध से निकालकर उस युद्ध की तरफ मोड़ना था, जहाँ धर्म की दुहाई देनेवाले खून का दरिया बहानेवालों के साथ नहाने को बेताब थे।

विश्व समाज और अपने गृह राज्य की विषम परिस्थितियों के प्रति सचेत पिकासो अपने अवचेतन में मानसिक तनाव की रिक्तियाँ सामाजिक तनाव से

भरने में कामयाब रहे। तभी तो 1937 में पिकासो की पहली ऐसी पेंटिंग शृंखला (गुएर्निका) आई, जो खून-खराबे की राजनीति उगलती है।

पिकासो का राजनीतिक अनुशीलन सही नहीं हुआ; क्योंकि उनकी जीवनी लिखनेवाले अधिकांश या तो कलाकार थे, कला इतिहासकार अथवा कला कारोबारी (आर्ट डीलर) थे। उन लोगों ने पिकासो के राजनीतिक जीवन की ओर इतना कम ध्यान दिया कि कई पहलू उपेक्षित रह गए। हर समीक्षक, जीवनीकार ने अपने-अपने मतवाद के वशीभूत होकर क्षेपक के रूप में छिटपुट टिप्पणियाँ कीं। उसके आधार पर कोई आकलन करना मुश्किल है।

तभी तो पिकासो से दु:खी होने के बावजूद डोरा मार ने अपनी सफाई से सबको निरुत्तर कर दिया—'कम्युनिज्म के प्रति पिकासो का अल्पकालिक आकर्षण 'चार्ल्स द गॉल' के कारण था, जिन्होंने पेरिस को नाजी शासन से मुक्त किया।' कॉन्वेलर को भी कहना पड़ा—'पिकासो को मैंने बिल्कुल गैर-राजनीतिक व्यक्ति के रूप में देखा। स्पेन में राजशाही के समर्थक पिकासो इसलिए थे, क्योंकि राजा ने उनके देश स्पेन को प्रथम विश्वयुद्ध से अलग रखा।'

दूसरे विश्वयुद्ध से जर्जर स्पेन की दुर्दशा देखकर पिकासो का दर्द महान् फासीवाद विरोधी कवि पाब्लो नेरूदा ने भी बाँटा—

मक्कार, धोखेबाज जनरलों
मेरा मरा हुआ घर देखो
बिखरे जीर्ण-शीर्ण स्पेन को देखो।

डोरा मार उस वक्त पिकासो के साथ रह रही थी और पिकासो ने कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल होने की बात डोरा से छिपाई।

समाज, विज्ञान, धर्म और युद्ध के कोलाहल चित्रित करने के दौरान भी पिकासो का असफल प्रेम उन्हें झिंझोड़ता रहा। उनका अवचेतन भी इससे प्रभावित हुआ और कला को आधार बनाकर उन्होंने अवचेतनवाद में भी पिकासो रंग की छाप छोड़ी। वैसा इसलिए संभव हो पाया, क्योंकि सरियलिस्ट आंदोलन के लगभग सभी प्रणेता मनोविज्ञान का सहारा लिये हुए थे। यों तो चेतना को ही परिभाषित नहीं किया जा सकता, जिसमें आधुनिक साहित्य और दर्शन की तरह मॉडर्न आर्ट भी रचा-गुँथा है, लेकिन प्रसिद्ध दर्शनशास्त्री सर विलियम हेमिल्टन को ही अगर उद्धृत करें तो पिकासो वहाँ भी सटीक बैठते हैं—'हम अनुभव कर सकते हैं कि चेतना

क्या है! परंतु यह अनुभव किसी अवरोध के बिना दूसरों को नहीं बता सकते हैं। सभी प्रकार के ज्ञानों के मूल में वास्तव में चेतना ही निहित है। जिस हृदय में चेतना संपन्न प्रतिभा अनुप्राणित होती है, वह युग साहित्य के आयाम में सामाजिक चेतना की स्वयं सृष्टि करता है। समाज को नई दृष्टि और जीवन देता है।'

इस बिंदु पर पिकासो के सामने कोई नहीं ठहरता। इसलिए पिकासो को उस मोरचे पर भी विवाद का निशाना बनाया गया।

पिकासो ने एकमात्र कला को पकड़ा और अंत तक नहीं छोड़ा। जिसे छोड़ना था, उसे पकड़ा ही नहीं। पेंटिंग और शिल्प छोड़ने की घोषणा के बावजूद छोड़ नहीं पाए। बाहरी दुनिया में भटकते और राह बदलनेवाले पिकासो अंदर से एकनिष्ठ रहे। अगर ऐसा नहीं होता तो उन्हें ईश्वर कलाकार नजर नहीं आता और वे स्वयं को ईश्वर नहीं कहते, 'जब प्रेम करो तो यह मत कहो कि मेरे हृदय में ईश्वर है, बल्कि यह कहो कि मैं ईश्वर के हृदय में हूँ। प्रेम के भीतर आत्मसिद्धि के अतिरिक्त अन्य कोई आकांक्षा नहीं होती, परंतु यदि तुम प्रेम करो और तुम्हारे मन में इच्छाएँ उत्पन्न हो जाएँ, तो वे स्वयं को पिघलकर उस प्रवाहमान धारा के समान महसूस करने जैसी हो, जो रात में अपने गीत गाती है। सघन वेदना की अनुभूति प्राप्त हो।' अध्यात्म प्रेम की पराकाष्ठा और हठधर्मिता का यह सिद्धांत पिकासो ने सिर्फ कला के लिए आत्मसात् किया हुआ था।

पिकासो ने सिर्फ अपनी कला से प्रेम किया और उसी के प्रति ईमानदार रहे। इसलिए पिकासो की सघन वेदना और अभिशप्त इच्छाएँ उनकी कलाकृतियों में व्यक्त हुई हैं। यह कहना कठिन है कि प्रेम और विवाह में बार-बार झटका पिकासो अपने जिद्दी, सनकी स्वभाव के चलते खाए या औरतों ने ही उन्हें झटका दिया? कहने का तात्पर्य यह कि पिकासो ने उतनी सारी औरतों का दिल तोड़ा अथवा पिकासो कला के वशीभूत औरतों ने ही उनकी आदतों के साथ समझौता करने के बजाय उनके दिल में घर बनाकर उजाड़ा, इसको लेकर भी भाँति-भाँति की कहानियाँ आर्ट डीलरों और आर्ट इतिहासकारों ने जोड़ दी—'एक दिल के टुकड़े हजार हुए, कोई यहाँ गिरा कोई वहाँ गिरा।'

पिकासो ने मजबूत दिल (पत्थर दिल नहीं) पाया था। टूटे बिना ही टुकड़े पिकासो की हर विधा में मौजूद हैं।

पिकासो के रहस्यमय शिल्प में समाए उनसे संबंधित किस्से भी रहस्य बने

हुए हैं। 'वुमेन विद ए वेस' वाली प्लास्टर कलाकृति गागुइन स्टाइल की यूनानी आर्ट पर आधारित थी, जिसमें पिकासो ने दूसरी पत्नी मेरी-थेरेसी की छवि उतारी थी। जॉन रिचर्डसन के मुताबिक, थेरेसी ने पिकासो की मृत्यु और उन्हें दफनाए जाने के बाद 1973 में वो मूर्ति तोड़ दी। यह कोई नहीं जानता कि ऐसा थेरेसी ने अपनी इच्छा से किया या पति की इच्छा से! पीछे आपने पढ़ा है कि थेरेसी के होते हुए ही पिकासो और डोरा मार ने एक-दूसरे पर डोरे डालने शुरू कर दिए थे।

आर्ट टिप्पणीकारों ने पिकासो की हर इच्छा-आकांक्षा को उनके व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन से जोड़कर उसमें सिर्फ उद्दंड वासना-ही-वासना बता दिया। युद्ध, तनाव, देश, समाज की पीड़ा और वेदना का चित्रण करनेवाली पेंटिंग वर्णन के विस्तार में कोई जीवनीकार नहीं गए। थोड़ा-बहुत जो भी जिक्र है, वह सिर्फ इतना ही भर है, जिसको बाइपास करना असंभव था; क्योंकि उसे शामिल किए बगैर उनकी किताब वैसी ही अधूरी मानी जाती, जैसे पिकासो को शामिल किए बिना मॉडर्न आर्ट की हिस्टरी नहीं लिखी जा सकती।

पहले और दूसरे विश्वयुद्ध दोनों के ही चश्मदीद गवाह थे पिकासो। प्रथम विश्वयुद्ध में तो उनकी भूमिका नगण्य बताई जाती है। दूसरे विश्वयुद्ध तक पिकासो ने रेखाओं के साथ-साथ शब्द चित्रण भी शुरू कर दिया था और वे कार्टून टाइप स्केच भी बनाने लगे थे। पिकासो के लेखन और खासकर कविताओं को तो इस नजरिए से देखा गया, मानो यह काम उनके वश का नहीं। कला की तरह लेखन के ठेकेदारों की भी आँखें पिकासो की तमाम रचनाओं में सिर्फ सेक्स, तनाव और वहशीपन खोजती प्रतीत होती हैं।

शिल्प और चित्रों की तरह पिकासो की कविताओं में भी बिंब-प्रतीक भरपूर हैं। उसके कारण फंतासी जीवंत बनी हुई है। कटे-पिटे लहूलुहान चेहरे, खून का तालाब, पत्तों का फुसफुसाना, पुराने घिरे सड़ाँध पानी में डूबी सीढ़ियाँ, लटकते घुग्घुओं के घोंसले, जंगली हरी कच्ची गंध, खँडहर, चट्टान, थरथराती काँपती बेकाबू चाँदनी—ये सारे बिंब सिर्फ दमित कुंठाओं के रंग से रँगे नहीं हैं।

पिकासो शायद समझ रहे थे कि युद्ध में उनका कूची और कलम को हथियार बनाकर शामिल होना किस रूप में लिया जाएगा, लेकिन अपनी धुन के पक्के और अनुकूल या प्रतिकूल टिप्पणियों की परवाह न करने के आदी पिकासो ने उसकी भी

जवाबी तैयारी कर ली थी। उन्होंने इस स्थिति का भी काट एक नए प्रयोग से प्रस्तुत किया। पिकासो ने ब्रश, तराशनेवाले औजार और चित्रों में इस्तेमाल किए जानेवाले रंगों में शब्द जैसी अभियक्ति दी।

अपनी विशिष्ट और बेजोड़ स्टाइल में सबको झटका देनेवाली बचपन की हॉबी पिकासो ने ढलती उम्र में भी नहीं छोड़ी। प्राय: आँधी-तूफान आने से पहले हवा गुमसुम हो जाती है और आँधी में धूल के साथ काफी कुछ उड़ जाता है। विज्ञापन और प्रचार से दूर गुमसुम रहकर पिकासो जग का मुजरा लेते रहते थे।

जग का मुजरा का मतलब अपनी मार्केटिंग का जायजा पिकासो द्वारा हमेशा लेने से है। सरियलिस्ट पेंटिंग और शिल्प को भी उन्होंने मार्केट से जोड़ा। पिकासो को पता था कि उनकी कलाकृतियाँ क्यों हिट हैं? सरियलिस्ट भावाभिव्यक्ति को उन्होंने उसी सीमा तक अहमियत दी, जहाँ पिकासो की मौलिकता धूमिल न पड़े।

लेकिन पिकासो को जब लगा कि उनकी साहित्य-कला को नोटिस नहीं किया जा रहा है, तो उसी में सरियलिस्ट स्टाइल का इस्तेमाल किया। पिकासो स्वयं भी मानते थे कि पेंटिंग और शिल्प जैसी दमदार भाव व्यंजना शब्दों की भाषा में नहीं आती, लेकिन पिकासो को यह मंजूर नहीं था कि कवि और लेखक के रूप में उन्हें कोई पहचान न मिले। इसके लिए पिकासो ने हाथ-पाँव बहुत मारे, लेकिन शिल्प और पेंटिंग जैसी मान्यता उन्हें नहीं दी गई। जबकि पिकासो ने दोनों ही विधाओं में एक जैसी फंतासी का प्रयोग किया।

हिंदी साहित्य के महान् फंतासी प्रयोगवादी कवि गजानन माधव 'मुक्तिबोध' की कविता 'दिमागी गुहा अंधकार का औरांग उटांग' की यह पंक्ति पिकासो पर फिट बैठती है—

स्वप्न के भीतर एक स्वप्न
विचारधारा के भीतर और
एक अन्य
सघन विचारधारा प्रच्छन्न कथ्य के भीतर एक अनुरोधी
विरुद्ध विपरीत
नेपथ्य संगीत
मस्तिष्क के भीतर एक मस्तिष्क
उसके भी अंदर एक और कक्ष।

पाठकों को याद दिला दें कि क्यूबिक आर्ट का मूल यही वैज्ञानिक सिद्धांत है और इसमें सरियलिज्म की घुसपैठ के बावजूद मूल भावना से पिकासो टस-से-मस नहीं हुए। पिकासो ने गीत और कविता लिखने का फैसला करने से पहले एक बेहतरीन 'नेत्रहीन मीनोटॉर शिल्प' 1935 में तैयार की। यह पिकासो की सर्वोत्तम कलाकृतियों में टॉप पर है। इसमें पिकासो ने ऐसा अद्‌भुत कमाल दिखाया कि एक ही में शिल्प की सारी विधाएँ गुँथी हैं। उसमें पेंटिंग भी है, अमूर्त शिल्प भी है, कविता भी है और उसके हर कोण एक अलग कथाशिल्प रचते हैं।

पिकासो ने दावा किया कि उसमें वैसे रंग और उभार दिए, ताकि नेत्रहीन भी पढ़ ले, लेकिन इतना सब होने के बावजूद पिकासो की कविताओं के सिलसिले का पता नहीं चलता। कई जीवनीकारों ने तो इसका जिक्र भी नहीं किया है। पिकासो की मृत्यु के वर्षों बाद तक लोग कवि पिकासो को नहीं जान पाए। युद्ध त्रासदी के प्रति संवेदनशील पिकासो का अवचेतन कवि भी कलाकार की तरह जाग्रत् था। पिकासो ने रेखाओं और शब्दों में एक जैसी वर्तनी का इस्तेमाल किया। उनकी भरपूर कोशिश यह रही कि भिन्न-भिन्न माध्यमों के बावजूद पेंटिंग, शिल्प और कविता के भावों में कोई अंतर न हो। यह शिल्प-सह-पेंटिंग भी पिकासो ने समुद्र तट की बालू पर बैठकर बनाई, जब ओल्गा और मेरी-थेरेसी उलझी हुई थीं कि कौन पिकासो के ज्यादा करीब है?

दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद पिकासो ने एक अंतरराष्ट्रीय संवाददाता सम्मेलन आयोजित किया। उसमें पत्रकारों के अलावा कवि, लेखक, फोटोग्राफर, उपन्यासकार सब आमंत्रित किए गए। पहली बार पिकासो ने अपने विषय में पूछे गए सभी सवालों का जवाब दिया। दो दशकों से अपने खिलाफ चल रही तमाम टीका-टिप्पणियों का स्पष्टीकरण दिया।

पिकासो को उससे पहले अफसोस जताते किसी ने नहीं देखा था। उन्होंने कहा कि फ्रांको के अत्याचार से तड़पते स्पेन पर पिकासो की कविता की अनदेखी की गई, लेकिन इस बात का प्रचार हुआ कि पिकासो के अपने मामा जनरल जुआन पिकासो गृहयुद्ध की नौबत लाने के लिए जिम्मेदार थे, जिन्होंने सम्राट् की कमजोरी बताकर फ्रांको के जरिए नाजी सैनिकों की मदद से सम्राट् अल्फांसो को अपदस्थ करने की साजिश रची।

इसका श्रेय डोरा मार को जाता है, जिन्होंने 'गुएर्निका' पेंटिंग और साहित्यिक रचनाओं के साथ खुद को सामने लाने के लिए पिकासो को राजी किया। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान अन्य लेखकों, कलाकारों, कवियों की तुलना में पिकासो की भूमिका बिल्कुल नकार दी गई। चूँकि वह लड़ाई फासीवादी तानाशाही के खिलाफ भड़के जनवाद की थी और दुनियाभर के बड़े-बड़े लेखक, कलाकार बजाब्ता सैनिक की तरह लड़े, इसलिए पिकासो सीन से हट गए। हटने से ज्यादा हटाना कहा जाए तो ज्यादा युक्तिसंगत होगा; क्योंकि पिकासो को परस्पर विरोधी वादों में उलझाकर उनकी पेंटिंग को भी नजरअंदाज कर दिया गया। जर्मनी के घुटने टेकने के बाद जब युद्ध खत्म होने के कगार पर था, उस समय पिकासो कविता के साथ-साथ कुम्हार कला विकसित करने में जुट गए थे। इसे किसी ने नोटिस ही नहीं किया।

यह बात पिकासो को सबसे ज्यादा अखरी। इसलिए पिकासो ने अपने पेरिस स्टूडियो में सबसे ज्यादा अमेरिकी सैनिकों को आमंत्रित किया, जिनकी युद्ध में मुख्य भूमिका थी। पिकासो ने सबको अपने आलीशान लग्जरी स्टूडियो की एक-एक चीज दिखाई। सभी पत्रकारों और लेखकों से कहा कि कला की मौलिकता अक्षुण्ण बनाए रखनेवाले उनके विचारों को प्रचारित करें, उन भावनाओं को लेखन का विषय बनाएँ।

प्रख्यात कला इतिहासकार और पिकासो के पारिवारिक मित्र जॉन रिचर्डसन के अनुसार, उस समय पेरिस, रोम, बर्लिन, मास्को और स्पेन की राजधानी मैड्रिड में, जहाँ-जहाँ पिकासो रहे, तरह-तरह की बातें पिकासो की कला चर्चाओं को गौण कर रही थीं।

स्पेन के गृहयुद्ध में पिकासो के मामा की भूमिका को अनावश्यक रूप से प्रथम विश्वयुद्ध से जोड़ दिया गया कि जर्मनी के कैजर/सम्राट् विलहेल्म II की इंग्लैंड के किंग जॉर्ज V और रूस के जार निकोलस दोनों से रिश्तेदारी थी, लेकिन जर्मनी ने ही रूस के खिलाफ युद्ध का ऐलान किया और 1917 में जारशाही के खिलाफ बोल्शेविक क्रांति में लेनिन को सहयोग दिया। उस वक्त पिकासो रूस में ही थे। सेर्गी दियागिलेव की बैले कंपनी से जुड़कर पेरेड, ली ट्रिकोर्न, पुल्सिनेल्ला जैसे क्रांतिकारी थिएटर डांस के निर्देशक और डिजाइन मेकर बने हुए थे।

कला की विभिन्न विधाओं में क्रांतिकारी प्रयोग आजमाकर परंपरागत व्यवस्था को चुनौती देनेवाले पिकासो ने सामाजिक और राजनीतिक क्रांतियों से खुद को अलग रखा। वे प्रकारांतर से निरकुंश राजनीतिक सत्तावाली व्यवस्थाओं के समर्थक ही बने रहे। कुछ लेखकों ने पिकासो की आँखें मुसोलिनी से मिलती-जुलती बताई हैं। एक प्रसिद्ध कोलुमिस्ट (स्तंभकार) जेरोम सेक्लर ने तो यहाँ तक लिखा है कि 28 सितंबर, 1938 को म्यूनिक (जर्मनी) में एडोल्फ हिटलर और बेनिटो मुसोलिनी की मुलाकात के एजेंडे में युद्ध तैयारियों के अलावा पिकासो भी थे।

लेकिन उन्होंने यह भी लिखा है कि इटली के तानाशाह मुसोलिनी ने अपने हेडक्वार्टर पैलेजो वेनेजिया में फासीवाद के प्रतीक के रूप में विशाल महल बनाने के समय अपनी कलात्मक मूर्ति के लिए पिकासो को बुलवाया था, लेकिन पिकासो ने मना कर दिया।

पिकासो को 1950 में सोवियत शासक स्टालिन की तसवीर बनाने पर फ्रेंच कम्युनिस्ट पार्टी की आलोचना का शिकार होना पड़ा। सोवियत सरकार की ओर से 'स्टालिन शांति पुरस्कार' प्रदान किए जाने के बाद पिकासो ने स्टालिन की एक स्केच बनाई। उसी समय पिकासो ने अपने आलोचकों को जेरोम सेक्लर को दिए गए इंटरव्यू की पंक्तियाँ याद दिलानी पड़ीं—'मैं कम्युनिस्ट हूँ तथा मेरी पेंटिंग कम्युनिस्ट पेंटिंग है···अगर मैं मोची, साम्राज्यवादी, कम्युनिस्ट अथवा और कुछ होता, तो मैं अपने जूते ऐसे खास तरह से डिजाइन करता, जो मेरी राजनीति की जानकारी दें।'

ज्याँ कॉकटियू की डायरी के मुताबिक, पिकासो किसी बातचीत के क्रम में यहाँ तक कह गए—'कम्युनिस्ट पार्टी में मेरा शामिल होना एक परिवार का सदस्य बनने जैसा है।' लेकिन इतना होने के बावजूद कम्युनिस्ट लेखकों और कलाकारों के मुँह से पिकासो की आलोचना ही ज्यादा सुनने को मिलती है। पिकासो विशेषज्ञों की राय में ऐसी आलोचनाओं को हवा देने में सल्वाडोर डाली आगे थे। डाली खुद को पिकासो का स्वयंभू समानांतर कलाकार मानते थे—'पिकासो चित्रकार हैं, मैं भी हूँ। पिकासो की तरह मैं भी स्पेन का हूँ और कम्युनिस्ट हूँ।'

पिकासो के पुराने मित्र सरियलिस्ट कवि आंद्रे ब्रेटन तो पिकासो के कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल होने से इतने नाराज हुए कि उनसे हाथ मिलाने तक से इनकार कर

दिया। आंद्रे ब्रेटन ने लेनिन-स्टालिन के घोर विरोधी ट्रॉट्स्की से हाथ मिलाकर रखा था। खबर है कि स्टालिन राज में ट्रॉट्स्की की कुल्हाड़ी से काटकर हत्या की गई।

जैसा कि लिखा जा चुका है कि 1944 में पेरिस के जर्मन आधिपत्य से मुक्त होने के बाद पिकासो फ्रेंच कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बने और उसी हैसियत से पोलैंड अंतरराष्ट्रीय शांति सम्मेलन में शामिल हुए। वार्सा म्यूजियम को पिकासो ने अपनी कई युद्ध विरोधी पेंटिंग अनुदान में दीं, लेकिन 1945 से पिकासो को अपने कम्युनिस्ट होने के विषय में बार-बार सफाई देनी पड़ी।

1962 में 'लेनिन शांति पुरस्कार' से सम्मानित होने के बाद पिकासो के बारे में आखिरकार कला समीक्षक और जीवनीकार जॉन बर्गर ने कह डाला—'एक महान् कलाकार की प्रतिभा कम्युनिस्टों द्वारा नष्ट की जा रही है।' जबकि पिकासो ने 1944 में ही पोस्टर पर बतख का लिथोग्राफ बनाया, जो वामपंथी शांति का प्रतीक माना गया।

यह बात पढ़ने-सुनने में अजीबोगरीब लगती है कि जिस कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य पिकासो अंतिम साँस लेने तक बने रहे, उस वामपंथ हलको में पिकासो को 'बुर्जुआ' कहा गया। युद्ध छिड़ने से पहले पेरिस स्थित सोवियत दूतावास ने मास्को से कहा कि पिकासो में जरा भी दिलचस्पी लेने की जरूरत नहीं है, 'क्योंकि यह व्यक्ति वामपंथी से ज्यादा बुर्जुआ सोचवाला है।' सरियलिस्ट वामपंथियों को भी तथाकथित बुद्धिजीवी बताकर उनसे सावधान रहने की रिपोर्ट भेजी। पिकासो ने सरियलिस्टों की तरह इसकी भी परवाह नहीं की, बल्कि यह जानकर उलटे उन्होंने राहत की साँस ली। दूसरे विश्वयुद्ध के बादवाले पिकासो का कम्युनिस्ट रिश्ता भी आपने पढ़ा है। विवादास्पद पिकासो के बारे में विश्लेषक यह भी कहते हैं कि वे किसी वाद या विचारधारा से राजनीति करने के लिए नहीं जुड़े।

दूसरे विश्वयुद्ध में अन्य वामपंथी मिजाज के लेखकों और कलाकारों की तरह वे सैनिक बनकर फासीवाद के खिलाफ नहीं लड़े। महायुद्ध ने जिन लेखकों को हीरो बनाया, उनमें प्रमुख हैं—अर्नेस्ट हेमिंग्वे, बर्तोल्त ब्रेख्त, जॉन गाल्सवर्दी, सिएग्फ्रेड सेसून, विल्फ्रेड ओवेन, जॉन मेसफील्ड।

उनमें बर्तोल्त ब्रेख्त और हेमिंग्वे तो लड़े। वैसे तो बुर्जुआ सोच के सिरमौर रूडयर्ड किपलिंग को भी युद्ध के दौरान उत्कृष्ट साहित्य की रचना करनेवालों में

गिना जाता है। विलियम सोमरसेट मॉम, फोर्ड मैडोक्स और ए.पी. हर्बर्ट भी वैसे रचनाकारों में शामिल हैं। जर्मन एरिक मारिया रीमार्क की कृति 'ऑल क्वाइट ऑन दि वेस्टर्न फ्रंट' कालजयी मानी जाती है।

जहाँ तक महिलाओं की बात है, 500 के करीब लेखिकाओं ने कविताएँ, उपन्यास लिखे। मेरी ऑगस्ता वार्ड ने 1915 से 1919 के बीच पाँच युद्ध उपन्यास लिखे। मैन्फ्रेड वॉन, रिक्टोफेन और लॉरेंस ऑफ अरबिया के नाम से सेलिब्रिटी बने। टी. ई. लॉरेंस की 'विवेक के सात खंभे' आज भी चर्चित है।

पिकासो की कला और साहित्य की चर्चा क्षेपक जोड़कर होती है।

दरअसल, पहले विश्वयुद्ध के विपदाकाल से ही पिकासो सदमा-पर-सदमा झेलते रहे। उनमें कुछ विपदा प्राकृतिक थी और ज्यादा स्वनिर्मित। अपने अभिन्न मित्र जॉर्जेस ब्रेक के साथ मिलकर पिकासो ने एक नए स्टाइल का 'क्यूबिक आर्ट आंदोलन' चलाया। ब्रेक के 1914 में फौज में शामिल हो जाने के बाद उनकी पिकासो से दोबारा पहले जैसी दोस्ती नहीं हो पाई। पिकासो के कवि मित्र और शुरुआती दौर से ही उनके आर्ट डीलर एपोलीनायर भी सेना की मेडिकल यूनिट में भरती हो गए और थोड़े ही दिनों बाद महामारी में उनकी मृत्यु हो गई। एवा की 1915 में मृत्यु हो गई।

वैसे युद्ध के दौरान भी पिकासो एक से बढ़कर एक बेहतरीन पेंटिंग और शिल्प बनाते रहे। साथ-साथ बेहतरीन नई-नई लड़कियों को भी अपनी कला के मायाजाल में फँसाते रहे।

पिकासो का मिलना-जुलना और अपनी छवि सुधारने के लिए घूमना-फिरना ज्यादा दिन नहीं चला। 1945 में युद्ध समाप्त होने के बाद से वे यदा-कदा ही सार्वजनिक रूप से कुछ बोलते थे या किसी से मिलते थे।

रोम-रोम सिहरा देनेवाला, युद्ध की विभीषिका दरशाता 1944 का कांस्य शिल्प 'मैन विद ए लैम्ब' पिकासो की जबरदस्त जीवंत शिल्प मानी गई। जर्मनी के खिलाफ तीखा गहरा जख्म करनेवाली उस कलाकृति ने दुनियाभर में पिकासो का फिर से डंका बजा दिया। उस समय पिकासो 63 वर्ष के थे।

पेरिस में रहते हुए पिकासो ने आहिस्ता-आहिस्ता खुद को फ्रांस से भी अलग कर लिया। 1946 में सुदूर गाँव के दक्षिण स्थित कुम्हार कला शहर वालाउरिस

जाकर युवा पेंटर फ्रैंकोइस गिलट के साथ रहने लगे। वहीं रहकर पिकासो ने मिट्टी और बालू में रंग-बिरंगा कलात्मक डिजाइनजर कलेवर दिया। समाज से बिल्कुल कटकर पिकासो 1953 तक वालाउरिस में रहे और कुम्हार कला की भी प्रतिभा का प्रमाण प्रस्तुत किया। वहीं रहते हुए उस दिलफेंक बुजुर्ग पेंटर का एक कुम्हार की लड़की जैकलीन रॉक से इश्क चला।

फ्रैंकोइस की जगह जैकलीन ने ले ली। पिकासो की मिस्ट्रेसों/प्रेमिकाओं में कदाचित् एकमात्र ओल्गा थी, जिसने मरते दम तक उन्हें तलाक नहीं दिया। ओल्गा को पिकासो ने ही छोड़ा। जबकि सबसे ज्यादा रोमांस पिकासो ने ओल्गा के साथ किया और ओल्गा के साहचर्य से पिकासो ने कला, सरकस, बैले के क्षेत्र में विविधतापूर्ण रोमांटिक प्रस्तुतियाँ दीं। 1955 में ओल्गा पिकासो का नाम लेते हुए दुनिया से चली गई।

जैकलीन के साथ पिकासो कुछ वर्षों तक यहाँ-वहाँ घूम-घूमते रहे और फिर 1961 में शादी करके केन्नेस की उत्तरी पहाड़ी पर स्थित मूगिन्स में बस गए।

पिकासो की पूरी कला-यात्रा की पृष्ठभूमि में उनका स्वदेश-प्रेम मुखर है। 'लिस डीमोइसेलेस डी एविग्नोन' की तरह पिकासो की दूसरी ऐतिहासिक पेंटिंग श्रृंखला 'गुएर्निका' भी स्पेन से ही शुरू होती है। स्पेन के बास्क प्रांत की राजधानी गुएर्निका को जर्मन और इटालियन सैनिकों की मदद से फ्रांको ने निशाना बनाया। फ्रांसिस्को फ्रांको ने स्पेन रिपब्लिक की जनतांत्रिक तरीके से चुनी गई सरकार के खिलाफ फासिस्ट शासकों के इशारे पर षड्यंत्र किया।

26 अप्रैल, 1937 को गुएर्निका शहर पर हुई जर्मन बमबारी से संवेदनशील कलाकार पिकासो आहत हो गए। रिहायशी इलाकों में बमवर्षक विमानों की नीची उड़ानें और मशीनगनों से गोले इरादतन ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को मारने के उद्देश्य से बरसाए गए। नृशंस मौत के तांडव का संचालन जर्मन सैनिकों के जिम्मे था। उस भीषण हत्याकांड में गुएर्निका के 600 से ज्यादा निहत्थे बेकसूर नागरिक मारे गए और शहर तो पूरी तरह ध्वस्त हो गया। उस बीभत्स-भयानक दृश्य से पिकासो की आँखों में उतरा खून पहली 'गुएर्निका' पेंटिंग की थीम बना। आतंक और पाशविक दरिंदगी प्रतीक रूप में पिकासो ने 25 फीट से 11 फीट कैनवास पर उकेरी। 'गुएर्निका' से आरंभ करके पिकासो ने उस सिलसिले को दूसरा विश्वयुद्ध

खत्म होने के साथ ही विराम दे दिया। कूची और कलम के सिपाही ने स्वयं को दरकिनार नहीं होने दिया। फिर 1945 के बाद के वर्षों में तो पिकासो ने अपने को ही ऐसा दरकिनार कर लिया कि उनकी अनुपस्थिति से लोग असहज महसूस करते थे।

उस अवधि की पेंटिंग में स्पेन ज्यादा झाँकता है, क्योंकि पिकासो ने उसका नाम 'फ्रांको का झूठ और सपना' रखा था, लेकिन उन प्रतीकों में युद्ध के मैदान में बिखरे जले-कटे मांस के लोथड़े, क्षत-विक्षत लाशें, मनुष्य की टेढ़ी-मेढ़ी, कागज की लुगदी की तरह मुड़ी-तुड़ी आदमी और जानवर की चीत्कार करती आकृतियाँ, कराहती, छटपटाती औरतें और बच्चे, दर्दनाक कुचले चेहरे तथा उन्हें रौंद रहे टैंकों, तोपों तथा घोड़ों को रेंगते दिखाया गया है। वे बिलखती, तड़पती इनसानियत के जालिम कसाइयों के क्रूर हाथों द्वारा गला रेते जाने के बिंब हैं। लगभग सब में 'ब्लैक एंड व्हाइट' शैडो का इस्तेमाल किया गया है।

पेरिस अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनी में 'गुएर्निका' पेंटिंग की पूरे विश्व में काफी समय तक चर्चा होती रही। पेंटिंग और कला के प्रति पिकासो की उदासीनता के बावजूद उनकी पेंटिंग की सक्रियता बरकरार रही। उसमें बुलफाइटिंग (साँड़ों की लड़ाई) को हिंसक हमलावर के प्रतीक के रूप में दिखाने पर भी टीका-टिप्पणियाँ हुईं कि पिकासो ने मौज-मस्ती और मनोरंजन के दिनों की याद युद्ध के बहाने ताजा की है। जबकि पिकासो ने खूँखार साँड़ों को आदमी, महिला और बच्चों पर टूट पड़ते दिखाया है। नशे में चूर साँड़ मृत बच्चे को गोद में लिये चीखती औरत का शरीर नोचने पर आमादा है।

प्रतीक पर पिकासो ने साफ कह दिया कि यह दर्शकों के देखने और समझने की चीज है, यह समझाना कलाकार का काम नहीं। प्रतीक की भाषा लकीरों में होती है और वही पेंटिंग के अक्षर तथा शब्द हैं। फिर जवाबी कारवाई में पिकासो ने 'फ्रांको का झूठ और सपना' को शब्द रूप देने के लिए कविता भी लिखी। फ्रांको के व्यंग्य कार्टून बनाए। एक कार्टून में पिकासो ने फ्रांको को एक हाथ में तलवार और दूसरे में झंडा लिये मरे घोड़े का गोश्त दिखाते दिखाया है।

युद्ध के दिनों में पेरिस में रहते हुए पिकासो जर्मन जासूसों को झाँसा देकर पेंटिंग में युद्ध त्रासदी की तसवीर बनाते रहे। अपनी कुछ पेंटिंग जलाने का नाटक करके पिकासो ने ऐसे स्केच छिपाकर बचा लिये थे।

पिकासो के अवचेतन में युद्ध की विनाशलीला उम्र भर उथल-पुथल मचाती रही। कविताओं और नाटकों में भी पिकासो की थीम में वैसे अमूर्त विचारों ने शब्दों का आकार लिया। उनमें टॉल्सटॉय, ज्याँ पाल सार्त्र, विक्टर ह्यूगो जैसे प्रख्यात लेखकों की छाप है। टॉल्सटॉय की कालजयी क्लासिक 'वार एंड पीस' को तो पिकासो ने 1952 में वालाउरिस में कुम्हार कलाकृति बनाते हुए चित्रित किया।

उसके पहले पिकासो 'मौत का सिर' (1943) और 'कार्नेल हाउस' (1945) में अपने मर्माहत अवचेतन की तसवीर उजागर कर चुके थे। 'मौत का सिर' में काला, डरावना अँधेरा, खून से लथपथ चेहरे, घूरती नरपिशाची आँखें हैं। 'कार्नेल हाउस' पेंटिंग में निगलने को आतुर राक्षसी मुँह, युद्ध का खौफ, कब्रगाहों में चीत्कार करती रूहें और बेवा-बेसहारा औरतें दिखाई गई हैं।

इतना ही नहीं, 'कार्नेल हाउस' (अर्थात् 'मुर्दाघर') में जली-कटी लाशों की कंकालनुमा हड्डियाँ 'अतिसभ्य' एलीट के सुसज्जित सफेद डाइनिंग टेबल के नीचे दिखाई गई हैं। टेबल के ऊपर एक खाली जग और खाली पतीला रखा हुआ है। यह महज एक कैनवास स्केच नहीं, मौत की विशाल चट्टान है। उससे टूट-टूटकर चट्टान के टुकड़े खंडित सभ्यता पर हैवानियत के खूनी पंजे की छाप छोड़ते जा रहे हैं। स्वयं सभ्यता के ही पीड़ित अवचेतन में यह समाया हुआ है।

पिकासो की युद्धकालीन पेंटिंग इसीलिए मास्टरपीस मानी जाती है, क्योंकि इससे युद्ध के बाद सभ्यता के आधारस्तंभों पर सवाल उठ गए। इतिहास खुद को दुहराता है। पिकासो का नंगा सच देखनेवालों की आँखों में धूल नहीं, मानव निर्मित विपदा से विकीर्ण विकृत सभ्यता की नोक झोंकता है। पीछे इसकी कहानी पाठकों ने शार्ली एब्दो में पढ़ी है, जो पेरिस से ही आरंभ होती है, लेकिन खत्म कब कहाँ होगी, कोई नहीं जानता।

□

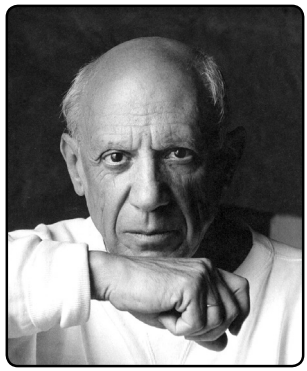

पिकासो के अंतिम दिन

पिकासो का अंतिम दशक अपने मन-मस्तिष्क अवचेतन में विचरण और उसके चित्रण में बीता। जैकलीन रॉक के आने के बाद उनके नई लड़की तलाशने पर तो ब्रेक लग गया, लेकिन अपना काम पिकासो बिना ब्रेक के करते रहे। उस दौरान पिकासो ने जो कविताएँ लिखीं, उनमें उनकी रचनाधर्मिता अवचेतन मन की भड़ास निकालने जैसी है। अवचेतन दर्शन के प्रसिद्ध विश्लेषक विलियम हेमिल्टन ने इस उद्वेलित मानसिक स्थिति की क्या परिभाषा दी है, यह बात पिछले पन्नों में आप पढ़ चुके हैं। बिना कोमा, फुलस्टॉप के वाक्य लिखनेवाले पिकासो के लेखन पर हेमिल्टन ने बहुत जघन्य टिप्पणी की है—पिकासो की कुछ रचनाएँ वंचित और बुभुक्षित कामुकता की परिचायक हैं। वे 'नरभक्षी गिद्ध की तरह औरत को नोचते-खसोटते नजर' आते हैं।

लेकिन यह भी सच है कि लेखक, कवि के रूप में भी पिकासो की जिंदगी पेंटर और शिल्पकार की तरह बिना कोमा, फुलस्टॉप के गुजरी। मृत्यु से ही पिकासो के सृजन और जीवन को फुलस्टॉप लगा।

ऐसे सृजनकर्ता इतिहास में बहुत कम मिलते हैं। उम्रदराज हो जाने के कारण 1960 से 1970 के वर्षों में पिकासो ज्यादातर बीमार रहते थे, लेकिन थोड़ा भी स्वस्थ होते ही काम में जुट जाते थे। थकान, सुस्त पड़ना और रिलैक्स होना पिकासो की दिनचर्या का हिस्सा कभी नहीं बना। इक्का-दुक्का पेंटिंग और लेखन की तरह पिकासो का मिलना-जुलना भी इक्का-दुक्का लोगों से हो पाता था। पिकासो स्केच, ड्राइंगवाली पेंसिल और रंगीन चाक से ही लिखते थे। उन्होंने कभी भी अपने शिल्पों और मूर्तियों में चित्रित छवियों को शब्दों में व्यक्त नहीं किया।

अंतिम क्षणों तक पिकासो के साथ बतौर सहायक और निजी सचिव के रूप में रहे मारियानो मिगुएल मोन्टेनेस ने अपने संस्मरण में बहुत सारी जानकारी दी हैं।

पिकासो को सबसे ज्यादा अपनी मातृभूमि अंदालुसिया की याद आती थी। वे स्कूल के जीवन के मित्रों से ही मिलते थे। आर्ट डीलरों और प्रदर्शनी आयोजित करनेवालों को पिकासो से मिलने के लिए कई-कई दिन इंतजार करना पड़ता था। उनकी रोजमर्रा की जिदंगी झक्की, विक्षिप्त जैसी जरूर बीत रही थी, लेकिन अपने काम में पिकासो ने इसका बोध नहीं होने दिया।

पिकासो अपने पैतृक गाँव के घर के चूहे को याद करके रूसी बैले संगीत के सुर में गाते थे, जो उन्होंने रूस में रहते हुए इगोर स्टेविन्स्की और प्रेमिका सह-पत्नी ओल्गा कोकलोवा से सीखा था। 1969 के अप्रैल में एक दिन पिकासो ने बच्चे की तरह खेलने के मूड में स्पैनिश गीत गाया—

मैं पहला चूहा हूँ।
मैं ही दूसरा चूहा हूँ…

पंक्ति पूरी होने से पहले पास बैठे सहायक मिगुएल ने सहायता की—

और मैं तीसरा चूहा हूँ
और जब पुलिसवाले ने हमें खदेड़ा …

यह पिकासो के समय का बेहद लोकप्रिय गीत था।

पिकासो को जाने-माने कवियों ने कवि के रूप में मान्यता नहीं दी। यह बात जितनी सही है, उतना ही सच यह है कि पेंटिंग की तरह पिकासो की कविता से भी कई कवि प्रभावित हुए। कवि, लेखक मिशेल लेरिस ने पिकासो की कविता जेम्स जॉयस से मिलती-जुलती बताई है। जॉयस के साथ तो पिकासो पेरिस में बैठकी जमाते थे। पाठकों ने पीछे पढ़ा है कि 1901 में प्रथम नोबेल साहित्य पुरस्कार विजेता फ्रेंच कवि सल्ली प्रोधोम के काव्य 'ली बोन्हेयर' से भी पिकासो प्रभावित थे।

पिकासो के अंतिम दिनों की चर्चा उनकी कविता के साथ करना इसलिए आवश्यक है कि अपनी कविताओं की अवचेतन थीम के बारे में जो कुछ पिकासो ने कहा था, वह आज सही साबित हो रहा है।

पिकासो ने मित्र कवि राफेल अल्बर्टी और अपने पहले जीवनीकार जाइमे सेवर्टिस से कहा था—'मैं जब शब्दों को पकड़ता हूँ तो अवचेतन दिमाग की अभिव्यक्तियों को यह सोचकर बाहर नहीं निकालता कि ये कविता कहलाएँगी।

बहुत सारे शब्द जमा होकर कुरेदने लगे तो बाहर निकालकर उनका स्केच बना दिया, लेकिन मेरे मरने के काफी समय बाद इनसाइक्लोपीडिया में इसे पहचान मिलेगी—'पिकासो पाब्लो रूइज—स्पेनी कवि, जिसने पेंटिंग, ड्राइंग तथा शिल्पकला में उपलब्धियाँ हासिल कीं'।'

दक्षिण फ्रांस के मूगिन्स स्थित आलीशान 'ला कैलीफोर्नी' विला में पिकासो काम से फारिग होते ही अपने बीते दिन याद करके कभी हर्ष तो कभी विषाद में डूब जाते थे। उतनी सारी महिलाओं के साथ अपने संबंधों, उनसे हुए बच्चों को लेकर युवावस्था और अधेड़ उम्र तक पहुँचने की यादें भी पिकासो के कलाकार दिल को कचोट पहुँचाती थीं।

1968 के दिसंबर में इटली के 'पिकासो स्टाइल' पेंटर और कंपोजर टीनेटो गुट्टूसो जब सपत्नीक मिलने आए, तो उन्होंने पिकासो की दुःखती रगों पर उँगली रख दी। टीनेटो कम्युनिस्ट थे और रूसी धुन में ओपेरा सिंगर जैसी उनकी आवाज थी। वे एक ही साथ 'सर्वहारा' और 'बुर्जुआ' के सम्मिश्रण थे।

उस बुढ़ौती में भी पिकासो को महिलाओं के साथ बिताए अपने समय ने बहुत दुःखी रखा। 1969 के अंत में एक अमेरिकी फोटोग्राफर और फिल्ममेकर ने पिकासो पर फिल्म बनाई, जो कुछ अमेरिकी विश्वविद्यालयों में दिखाई गई। फिल्म में 'बुल फाइट' (साँड़ों की लड़ाई) के अलावा पिकासो के महिला संबंधों का भी जिक्र है।

पिकासो पर बदसलूकी और बेवफाई का आरोप लगाकर फ्रैंकोइस गिलट जब पिकासो से अलग हुईं, तो उनसे हुए बच्चों को भी अपने साथ ले गईं। गिलट ने 1964 में पिकासो पर लिखी अपनी किताब में यह बात लिखी है। गिलट ने अपने पति लुक सिमोन को तलाक देकर पिकासो से शादी यह सोचकर की कि उनसे हुए बच्चों को वारिसी हक मिले। उन्हें अँधेरे में रखकर पिकासो गिलट से भी चार साल छोटी जेनेवीवे लेपोर्टे से चक्कर चला चुके थे। जबकि फ्रैंकोइस गिलट और पिकासो में भी उम्र में काफी अंतर था।

अंतिम क्षणों तक पेंटिंग बनाते हुए विदा लेनेवाले पिकासो की क्षमता और दृढ़ता ने उन्हें अपवाद कलाकार बना दिया। उनकी कलाकृतियों की अनुमानित संख्या 50,000 आँकी गई है। उनमें 1885 पेंटिंग, 1228 शिल्प, 2850 सेरामिक, लगभग 12,000 ड्राइंग और हजारों स्केच, प्रिंट और ग्राफिक हैं। कविताएँ भी लगभग 250 से 300 के बीच हैं।

1968 से 1971 तक की पिकासो की पेंटिंग को कला समीक्षकों ने पोर्नोग्राफिक फंतासी और अपनी नपुंसकता का भोंड़ा-विकृत चित्रण करार दिया। उस समय कला जगत् में 'एब्स्टेक्ट' (अमूर्त) अभिव्यक्ति स्टाइल चली हुई थी। मगर पिकासो ऐसी अंतरराष्ट्रीय सेलिब्रिटी थे कि उनके फर्जी दस्तखत से पेंटिंग कई कलाकार बेच रहे थे। पिकासो का दस्तखत भी डिजाइनदार था।

8 अप्रैल, 1973 को पिकासो ने जब अंतिम साँस ली, उस वक्त वे अपने मूगिन्स विला में पत्नी जैकलीन और दोस्तों के साथ डिनर टेबल पर बैठे थे। बहस और बातचीत का विषय जायदाद का वारिसी हक था। जैकलीन रॉक ने अपने दोनों बच्चों—क्लाउड और पालोमा को अंत्येष्टि में शामिल होने से मना कर दिया। पिकासो को दफनाए जाने के बाद भी इस बात की चर्चा हुई कि उन्होंने फ्रैंकोइस गिलट को धोखे में रखकर चुपके-चुपके जैकलीन से शादी रचाई थी। क्लाउड और पालोमा के अपने पिता से अच्छे संबंध कभी नहीं रहे।

पिकासो की हर ज्यादती के प्रति सॉफ्ट कॉर्नर रखनेवाली एकमात्र जैकलीन रॉक अपने पति का अंत आँखों के सामने देख मुरझा गई, बिल्कुल टूट-सी गई। पूरी एक सदी तक दुनिया पर राज करनेवाले पिकासो के बिखरे जीवन की स्मृतियाँ जैकलीन ज्यादा दिन समेटे नहीं रख सकी। उस विशाल विला में पति की पेंटिंग के साथ जैकलीन अकेली अपना समय गुजारती थी। आखिरकार उसी घुटी जिंदगी से ऊबकर जैकलीन ने 1986 में खुद को गोली मार ली।

लाश उन्हीं तसवीरों के पास मिली, जिसमें पिकासो ने 1953 में जैकलीन से मुलाकात और फिर शादी करने के बाद विभिन्न मुद्राओं में जैकलीन की कई छवियाँ बनाई थीं। दफन के समय मिस्ट्रेसों/बीवियों में अकेली वही थी।

पिकासो के प्राण त्यागने के बाद जैकलीन ने तय किया कि उनके दफन के समय कम-से-कम लोग रहें। स्पेन से आए उनके सगे-संबंधियों को भी पिकासो के कमरे 'नोट्रे डेम-डी-वीए' में जाने से रोक दिया गया। मिगुएल के मुताबिक, जैकलीन ने सिर्फ उन्हें साथ रखा और कहा, 'लाश देखकर मैं काँप उठती हूँ,' जैकलीन ने मिगुएल से यह भी वचन लिया कि 'मेरा साथ कभी न छोड़ना।'

मिगुएल लिखते हैं—'जैकलीन ताबूत के साथ उस कमरे में छह दिन, छह रात अकेले रही। उस समय के कारुणिक दृश्य शब्दों में व्यक्त करना असंभव है।'

पिकासो को उनके कमरे के मुख्य प्रवेश द्वार की सीढ़ी के पास दफनाया गया। जैकलीन ने न तो किसी की संवेदना, शोक संदेश सुना, न मातमपुरसी के

लिए आनेवालों से मिली। दफन के समय मेटिसी, टीनोइर, हेनरी, रन्सो, मीरो जैसे पिकासो के सहकर्मी कलाकार पहुँचे हुए थे।

पिकासो की चित्रकारी देखते-देखते दर्शक एक ऐसे चित्रलोक में पहुँच जाता है, जिसमें से भाँति-भाँति की रंग-रूपक से लबरेज चित्रलेखाएँ उभरती रहती हैं। इनका जन्म ही अमरत्व लिये हुए होता है। स्पेन के युवा कलाकार गालेरिया जोआन गेस्पर फरवरी 2015 में 'भारत कला मेला' के सिलसिले में दिल्ली आए। बातचीत के दौरान उन्होंने बताया कि—'स्पेन और फ्रांस कला जगत् की हवा का रुख आज भी 'पिकासो म्यूजियम' से बदल जाता है।' यही बात पेरिस स्थित 'पिकासो म्यूजियम' के क्यूरेटर लॉरेंस मेडेलीन ने कही थी।

द्रवित मिगुएल ने 1978 में लिखा कि पिकासो हमारे बीच नहीं हैं, यह भरोसा नहीं होता। उनकी संवेदना इन शब्दों में कविता की तरह निकली—

मैं यहाँ पेरिस में हूँ
मुझे तो मूगिन्स छोड़ना ही था
कुछ नहीं कर सकता था
वहाँ रहकर
न जैकलीन के लिए
न तुम्हारे लिए
अब एक ऊँची दीवार है
बहुत ऊँची है वो
रोकती है
करीब आने से
हाथ में टॉर्च लिये औरत के
जिसकी नजर है गार्ड की तरह
चारों तरफ दीवार के पार
यही कारण है
मेरे यहाँ होने का
टेबल पर तुम्हारे कांस्य हाथ के साथ
दीवाल पर तुम्हारे सेरामिक पेंटिंग
जीवंत नजर आती बुल फाइटिंग
उधर लाइब्रेरी-किताबें ही किताबें

बताती हैं मुझसे तुम्हारा नाम
अभी भी देख सकते हो तुम
मेरी स्मृतियों में
हमें कुछ दिन खींच सकती हैं यादें
जबकि ये आधी जिंदगी है ···

(फरवरी 1978)

□□□